ओशो

ध्यान विज्ञान

ध्यान में प्रवेश की 115 सहज विधियां

अ नु क्र म

ध्यान की भूमिका 9
ध्यान : जीवन का सबसे बड़ा आनंद 11
ध्यान की जगह 13
ध्यान की विधि कैसे चुनें 15

सुबह के समय करने वाली ध्यान विधियां
1 सूर्योदय की प्रतीक्षा 20
2 उगते सूरज की प्रशंसा में 20
3 सक्रिय ध्यान 21
4 मंडल 22
5 तकिया पीटना 23
6 कुत्ते की तरह हांफना 23
7 नटराज 24
8 इस क्षण में जीना 25
9 स्टॉप! 25
10 कार्य—ध्यान की तरह 26
11 सृजन में डूब जाएं 27
12 गैर-यांत्रिक होना ही रहस्य है 28
13 साधारण चाय का आनंद 28
14 शांत प्रतीक्षा 29
15 कभी, अचानक ऐसे हो जाएं जैसे नहीं हैं 30
16 'मैं यह नहीं हूं' 30
17 अपने विचार लिखना 31
18 विनोदी चेहरे 31
19 पृथ्वी से संपर्क 32
20 श्वास को शिथिल करो 32
21 'इस व्यक्ति को शांति मिले' 33
22 तनाव विधि 33
23 विपरीत पर विचार 34
24 'अद्वैत' 34
25 'हां' का अनुसरण 35

26 वृक्ष से मैत्री 36
27 'क्या तुम यहां हो?' 37
28 निष्क्रिय ध्यान 37
29 आंधी के बाद की निस्तब्धता 38
30 निश्चल ध्यानयोग 39

दिन के समय करने वाली ध्यान विधियां

31 स्वप्न में सचेतन प्रवेश 44
32 यौन-मुद्राः काम-ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन की एक सरल विधि 51
33 मूलबंधः ब्रह्मचर्य-उपलब्धि की सरलतम विधि 55
34 कल्पना-भोग 58
35 मैत्रीः प्रभु-मंदिर का द्वार 60
36 शांति-सूत्रः नियति की स्वीकृति 63
37 मौन और एकांत में इक्कीस दिवसीय प्रयोग 66
38 प्राण-साधना 71
39 मंत्र-साधना 74
40 अंतर्वाणी साधना 79
41 संयम साधना—1 81
42 संयम साधना—2 84
43 संतुलन ध्यान—1 85
44 संतुलन ध्यान—2 86
45 श्रेष्ठतम क्षण का ध्यान 86
46 'मैं—तू' ध्यान 89
47 इंद्रियों को थका डालें 89

दोपहर के समय करने वाली ध्यान विधियां

48 श्वासः सबसे गहरा मंत्र 94
49 भीतरी आकाश का अंतरिक्ष-यात्री 94
50 आकाश सा विराट एवं अणु सा छोटा 95
51 एक का अनुभव 96
52 आंतरिक मुस्कान 97
53 ओशो 97
54 देखना ही ध्यान है 98
55 शब्दों के बिना देखना 99
56 मौन का रंग 99

57 सिरदर्द को देखना 100
58 ऊर्जा का स्तंभ 101
59 गर्भ की शांति 102

संध्या के समय करने वाली ध्यान विधियां

60 कुंडलिनी 106
61 झूमना 107
62 सामूहिक नृत्य 107
63 वृक्ष के समान नृत्य 108
64 हाथों से नृत्य 108
65 सूक्ष्म पर्तों को जगाना 109
66 गीत गाओ 110
67 गुंजन 110
68 नादब्रह्म 111
69 स्त्री-पुरुष जोड़ों के लिए नादब्रह्म 112
70 कीर्तन 113
71 सामूहिक प्रार्थना 114
72 मुर्दे की भांति हो जाएं 115
73 अग्निशिखा 116

रात के समय करने वाली ध्यान विधियां

74 प्रकाश पर ध्यान 120
75 बुद्धत्व का अवलोकन 120
76 तारे का भीतर प्रवेश 121
77 चंद्र ध्यान 122
78 ब्रह्मांड के भाव में सोने जाएं 122
79 सब काल्पनिक है 123
80 ध्यान के भीतर ध्यान 123
81 पशु हो जाएं 124
82 नकारात्मक हो जाएं 125
83 'हां, हां, हां' 126
84 एक छोटा, तीव्र कंपन 126
85 अपने कवच उतार दो 127
86 जीवन और मृत्यु ध्यान 127
87 बच्चे की दूध की बोतल 128

88 भय में प्रवेश 128
89 अपनी शून्यता में प्रवेश 129
90 गर्भ में वापस लौटना 129
91 आवाजें निकालना 130
92 प्रार्थना 131
93 लातिहान 132
94 गौरीशंकर 133
95 देववाणी 134
96 प्रेम 135
97 झूठे प्रेम खो जाएंगे 136
98 प्रेम को फैलाएं 137
99 प्रेमी-युगल एक-दूसरे में घुलें-मिलें 138
100 प्रेम के प्रति समर्पण 139
101 प्रेम-कृत्य को अपने आप होने दो 139
102 कृत्यों में साक्षी-भाव 140
103 बहना, मिटना, तथाता 141
104 अंधकार, अकेले होने, और मिटने का बोध 147
105 स्वेच्छा से मृत्यु में प्रवेश 153
106 सजग मृत्यु और शरीर से अलग होने की विधि 156
107 मृतवत हो जाना 157
108 जाति-स्मरण के प्रयोग 161
109 अंतर्प्रकाश साधना 167
110 शिवनेत्र 170
111 त्राटक—एकटक देखने की विधि 171
112 त्राटक ध्यान—1 172
113 त्राटक ध्यान—2 173
114 त्राटक ध्यान—3 175
115 रात्रि-ध्यान 177

परिशिष्ट 179
ओशो—एक परिचय 183
एक निमंत्रण 185
ओशो का हिंदी साहित्य 187

ध्यान की भूमिका

650 पुस्तकों में संकलित ओशो के हजारों प्रवचनों में अगर आप जानना चाहें कि उनकी अंतर्धारा क्या है, मूलधारा क्या है, तो उसका एक ही सटीक उत्तर हैः ध्यान। हम ओशो से कुछ भी पूछें, अथवा वे किसी भी विषय पर क्यों न बोलें, ओशो हमें पुनः-पुनः एक ही मूल बिंदु पर ले आते हैंः ध्यान। ध्यान की वे अनेकानेक विधियां समझाते हैं और जिन लोगों ने ओशो की वाणी को सुना है, वे जानते हैं कि ओशो को सुनना अपने-आप में मधुरतम ध्यान है।

अतीत के बुद्धपुरुषों ने श्रवण की बात कही है। भगवान महावीर ने अपने शिष्यों को श्रवण सूत्र दिया और उन्हें श्रावक बनायाः ऐसे साधक जो सीधे श्रवण से ही ध्यान को उपलब्ध हुए। गुरुनानक देव जी ने कहाः सुणिए लागे सहज ध्यानु। सुनने से ही सहज ध्यान घटित हो जाता है। लेकिन हमारे लिए ये सब सूत्र तब तक सिद्धांत मात्र थे जब तक हमने ओशो को नहीं सुना था। जैसे ही ओशो को सुना, उनकी वाणी ने अमृत का द्वार खोल दिया, प्राणों को मुक्त आकाश उपलब्ध हुआ और सहज ही अनुभूति हुईः सुणिए लागे सहज ध्यानु!

इस पुस्तक में संकलित ध्यान की विधियां निश्चित ही सशक्त हैं, सभी प्रकार के साधकों को रूपांतरित करने में सक्षम हैं,

यह हम प्रयोग द्वारा जान सकते हैं। लेकिन मैं निवेदन करूंगा कि अगर आपने अभी तक ओशो की वाणी को नहीं सुना है, तो आप इन विधियों में उतरने के साथ-साथ ओशो के ध्वनि-मुद्रित प्रवचन, कैसेट सुनें और श्रवण का आनंद लें। इन प्रवचनों को सुनने के अतिरिक्त एक और आडियो कैसेट उपलब्ध कर लेना बहुत उपयोगी होगा, उसका नाम है: अनापानसती-योग। इस टेप के माध्यम से ओशो स्वयं आपको ध्यान में ले जाते हैं। इसका प्रयोग रात्रि को सोने के पूर्व और सुबह उठने के बाद आप कर सकते हैं। इससे बड़ी और कोई बात नहीं हो सकती कि आप ओशो को सुनते-सुनते ध्यान में प्रवेश करें, दिन का शुभारंभ करें, और सुनते-सुनते ध्यानमय निद्रा में प्रवेश करें।

ध्यान-विधियों के संबंध में ओशो की एक पुस्तक है, जो वास्तव में प्रमुख पुस्तक है, और जिसका विश्व की अनेक भाषाओं में अनुवाद और प्रकाशन हुआ है, हिंदी में उसका नाम है—ध्यानयोग: प्रथम और अंतिम मुक्ति। कालांतर में ओशो ने ध्यान की विधियों में जो और परिवर्तन-परिष्कार किया, उन सबका संवर्धित रूप उस पुस्तक में समाहित है। निवेदन है कि इस पुस्तक के साथ आप 'ध्यानयोग: प्रथम और अंतिम मुक्ति' को प्राप्त करना न भूलें।

एक और बात का स्मरण रखना है कि ओशो द्वारा समझाई प्रत्येक विधि अपने-आप में पूर्ण है, उसे चौबीस कैरेट शुद्ध रखें, उसमें कहीं कोई मनचाहा हेर-फेर न करें। यह सजगता आवश्यक है। लेकिन इसका यह भी अभिप्राय नहीं है कि आप ध्यान के प्रति बहुत गुरु-गंभीर हो जाएं। तब ध्यान में सजगता के फूल नहीं खिलेंगे, उसे गंभीरता का रोग लग जाएगा। ओशो कहते हैं: हसिबा खेलिबा धरिबा ध्यानम्। ध्यान में उत्फुल्लता बनाए रखें। ध्यान कोई ऐसी बात नहीं है कि हम अपने-आपको दूसरों से अधिक पवित्र तथा ऊंचा समझने लगें। ऐसा समझने में निश्चित ही ध्यान से भटक कर हम अहंकार के पथ पर चल पड़ते हैं। ध्यान हमारा स्वयं का रूपांतरण है, हमारा अपना आनंद है, उसकी सुवास से हमारे आसपास का जीवन स्वतः सुवासित एवं रूपांतरित होने लगता है। इसलिए ध्यान में संलग्न होना कोई मिशनरी होने जैसा नहीं है, यह तो स्वांतः सुखाय है। यह सुख महासुख हो जाता है जब अनेकानेक साधक अपने सुख में सभी को समाहित कर लेते हैं। अहंकार सिकोड़ता है, आनंद जोड़ता है।

ओशो की यह पुस्तक आपको आनंद के विस्मय-लोक में प्रवेश के लिए एक निमंत्रण है।

संपादक

ध्यान : जीवन का सबसे बड़ा आनंद

ध्यान चेतना की विशुद्ध अवस्था है—जहां कोई विचार नहीं होते, कोई विषय नहीं होता। साधारणतया हमारी चेतना विचारों से, विषयों से, कामनाओं से आच्छादित रहती है। जैसे कि कोई दर्पण धूल से ढंका हो। हमारा मन एक सतत प्रवाह है—विचार चल रहे हैं, कामनाएं चल रही हैं, पुरानी स्मृतियां सरक रही हैं—रात-दिन एक अनवरत सिलसिला है। नींद में भी हमारा मन चलता रहता है, स्वप्न चलते रहते हैं। यह अ-ध्यान की अवस्था है। ठीक इससे उलटी अवस्था ध्यान की है। जब कोई विचार नहीं चलते और कोई कामनाएं सिर नहीं उठातीं, सारा ऊहापोह शांत हो जाता है और हम परिपूर्ण मौन में होते हैं—वह परिपूर्ण मौन ध्यान है। और उसी परिपूर्ण मौन में सत्य का साक्षात्कार होता है। जब मन नहीं होता, तब जो होता है वह ध्यान है।

इसलिए मन के माध्यम से कभी ध्यान तक नहीं पहुंचा जा सकता। ध्यान इस बात का बोध है कि मैं मन नहीं हूं। जैसे-जैसे हमारा बोध गहरा होता है, कुछ झलकें मिलनी शुरू होती हैं—मौन की, शांति की—जब सब थम सा जाता है और मन में कुछ भी चलता नहीं। उन मौन, शांत क्षणों में ही हमें स्वयं की सत्ता की अनुभूति होती है और इस अस्तित्व के रहस्य का स्पर्श होता है।

धीरे-धीरे एक दिन आता है, एक बड़े सौभाग्य का दिन आता है, जब ध्यान हमारी सहज अवस्था हो जाता है।

मन असहज अवस्था है। यह हमारी सहज-स्वाभाविक अवस्था कभी नहीं बन सकता। ध्यान हमारी सहज अवस्था है, लेकिन हमने उसे खो दिया है। हम उस स्वर्ग से बाहर आ गए हैं। लेकिन यह स्वर्ग पुनः पाया जा सकता है। किसी बच्चे की आंखों में झांकें—और वहां आपको अदभुत मौन दिखेगा, अदभुत निर्दोषता दिखेगी। हर बच्चा ध्यान को लिए हुए ही पैदा होता है—लेकिन उसे समाज के रंग-ढंग सीखने ही होंगे। उसे विचार करना, तर्क करना, हिसाब-किताब, सब सीखना ही होगा। उसे शब्द, भाषा, व्याकरण सीखना ही होगा। और, धीरे-धीरे वह अपनी निर्दोषता, सरलता से दूर हटता जाएगा। उसकी कोरी स्लेट समाज की लिखावट से गंदी होती जाएगी। वह समाज के ढांचे में एक कुशल यंत्र हो जाएगा—एक जीवंत, सहज मनुष्य नहीं।

बस उस निर्दोष सहजता को पुनः उपलब्ध करने की जरूरत है। उसे हमने पहले जाना है। इसलिए जब हमें ध्यान की पहली झलक मिलती है तो एक बड़ा आश्चर्य होता है कि इसे तो हम जानते हैं! और यह प्रत्यभिज्ञा बिलकुल सही है—हमने इसे पहले जाना है। लेकिन हम भूल गए हैं। हीरा कूड़े-कचरे में दब गया है। लेकिन अगर हम जरा ही खोदें तो हीरा पुनः हाथ आ सकता है—वह हमारा स्वभाव है। उसे हम खो नहीं सकते; उसे हम केवल भूल सकते हैं।

हम ध्यान में ही पैदा होते हैं। फिर हम मन के रंग-ढंग सीख लेते हैं। लेकिन हमारा वास्तविक स्वभाव अंतर्धारा की तरह भीतर गहरे में बना ही रहता है। किसी भी दिन, थोड़ी सी खुदाई, और हम पाएंगे कि वह धारा अभी भी बह रही है, जीवन-स्रोत के झरने ताजा जल अभी भी ला रहे हैं। और उसे पा लेना जीवन का सबसे बड़ा आनंद है।

ध्यान की जगह

अगर ध्यान के लिए एक नियत जगह चुन सकें—एक छोटा सा मंदिर, घर में एक छोटा सा कोना, एक ध्यान-कक्ष—तो सर्वोत्तम है। फिर उस जगह का किसी और काम के लिए उपयोग न करें। क्योंकि हर काम की अपनी तरंगें होती हैं। उस जगह का उपयोग सिर्फ ध्यान के लिए करें, और किसी काम के लिए उसका उपयोग न करें। तो वह जगह चार्ज्ड हो जाएगी और रोज हमारी प्रतीक्षा करेगी। वह जगह बहुत सहयोगी हो जाएगी, वहां एक वातावरण निर्मित हो जाएगा, एक तरंग निर्मित हो जाएगी, जिसमें हम बहुत सरलता से ध्यान में गहरे प्रवेश कर सकते हैं। इसी वजह से मंदिरों, मस्जिदों, चर्चों का निर्माण हुआ था—कोई ऐसी जगह हो जिसका उपयोग सिर्फ ध्यान और प्रार्थना के लिए हो।

अगर ध्यान के लिए एक नियत समय चुन सकें तो वह भी बहुत उपयोगी होगा, क्योंकि हमारा शरीर, हमारा मन एक यंत्र है। अगर हम रोज एक नियत समय पर भोजन करते हैं, तो हमारा शरीर उस समय भोजन की मांग करने लगता है।

कभी आप एक मजेदार प्रयोग कर सकते हैं। अगर आप रोज एक बजे भोजन करते हैं और आप घड़ी देखें और घड़ी में एक बजे हों, तो आपको भूख लग जाएगी—भले ही घड़ी गलत हो और

अभी ग्यारह या बारह ही बजे हों। आप घड़ी देखते हैं, घड़ी में एक बजे हैं, आपको भूख लग जाती है। हमारा शरीर एक यंत्र है।

हमारा मन भी एक यंत्र है। अगर हम एक नियत जगह पर, एक नियत समय पर रोज ध्यान करें, तो हमारे शरीर और मन में ध्यान के लिए भी एक प्रकार की भूख निर्मित हो जाती है। रोज उस समय पर शरीर और मन ध्यान में जाने की मांग करेंगे। यह ध्यान में जाने में सहयोगी होगा। एक भावदशा निर्मित होगी जिसमें हम एक भूख बन जाएंगे, एक प्यास बन जाएंगे।

शुरू-शुरू में यह बहुत सहयोगी होगा, जब तक कि ध्यान हमारे लिए इतना सहज न हो जाए कि हम कहीं भी, किसी भी समय ध्यान में जा सकें। तब तक मन और शरीर की इन यांत्रिक व्यवस्थाओं का उपयोग करना चाहिए।

इनसे एक वातावरण निर्मित होता है: कमरे में अंधेरा हो, अगरबत्ती या धूपबत्ती की खुशबू हो, एक सी लंबाई के व एक प्रकार के कपड़े के वस्त्र पहनें, एक से कालीन या चटाई का उपयोग करें, एक से आसन का उपयोग करें। इससे ध्यान नहीं हो जाता, लेकिन इससे मदद मिलती है। अगर कोई और इसकी नकल करे तो उसे बाधा भी पड़ सकती है। प्रत्येक को अपनी व्यवस्था खोजनी है। व्यवस्था सिर्फ इतना करती है कि एक सुखद स्थिति निर्मित हो। और जब हम सुखद स्थिति में प्रतीक्षा करते हैं तो कुछ घटता है। जैसे नींद उतरती है, ऐसे ही परमात्मा उतरता है। जैसे प्रेम घटता है, ऐसे ही ध्यान घटता है। हम इसे प्रयास से नहीं ला सकते, हम इसे जबरदस्ती नहीं पा सकते।

ध्यान की विधि कैसे चुनें

हमेशा उस विधि से शुरू करें जो रुचिकर लगे। ध्यान को जबरदस्ती थोपना नहीं चाहिए। अगर जबरदस्ती ध्यान को थोपा गया तो शुरुआत ही गलत हो गई। जबरदस्ती की गई कोई भी चीज सहज नहीं हो सकती। अनावश्यक कठिनाई पैदा करने की कोई जरूरत नहीं है। यह बात अच्छे से समझ लेनी है। क्योंकि जिस दिशा में मन की सहज रुचि हो, उस दिशा में ध्यान सरलता से घटता है।

जो लोग शरीर के तल पर ज्यादा संवेदनशील हैं, उनके लिए ऐसी विधियां हैं जो शरीर के माध्यम से ही आत्यंतिक अनुभव पर पहुंचा सकती हैं। जो भाव-प्रवण हैं, भावुक प्रकृति के हैं, वे भक्ति-प्रार्थना के मार्ग पर चल सकते हैं। जो बुद्धि-प्रवण हैं, बुद्धिजीवी हैं, उनके लिए ध्यान, सजगता, साक्षीभाव उपयोगी हो सकते हैं।

लेकिन मेरी ध्यान की विधियां एक प्रकार से अलग हट कर हैं। मैंने ऐसी ध्यान-विधियों की संरचना की है जो तीनों प्रकार के लोगों द्वारा उपयोग में लाई जा सकती हैं। उनमें शरीर का भी पूरा उपयोग है, भाव का भी पूरा उपयोग है और होश का भी पूरा उपयोग है। तीनों का एक साथ उपयोग है और वे अलग-अलग लोगों पर अलग-अलग ढंग से काम करती हैं। शरीर, हृदय,

मन—मेरी सभी ध्यान विधियां इसी शृंखला में काम करती हैं। वे शरीर पर शुरू होती हैं, वे हृदय से गुजरती हैं, वे मन पर पहुंचती हैं और फिर वे मनातीत में अतिक्रमण कर जाती हैं।

स्मरण रहे, जो हमें रुचिकर लगता है उसी में हम गहरे जा सकते हैं—केवल उसी में गहरे जा सकते हैं। रुचिकर लगने का मतलब ही यह है कि उसका हमसे तालमेल है। हमारा छंद उसकी लय से मेल खाता है। विधि के साथ हम एक हार्मनी में हैं। तो जब कोई विधि रुचिकर लगे तो फिर और-और विधियों के लोभ में न पड़ें, फिर उसी विधि में और-और गहरे उतरें। उस विधि को प्रतिदिन, या अगर संभव हो तो दिन में दो बार अवश्य करें। जितना हम इसे करेंगे, उतना आनंद बढ़ता जाएगा। किसी भी विधि को तभी छोड़ें जब आनंद आना बंद हो जाए। उसका मतलब है कि इस विधि का काम पूरा हो गया, अब दूसरी विधि की तलाश की जाए। कोई भी अकेली विधि हमें अंत तक नहीं ले जा सकती। इस यात्रा पर हमें कई बार ट्रेन बदलनी पड़ेगी। हर विधि हमें एक अमुक अवस्था तक पहुंचाएगी। उसके बाद उसका कोई उपयोग नहीं है। उसका काम पूरा हो गया।

तो दो बातें स्मरण रखनी हैं: जब किसी विधि में आनंद आए तो उसमें जितने गहरे जा सकें जाएं। लेकिन उसके आदी न हो जाएं, क्योंकि एक दिन उसके पार भी जाना है। अगर हम उसके बहुत आदी हो जाते हैं तो यह भी एक प्रकार का नशा है, फिर हम उसे छोड़ नहीं सकते। अब इसमें कोई आनंद भी नहीं आता—इससे कुछ मिलता भी नहीं—लेकिन यह एक आदत हो गई। फिर हम चाहें तो इसे करते रह सकते हैं, लेकिन हम गोल-गोल घूमते हैं, यह उसके आगे नहीं ले जा सकती।

तो आनंद मापदंड है। जब तक आनंद आए, जारी रखें। आनंद का कण भी पीछे न छूट जाए। उसका पूरा रस निचोड़ लें, एक बूंद भी बाकी न बचे। और फिर उसे छोड़ने की भी तैयारी रखें। फिर कोई दूसरी विधि चुन लें जिसमें फिर आनंद आता हो। हो सकता है हमें कई बार विधि बदलनी पड़े। यह अलग-अलग लोगों के लिए अलग-अलग होगा, लेकिन ऐसी बहुत कम संभावना है कि एक विधि से पूरी यात्रा हो जाए।

लेकिन बहुत सी विधियां एक साथ करने की भी जरूरत नहीं है, क्योंकि हम उलझन में पड़ सकते हैं, विपरीत प्रक्रियाएं एक साथ कर सकते हैं, और तब तकलीफ होगी, दर्द होगा।

तो कोई भी दो ध्यान की विधियां चुन लें और फिर उन्हें सतत करें। असल में, मैं तो चाहूंगा कि कोई एक ध्यान ही चुनें, यह सबसे अच्छा होगा। जो ध्यान हमें भाए, उसे दिन में कई बार करना ज्यादा बेहतर है। इससे उसमें गहराई आती है।

अगर हम कई ध्यान एक साथ करते हैं—एक दिन एक, दूसरे दिन दूसरा। और हम अपने ही ध्यान भी गढ़ लेते हैं—तो ऊहापोह बढ़ेगा। विज्ञान भैरव तंत्र में ध्यान की एक सौ बारह विधियां हैं। हम पागल हो जा सकते हैं। हम वैसे ही पागल हैं!

ध्यान की ये विधियां कोई मनोरंजन नहीं हैं। ये कभी-कभी खतरनाक भी हो सकती हैं। हम मन के सूक्ष्म, अति सूक्ष्म यंत्र के साथ खेल रहे हैं। कभी एक छोटी सी चीज, जिसका हमें होश भी नहीं कि हम क्या कर रहे हैं, खतरनाक सिद्ध हो सकती है। इसलिए इन विधियों में कोई हेर-फेर न करें और अलग-अलग विधियों को मिला कर अपनी ही कोई खिचड़ी विधि न ईजाद करें। कोई भी दो विधियां चुन लें और कुछ सप्ताह उनका प्रयोग करके देखें।

सुबह के समय करने वाली ध्यान विधियां

1
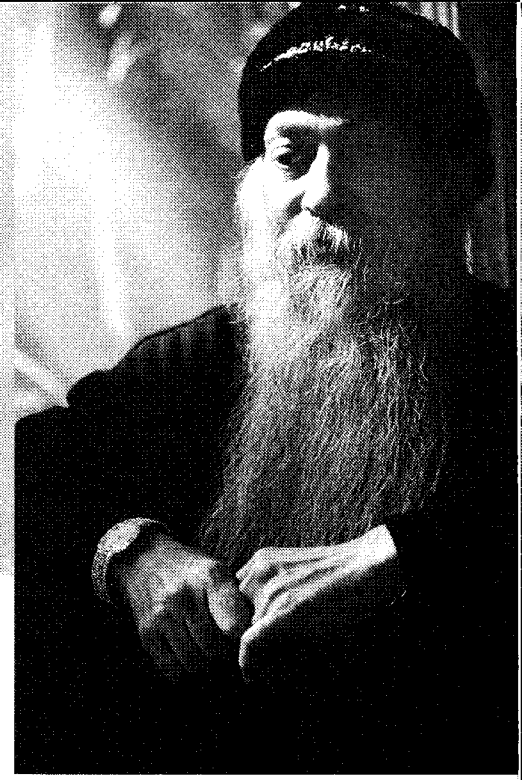
सूर्योदय की प्रतीक्षा

सूर्योदय से बस पंद्रह मिनट पहले, जब आकाश में हलका सा प्रकाश फैलने लगे तब सिर्फ देखें और प्रतीक्षा करें। जैसे कि कोई अपने प्रियतम की प्रतीक्षा करता है—व्यग्रता से, गहरी प्रतीक्षा में, आशा से भरे हुए और उत्तेजित—लेकिन फिर भी शांत। और बस सूरज को उगने दें और देखते रहें। अपलक देखने की कोई जरूरत नहीं, आप अपनी पलकें झपका सकते हैं। बस सूरज को उगता देखते रहें और ऐसा भाव करें कि साथ ही साथ कोई चीज भीतर भी उग रही है। जब सूरज क्षितिज पर आए, तब भाव करें कि वह प्रकाश-बिंदु नाभि के पास ही है। वहां सूरज क्षितिज पर ऊपर आ रहा है और यहां, नाभि के भीतर, वह ऊपर आ रहा है, धीरे-धीरे ऊपर आ रहा है। वहां सूर्योदय हो रहा है और यहां प्रकाश का एक अंतर्बिंदु उदय हो रहा है। बस दस मिनट काफी है। फिर अपनी आंखें बंद कर लें। जब पहले आप सूरज को खुली आंखों से देखते हैं तो उसका एक प्रतिचित्र, 'निगेटिव' बनता है, इसलिए जब आप अपनी आंखें बंद कर लेते हैं, तो आप सूरज को भीतर जगमगाते हुए देख सकते हैं।

और यह आपको बहुत ही आश्चर्यजनक रूप से बदल जाएगा।

2

उगते सूरज की प्रशंसा में

सूर्योदय से पहले पांच बजे उठ जाएं और आधे घंटे तक बस गाएं, गुनगुनाएं, आहें भरें, कराहें। इन आवाजों का कोई अर्थ होना जरूरी नहीं—ये अस्तित्वगत होनी चाहिए, अर्थपूर्ण नहीं। इनका आनंद लें, इतना काफी है—यही इनका अर्थ है। आनंद से झूमें। इसे उगते हुए सूरज की स्तुति बनने दें और तभी रुकें जब सूरज उदय हो जाए।

इससे दिन भर भीतर एक लय बनी रहेगी। सुबह से ही आप एक लयबद्धता अनुभव करेंगे और आप देखेंगे कि पूरे दिन का गुणधर्म ही बदल गया है—आप ज्यादा प्रेमपूर्ण, ज्यादा करुणापूर्ण, ज्यादा जिम्मेवार, ज्यादा मैत्रीपूर्ण हो गए हैं; और आप अब कम हिंसक, कम क्रोधी, कम महत्वाकांक्षी, कम अहंकारी हो गए हैं।

3
सक्रिय ध्यान

प्रथम चरण : दस मिनट

नाक से तेजी से श्वास भीतर लें और बाहर छोड़ें। श्वास भीतर लेने और बाहर छोड़ने—दोनों पर जोर लगाएं और उन्हें अराजक बना रहने दें। श्वास फेफड़ों में गहराई से जाए। श्वास लेने और छोड़ने में तेजी लाएं, लेकिन निश्चित रहे कि श्वास गहरी बनी रहे। इसे यथाशक्ति अपनी अधिकतम समग्रता से करें—बिना अपने शरीर को तनावपूर्ण बनाए। और पक्का कर लें कि कंधे और गर्दन शिथिल अवस्था में हैं। श्वास जारी रखें जब तक कि आप श्वास ही श्वास न हो जाएं; श्वास को अराजक और अस्तव्यस्त बना रहने दें। अर्थात् श्वास न लयबद्ध हो और न ही किसी पूर्वनिर्धारित नियम पर आधारित हो। एक बार ऊर्जा जाग जाए, फिर वह शरीर को भी गति देने लगेगी। इन शारीरिक गतियों को होने दें; इन्हें और अधिक ऊर्जा निर्मित करने में सहायक होने दें। अपने हाथों और शरीर को सहज रूप से गति करने दें ताकि वे ऊर्जा के उठने में सहयोगी बन सकें। ऊर्जा को उठता हुआ अनुभव करें। पहले चरण में अपने को जरा भी ढीला मत छोड़ें और श्वास को जरा भी धीमा मत होने दें।

दूसरा चरण : दस मिनट

अपने शरीर को पूरी तरह छोड़ दें। अपने शरीर को स्वतंत्रता दें कि वह जो कुछ करना चाहे, कर सके...विस्फोट हो जाने दें...अपने शरीर को आविष्ट हो जाने दें। जो कुछ भी भीतर से बाहर आए, उसे रोकें नहीं। पूरी तरह से पागल हो जाएं...गाएं, चीखें, हंसें, चिल्लाएं, रोएं, कूदें, कंपें, नाचें, हाथ-पैर चलाएं और शरीर को सब दिशाओं में गति करने दें। शुरू में थोड़ा सा अभिनय प्रक्रियाओं को गति देने में सहायक होता है। जो भी हो रहा है उसमें अपने मन को दखल न डालने दें। स्मरण रखें कि आप अपने शरीर के साथ समग्रता से सहयोग कर रहे हैं।

तीसरा चरण : दस मिनट

कंधे और गर्दन को ढीला रखते हुए अपने दोनों हाथ पूरी तरह से ऊपर उठाएं, कोहनियां शिथिल रहें, दोनों हाथ ऊपर उठाए हुए हू!...हू!...हू! मंत्र का जोरों से उच्चार करते हुए ऊपर उछलें, नीचे आएं। 'हू' का उच्चार अधिकतम गहरा हो और वह आपकी नाभि से उठे। हर बार जब आप नीचे आएं तब पैर के तलवे और एड़ी को धीमे से जमीन को छूने दें और उसी समय 'हू' की तीव्र ध्वनि से काम-केंद्र पर गहराई से चोट करें। इस चरण में अपनी पूरी शक्ति लगाएं; थोड़ी भी शक्ति पीछे शेष न बचाएं।

चौथा चरण : पंद्रह मिनट

रुक जाएं। जहां भी हैं, जैसे भी हैं, बिलकुल जम जाएं। शरीर को जरा भी व्यवस्थित न करें। जरा

सी खांसी, कोई भी गति, कोई भी हलन-चलन ऊर्जा को क्षीण करेगी और अब तक की मेहनत को खराब करेगी। जो भी हो रहा है, उसके साक्षी बने रहें।

पांचवां चरण : पंद्रह मिनट

उत्सव मनाएं। संगीत और नृत्य के साथ अपने अंतस के अहोभाव को अभिव्यक्त करें। फलित हुई जीवंतता को दिन भर की अपनी चर्या में फैलने दें।

4

मंडल

यह एक अन्य शक्तिशाली विधि है जो ऊर्जा का एक वर्तुल निर्मित कर देती है जिससे स्वाभाविक रूप से केंद्र में प्रवेश घट जाता है। इसमें पंद्रह-पंद्रह मिनट के चार चरण हैं।

पहला चरण : पंद्रह मिनट

आंखें खुली रखें और एक ही स्थान पर खड़े-खड़े दौड़ें। धीरे-धीरे शुरू करके तीव्र से तीव्र होते जाएं। जहां तक बन सके घुटनों को ऊपर उठाएं। श्वास को गहरा और सम रखने से ऊर्जा भीतर घूमने लगेगी। मन को भूल जाएं और शरीर को भूल जाएं। बस एक ही जगह पर दौड़ते रहें।

दूसरा चरण : पंद्रह मिनट

आंखें बंद करके बैठ जाएं। मुंह को शिथिल और खुला रखें। कमर से ऊपर के शरीर को धीरे-धीरे चक्राकार घुमाएं—जैसे हवा में पेड़-पौधे झूमते हैं। अनुभव करें कि हवा आपको इधर-उधर, आगे-पीछे और चारों ओर घुमा रही है। इससे भीतर जागी ऊर्जा नाभि-केंद्र पर आ जाएगी।

तीसरा चरण : पंद्रह मिनट

अब आंखें खोल कर, सिर को स्थिर रखते हुए पीठ के बल लेट जाएं, और दोनों आंखों की पुतलियों को बाएं से दाएं घड़ी के कांटे की तरह वृत्ताकार घुमाएं। आंखों को इस तरह घुमाएं, जैसे कि वे एक बड़ी घड़ी की सुई का अनुसरण कर रही हों, परंतु गति को जितना हो सके तेज रखें। यह महत्वपूर्ण है। मुंह खुला रहे और जबड़े शिथिल रहें। श्वास धीमी एवं सम बनी रहे। इससे आपकी केंद्रित ऊर्जा तीसरी आंख पर आ जाएगी।

चौथा चरण : पंद्रह मिनट

आंखें बंद कर लें और शांत लेटे रहें।

5
तकिया पीटना

जब भी आपको क्रोध आए तो किसी पर क्रोधित होने की कोई जरूरत नहीं, सिर्फ क्रोधित हो जाएं। इसे एक ध्यान बना लें। कमरा बंद कर लें, अकेले बैठ जाएं और जितना क्रोध मन में आए, आने दें। यदि मारने-पीटने का भाव आए तो एक तकिया ले लें और तकिए को मारें-पीटें। जो करना हो, तकिए के साथ करें, वह कभी मना नहीं करेगा। यदि तकिए को मार डालना चाहें तो एक चाकू लें और तकिए को मार डालें!

यह सब मदद करता है, बहुत गहरी मदद करता है। कोई कल्पना भी नहीं कर सकता कि एक तकिया इतना सहायक हो सकता है। तकिए को पीटें, काटें, फेंकें। यदि किसी व्यक्ति विशेष के प्रति मन में कोई दुर्भाव हो तो उस व्यक्ति का नाम तकिए पर लिख लें या उसका चित्र तकिए पर चिपका लें।

यह बात बड़ी बेतुकी, मूर्खतापूर्ण लगेगी, लेकिन क्रोध ही बेतुका है, उसके लिए कुछ किया नहीं जा सकता। तो क्रोध को होने दें और ऊर्जा की एक घटना के रूप में उसका आनंद लें। वह ऊर्जा का ही एक रूप है। यदि हम किसी को पीड़ा नहीं दे रहे तो इसमें कुछ बुराई नहीं है। थोड़े दिन इस विधि का प्रयोग करेंगे तो आप पाएंगे कि किसी को पीड़ा देने का भाव धीरे-धीरे विलीन हो गया है।

इसे रोज का एक ध्यान बना लें—रोज सुबह केवल बीस मिनट इसे करें। और फिर पूरे दिन आप देखेंगे कि आप शांत होने लगे, क्योंकि जो ऊर्जा क्रोध बन रही थी, वह बाहर फेंक दी गई। इसे कम से कम दो सप्ताह तक करें। और एक सप्ताह बाद ही आप यह देख कर हैरान होंगे कि किसी भी परिस्थिति में क्रोध नहीं आ रहा है। बस एक बार इसका प्रयोग करके देखें।

6
कुत्ते की तरह हांफना

क्रोध पर सीधा काम करना कठिन है, क्योंकि हो सकता है कि क्रोध गहरा दबा हो। इसलिए परोक्ष रूप से काम करें। क्रोध और भय को विसर्जित करने में दौड़ना काफी मददगार होगा। जब हम काफी देर तक दौड़ते हैं और गहरी श्वास लेते हैं तो मन काम करना बंद कर देता है और शरीर नियंत्रण करने लगता है।

और एक छोटा सा प्रयोग काफी मददगार होगा। जब भी किसी को लगे कि वह नाभि से नीचे नहीं जा पाता है, ऊपर-ऊपर ही रह जाता है, उथला ही रह जाता है, तो वह इस प्रयोग को कर सकता है। वह एक कुत्ते की तरह चले और हांफे। जीभ को बाहर निकाल कर नीचे लटका ले और चारों ओर एक कुत्ते की तरह हांफते हुए दौड़े। इससे पूरा मार्ग खुल जाएगा। जब भी किसी को वहां कोई अवरोध महसूस हो तो हांफना बहुत मदद कर सकता है। यदि कोई आधा घंटा भी इस तरह से हांफ ले तो उसका क्रोध सरलता से बहने लगेगा। उसका पूरा शरीर इसमें सहयोगी हो जाएगा।

तो कभी-कभी आप अपने कमरे में भी इस प्रयोग को कर सकते हैं। एक दर्पण को सामने रख लें और उस पर भौंकें और गुर्राएं। तीन सप्ताह के भीतर ही आप महसूस करेंगे कि चीजों में गहराई आने लगी। एक बार क्रोध की निर्जरा हो जाए, क्रोध विलीन हो जाए, तो आप बहुत हलका महसूस करेंगे।

7

नटराज

नटराज-नृत्य एक संपूर्ण ध्यान है। यह पैंसठ मिनट का है और इसके तीन चरण हैं।

पहला चरण : चालीस मिनट

आंखें बंद करके इस प्रकार नाचें जैसे आविष्ट हो गए हों। नृत्य को अपने ऊपर छा जाने दें। नृत्य ही नृत्य रह जाए। शरीर जैसे भी नृत्य करे, उसे करने दें। न तो उसे नियंत्रित करें, और न ही जो हो रहा है उसके साक्षी बनें। बस नृत्य में पूरी तरह डूब जाएं।

दूसरा चरण : बीस मिनट

आंखें बंद रखे हुए ही लेट जाएं। शांत और निश्चल रहें।

तीसरा चरण : पांच मिनट

उत्सव भाव से नाचें, आनंदित हों और अहोभाव व्यक्त करें।

8

इस क्षण में जीना

जैसे-जैसे हम ध्यान में गहरे उतरते हैं, समय विलीन हो जाता है। जब ध्यान अपनी परिपूर्णता में खिलता है, समय खोजने पर भी नहीं मिलता। यह युगपत होता है—जब मन खो जाता है, समय भी खो जाता है। इसलिए सदियों से रहस्यवादी संत कहते आए हैं कि मन और समय एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। मन समय के बिना नहीं हो सकता और समय मन के बिना नहीं हो सकता। मन के बने रहने के लिए समय एक उपाय है।

इसलिए सभी बुद्धपुरुषों ने जोर दिया है : 'इस क्षण में जीओ।'

इस क्षण में जीना ही ध्यान है; अभी और यहीं होना ही ध्यान है। जो केवल अभी और यहां इस क्षण में मेरे साथ हैं, वे ध्यान में हैं। यह ध्यान है—दूर से आती कोयल की पुकार और हवाई जहाज का गुजरना, कौओं और पक्षियों की आवाज—और सब शांत है और मन में कोई हलन-चलन नहीं है। न आप अतीत के बारे में सोच रहे हैं, न भविष्य के बारे में सोच रहे हैं। समय रुक गया है। संसार रुक गया है।

संसार का रुक जाना ही ध्यान की पूरी कला है। और इस क्षण में जीना ही शाश्वतता में जीना है। बिना किसी धारणा के, बिना किसी मन के इस क्षण का स्वाद लेना ही अमरत्व का स्वाद लेना है।

9

स्टॉप!

एक साधारण सी विधि को दिन में कम से कम छह बार करना शुरू करें। एक बार इसे करने में केवल आधा मिनट लगता है, तो पूरे दिन में तीन मिनट लगेंगे। यह दुनिया का सबसे छोटा ध्यान है! लेकिन इसे अचानक ही करना है—यही इसका राज है।

सड़क पर चले जा रहे हैं—अचानक जैसे ही याद आए—रुक जाएं, पूरी तरह रुक जाएं। कोई गति न हो। आधे मिनट के लिए बस मौजूद हो जाएं। जहां भी हों, जैसे भी हों, बिलकुल ठहर जाएं और जो भी हो रहा हो, उसके प्रति सजग हो जाएं। उसके बाद फिर चलना शुरू कर दें। दिन में छह बार ऐसा करें। ज्यादा बार करना चाहें तो कर सकते हैं, लेकिन कम नहीं।

इससे बहुत सजगता बढ़ेगी। लेकिन इसे अचानक ही करना है। यदि हम अचानक बस मौजूद हो जाएं, तो पूरी ऊर्जा बदल जाती है। मन में जो चहल-पहल चल रही थी, वह रुक जाती है। और यह इतना आकस्मिक होता है कि मन इतनी जल्दी कोई नया विचार नहीं बना पाता। मन समय लेता है, मन मूर्ख है।

तो कहीं भी, जिस क्षण याद आ जाए, अपने को एक झटका दें और ठहर जाएं। केवल आपकी ही सजगता नहीं बढ़ेगी, जल्दी ही आप महसूस करेंगे कि दूसरे भी आपकी ऊर्जा के प्रति सजग हो गए हैं—कि कुछ घटा है, कुछ अज्ञात से आपमें प्रवेश करने लगा है।

10

कार्य—ध्यान की तरह

जब भी आपको लगे कि आपका मूड अच्छा नहीं है और काम करना अच्छा नहीं लग रहा है, तो काम शुरू करने से पहले पांच मिनट के लिए गहरी श्वास बाहर फेंकें। भाव करें कि श्वास के साथ खराब मूड भी बाहर फेंक रहे हैं। और आप हैरान हो जाएंगे कि पांच मिनट में अनायास ही आप फिर से सहज हो गए और खराब मूड चला गया, काले बादल छंट गए।

यदि हम अपने कार्य को ही ध्यान बना सकें तो सबसे अच्छी बात है। तब ध्यान हमारे जीवन में कभी द्वंद्व नहीं खड़ा करेगा। जो भी हम करें, ध्यानपूर्वक करें। ध्यान कुछ अलग नहीं है, वह जीवन का ही एक हिस्सा है। वह श्वास की तरह है—जैसे श्वास आती-जाती है, वैसे ही ध्यान भी रहता है।

और केवल थोड़ी सी सजगता की बात है—ज्यादा कुछ करने की जरूरत नहीं है। जो चीजें आप असावधानी से कर रहे थे, उन्हें सावधानी से करना शुरू करें। जो चीजें आप किसी आकांक्षा से कर रहे थे, उदाहरण के लिए, पैसा...। वह ठीक है, लेकिन आप उसमें कुछ जोड़ सकते हैं। पैसा ठीक है और अगर आपके काम से पैसा आता है तो अच्छा है; सबको पैसे की जरूरत है। लेकिन वही सब कुछ नहीं है। और साथ ही साथ यदि और भी आनंद मिलते हों, तो उन्हें क्यों चूकना? वे मुफ्त ही मिल रहे हैं।

हम कुछ न कुछ काम तो करेंगे ही, चाहे उसे प्रेम से करें या बिना प्रेम के करें। तो अपने काम में सिर्फ प्रेम जोड़ देने से हमें और बहुत कुछ मिल सकता है, जिन्हें हम वैसे चूक ही जाते।

11

सृजन में डूब जाएं

ओशो द्वारा किसी चित्रकार के प्रश्न के उत्तर में दिए गए इस तरीके से, किसी भी सृजनात्मक कार्य में लगा व्यक्ति, अपनी आजीविका को ध्यान में बदल ले सकता है।

कला एक ध्यान है। कोई भी कार्य ध्यान बन सकता है, यदि हम उसमें डूब जाएं। तो एक तकनीशियन मात्र मत बने रहें। यदि आप केवल एक तकनीशियन हैं तो पेंटिंग कभी ध्यान नहीं बन पाएगी। हमें पेंटिंग में पूरी तरह डूबना होगा, पागल की तरह उसमें खो जाना पड़ेगा। इतना खो जाना पड़ेगा कि हमें यह भी खबर न रह जाए कि हम कहां जा रहे हैं, कि हम क्या कर रहे हैं, कि हम कौन हैं!

यह पूरी तरह खो जाने की स्थिति ही ध्यान होगी। इसे घटने दें। चित्र हम न बनाएं, बल्कि बनने दें। और मेरा मतलब यह नहीं है कि हम आलसी हो जाएं। नहीं, फिर तो वह कभी नहीं बनेगा। यह हम पर उतरना चाहिए, हमें पूरी तरह से सक्रिय होना है और फिर भी कर्ता नहीं बनना है। यही पूरी कीमिया है, यही पूरी कला है—हमें सक्रिय होना है, लेकिन फिर भी कर्ता नहीं बनना है।

कैनवस के पास जाएं। कुछ मिनटों के लिए ध्यान में उतर जाएं, कैनवस के सामने शांत होकर बैठ जाएं। यह 'सहज लेखन' जैसा होना चाहिए, जिसमें हम पेन अपने हाथ में लेकर शांत बैठ जाते हैं और अचानक हाथ में एक स्पंदन सा महसूस होता है। हमने कुछ किया नहीं, हम भलीभांति जानते हैं कि हमने कुछ किया नहीं। हम तो सिर्फ शांत-मौन प्रतीक्षा कर रहे थे। एक स्पंदन सा होता है और हाथ चलने लगता है, कुछ उतरने लगता है।

उसी तरह से हमें पेंटिंग शुरू करनी चाहिए। कुछ मिनटों के लिए ध्यान में डूब जाएं, सिर्फ उपलब्ध रहें—कि जो भी होगा, हम उसे होने देंगे। हम अपनी सारी प्रतिभा, सारी कुशलता का उपयोग, जो भी होगा, उसे होने देने में करेंगे।

इस भाव-दशा के साथ ब्रश उठाएं और शुरू करें। आहिस्ता शुरू करें, ताकि आप बीच में न आएं। बहुत आहिस्ता शुरू करें। जो भी भीतर से बहे, बहने दें, और उसमें लीन हो जाएं। शेष सब भूल जाएं। कला सिर्फ कला के लिए ही हो, तभी वह ध्यान है। उसका कोई और लक्ष्य नहीं होना चाहिए। और मैं यह नहीं कह रहा हूं कि हम अपनी पेंटिंग बेचें नहीं या उसका प्रदर्शन न करें—वह बिलकुल ठीक है। पर वह बाइ-प्रॉडक्ट है। वह उसका उद्देश्य नहीं है। भोजन की जरूरत है, तो पेंटिंग बेचनी भी पड़ती है। हालांकि बेचने में पीड़ा होती है; यह अपना बच्चा बेचने जैसा ही है। मगर जरूरत है तो ठीक है। दुख भी होता है, लेकिन वह उद्देश्य नहीं था; बेचने के लिए चित्र नहीं बनाया गया था। वह बिक गया—यह बिलकुल दूसरी बात है—लेकिन बनाते समय कोई उद्देश्य नहीं है। नहीं तो हम एक तकनीशियन ही रह जाएंगे।

हमें तो मिट जाना चाहिए। हमें मौजूद रहने की जरूरत नहीं है। हमें तो अपनी पेंटिंग में, अपने नृत्य में, श्वास में, गीत में पूरी तरह खो जाना चाहिए। जो भी हम कर रहे हों, उसमें बिना किसी नियंत्रण के हमें पूरी तरह खो जाना चाहिए।

12

गैर-यांत्रिक होना ही रहस्य है

अगर हम अपनी क्रियाओं को गैर-यांत्रिक ढंग से कर सकें तो हमारी पूरी जिंदगी ही एक ध्यान बन जाएगी। तब कोई भी छोटा सा कृत्य—स्नान करना, भोजन करना, अपने मित्र से बातचीत करना—ध्यान बन जाएगा। ध्यान एक गुणवत्ता है, जो किसी भी चीज के साथ जोड़ी जा सकती है। यह कोई अलग से किया गया काम नहीं है। लोग ऐसा ही सोचते हैं। वे सोचते हैं कि ध्यान भी एक कृत्य है—जब हम पूर्व दिशा में मुंह करके बैठते हैं, किसी मंत्र का जाप करते हैं, धूप-अगरबत्ती जलाते हैं; किसी विशेष समय पर, किसी विशेष मुद्रा में, किसी विशेष ढंग से कुछ-कुछ करते हैं।

ध्यान का इन सब बातों से कोई संबंध नहीं है। ये सब ध्यान को यांत्रिक बनाने के तरीके हैं और ध्यान यांत्रिकता के विरोध में है।

तो अगर हम होश को सम्हाले रखें तो कोई भी कार्य ध्यान है, कोई भी क्रिया हमें बहुत सहयोग देगी।

13

साधारण चाय का आनंद

क्षण-क्षण जीएं। तीन सप्ताह के लिए कोशिश करें कि जो भी आप कर रहे हैं, उसे जितनी समग्रता से कर सकें, करें; उसे प्रेम से करें और उसका आनंद लें। हो सकता है यह मूर्खतापूर्ण लगे। यदि आप चाय पी रहे हैं, तो उसमें इतना आनंद लेना मूर्खतापूर्ण लगता है—कि यह तो साधारण सी चाय है।

लेकिन साधारण सी चाय भी असाधारण रूप से सौंदर्यपूर्ण हो सकती है—यदि हम उसका आनंद ले सकें तो वह एक गहन अनुभूति बन सकती है। गहन समादर से उसका आनंद लें। उसे एक ध्यान बना लें—चाय बनाना...केतली की आवाज सुनना, फिर चाय उंडेलना...उसकी सुगंध लेना; चाय का स्वाद लेना और ताजगी अनुभव करना।

मुर्दे चाय नहीं पी सकते। केवल अति-जीवंत व्यक्ति ही चाय पी सकते हैं। इस क्षण हम जीवित हैं! इस क्षण हम चाय का आनंद ले रहे हैं। धन्यवाद से भर जाएं! और भविष्य की मत सोचें; अगला क्षण अपनी फिक्र खुद कर लेगा। कल की चिंता न लें—तीन सप्ताह के लिए वर्तमान में जीएं।

14

शांत प्रतीक्षा

कई बार ऐसा होता है कि ध्यान पास ही होता है, पर हम दूसरी चीजों में व्यस्त होते हैं। वह सूक्ष्म आवाज हमारे भीतर ही है, लेकिन हम निरंतर शोर से, व्यस्तताओं से, जिम्मेवारियों से, कोलाहल से भरे हुए हैं। और ध्यान आता है एक फुसफुसाहट की तरह, वह नारे लगाते हुए नहीं आता, वह बहुत ही चुपचाप आता है। वह कोई शोरगुल नहीं करता। उसके कदमों की आहट भी सुनाई नहीं पड़ती। यदि हम व्यस्त हैं, तो वह प्रतीक्षा करता है और लौट जाता है।

तो एक बात तय कर लें, कि कम से कम एक घंटा रोज बस शांत बैठें और उसकी प्रतीक्षा करें। कुछ मत करें, बस आंखें बंद करके शांत बैठ जाएं—गहन प्रतीक्षा में, एक प्रतीक्षारत हृदय के साथ, एक खुले हृदय के साथ। सिर्फ प्रतीक्षा करें कि यदि कुछ घटे तो हम उसका स्वागत करने के लिए तैयार हों। यदि कुछ न घटे तो निराश न हों। कुछ न घटे तो भी एक घंटा बैठना अपने आप में विश्रामदायी है। वह हमें शांत करता है, स्वस्थ करता है, तरोताजा करता है और हमें हमारी जड़ों से जोड़ता है।

लेकिन धीरे-धीरे झलकें मिलने लगती हैं और एक तालमेल बैठने लगता है कि हम किसी विशेष स्थिति में, विशेष कमरे में, विशेष समय पर प्रतीक्षा करते हैं। तो झलकें ज्यादा-ज्यादा आती हैं। वे कहीं बाहर से नहीं आती हैं, वे तुम्हारे अंतर्तम केंद्र से आती हैं। लेकिन जब अंतर्चेतना जानती है कि बाह्य चेतना उसके लिए प्रतीक्षारत है तो मिलन की संभावना बढ़ जाती है।

किसी वृक्ष के नीचे बस बैठ जाएं। हवा चल रही है और वृक्ष के पत्तों में सरसराहट हो रही है। हवा आपको छू रही है, आपके आसपास से बह रही है, आपको छूकर गुजर रही है। लेकिन हवा को सिर्फ अपने आसपास से ही मत गुजर जाने दें, उसे अपने भीतर से होकर भी गुजरने दें, अपने भीतर से बहने दें। अपनी आंखें बंद कर लें और महसूस करें कि जैसे हवा वृक्षों से होकर गुजरती है और पत्तों की सरसराहट होती है वैसे ही आप भी एक वृक्ष की भांति हैं, खुले, और हवा आपसे होकर बह रही है—आसपास से नहीं बल्कि सीधे आपसे होकर बह रही है।

15

कभी, अचानक ऐसे हो जाएं जैसे नहीं हैं

किसी वृक्ष के नीचे बैठे हुए, अतीत और भविष्य के बारे में न सोचते हुए, सिर्फ अभी और यहीं होते हुए, आप कहां हैं? 'मैं' कहां है? आप इस 'मैं' को अनुभव नहीं कर सकते, वह इस क्षण में नहीं है। अहंकार कभी वर्तमान में नहीं पाया जाता। अतीत अब नहीं है, भविष्य अभी आने को है; दोनों नहीं हैं। अतीत जा चुका, भविष्य अभी आया नहीं—केवल वर्तमान ही है। और वर्तमान में कभी भी अहंकार जैसी कोई चीज नहीं मिलती।

तिब्बत के कुछ मठों में बहुत ही प्राचीन ध्यान-विधियों में से एक विधि अभी भी प्रयोग की जाती है। यह ध्यान-विधि इसी सत्य पर आधारित है जो मैं आपसे कह रहा हूं। वे सिखाते हैं कि कभी-कभी आप अचानक गायब हो सकते हैं। बगीचे में बैठे हुए बस भाव करें कि आप गायब हो रहे हैं। बस देखें कि जब आप दुनिया से विदा हो जाते हैं, जब आप यहां मौजूद नहीं रहते, जब आप एकदम मिट जाते हैं, तो दुनिया कैसी लगती है। बस एक सेकेंड के लिए न होने का प्रयोग करके देखें।

अपने ही घर में ऐसे हो जाएं जैसे कि नहीं हैं। यह बहुत ही सुंदर ध्यान है। चौबीस घंटे में आप इसे कई बार कर सकते हैं—सिर्फ आधा सेकेंड भी काफी है। आधे सेकेंड के लिए एकदम खो जाएं—आप नहीं हैं और दुनिया चल रही है। जैसे-जैसे हम इस तथ्य के प्रति और-और सजग होते हैं कि हमारे बिना भी दुनिया बड़े मजे से चलती है, तो हम अपने अस्तित्व के एक और आयाम के प्रति सजग होते हैं जो लंबे समय से, जन्मों-जन्मों से उपेक्षित रहा है। और वह आयाम है स्वीकार भाव का। हम चीजों को सहज होने देते हैं, एक द्वार बन जाते हैं। चीजें हमारे बिना भी होती रहती हैं।

16

'मैं यह नहीं हूं'

मन कचरा है! ऐसा नहीं है कि आपके पास कचरा है और दूसरे के पास नहीं है। मन ही कचरा है। और अगर आप कचरा बाहर भी फेंकते रहें, तो जितना चाहे फेंकते रह सकते हैं, लेकिन यह कभी खतम होने वाला नहीं है। यह खुद ही बढ़ने वाला कचरा है। यह मुर्दा नहीं है, यह सक्रिय है। यह बढ़ता रहता है और इसका अपना जीवन है, तो अगर हम इसे काटें तो इसमें नई पत्तियां अंकुरित होने लगती हैं।

तो इसे बाहर निकालने का यह मतलब नहीं है कि हम खाली हो जाएंगे। इससे केवल इतना बोध होगा कि यह मन, जिसे हमने अपना होना समझ रखा था, जिससे हमने अब तक तादात्म्य बना रखा था, यह हम नहीं हैं। इस कचरे को बाहर निकालने से हम पृथकता के प्रति सजग होंगे, एक खाई के प्रति, जो हमारे और इसके बीच है। कचरा रहेगा, लेकिन उसके साथ हमारा तादात्म्य नहीं रहेगा, बस। हम अलग हो जाएंगे, हम जानेंगे कि हम अलग हैं।

तो हमें सिर्फ एक चीज करनी है—न तो कचरे से लड़ने की कोशिश करें और न उसे बदलने की कोशिश करें—सिर्फ देखें! और एक बात स्मरण रखें : 'मैं यह नहीं हूं।' इसे मंत्र बना लें : 'मैं यह नहीं हूं।' इसका स्मरण रखें और सजग रहें और देखें कि क्या होता है।

तत्क्षण एक बदलाहट होती है। कचरा अपनी जगह रहेगा, लेकिन अब वह हमारा हिस्सा नहीं रह जाता। यह स्मरण ही उसका छूटना हो जाता है।

17

अपने विचार लिखना

किसी दिन इस छोटे से प्रयोग को करें। दरवाजे बंद कर लें, अपने कमरे में बैठ जाएं और बस अपने विचार लिखना शुरू कर दें—जो भी आपके मन में आए। उसमें काट-छांट न करें, क्योंकि इस कागज को किसी को दिखाने की आवश्यकता नहीं है! दस मिनट तक बस लिखते रहें और फिर उसे पढ़ें। यही है जो आपके भीतर चलता रहता है। यदि आप उन्हें पढ़ेंगे तो आप सोचेंगे कि यह किसी पागल का काम है। यदि आप उस कागज को अपने सबसे करीबी मित्र को दिखाएंगे तो वह भी आपको देखेगा और सोचेगा : 'तुम पागल तो नहीं हो गए?'

18

विनोदी चेहरे

कई पुरानी ध्यान विधियां हैं जो फनी फेसेज, विनोदी चेहरे बनाने का उपयोग करती हैं। आप इसे एक ध्यान बना सकते हैं। तिब्बत में यह प्राचीनतम परंपराओं में से एक है।

एक बड़ा दर्पण रख लें, उसके सामने नग्न खड़े हो जाएं, और चेहरे बनाएं, विनोदी मुद्राएं बनाएं,

और देखें। पंद्रह-बीस मिनट तक चेहरे बनाते-बनाते और देखते-देखते आप चकित हो जाएंगे, आप महसूस करेंगे कि आप इससे अलग हैं। यदि आप अलग न होते तो ये सब चीजें कैसे कर पाते? तब शरीर आपके हाथ में है, आप मालिक हैं। आप इसके साथ जैसा चाहे खेल सकते हैं।

विनोदी चेहरे बनाने के, विनोदी मुद्राएं बनाने के नये-नये ढंग खोजें। जो भी दिल में आए, करें। और आपको एक गहन मुक्ति का बोध होगा। और आप स्वयं को शरीर की तरह नहीं, चेहरे की तरह नहीं, बल्कि चेतना के रूप में देखना शुरू करेंगे। यह विधि बहुत सहायक होगी।

19

पृथ्वी से संपर्क

कभी एक छोटा सा प्रयोग करें, कहीं भी नग्न खड़े हो जाएं—नदी के किनारे, समुद्रतट पर, धूप में—और उछलना-कूदना, भागना-दौड़ना, जॉगिंग शुरू कर दें और महसूस करें कि आपकी ऊर्जा आपके पैरों से पृथ्वी की ओर प्रवाहित हो रही है। धीमे-धीमे भागें, जॉगिंग करें और महसूस करें कि आपकी ऊर्जा आपके पैरों से पृथ्वी में प्रवाहित हो रही है। कुछ मिनट इस प्रकार भागने के बाद, शांति से पृथ्वी में जड़ें जमा कर खड़े हो जाएं और अपने पैरों और पृथ्वी के बीच संवाद को अनुभव करें। अचानक आप बहुत ही स्थिर, शांत और अखंड अनुभव करेंगे। आप पाएंगे कि पृथ्वी भी कुछ कहती है, आपके पैर भी कुछ कहते हैं। आपके और पृथ्वी के बीच एक संवाद घटता है।

20

श्वास को शिथिल करो

जब भी आपको समय मिले, कुछ देर के लिए श्वास-प्रक्रिया को शिथिल कर दें। और कुछ नहीं करना है—पूरे शरीर को शिथिल करने की कोई जरूरत नहीं है। रेलगाड़ी में, हवाई जहाज में या कार में बैठे हैं, किसी और को मालूम भी नहीं पड़ेगा कि आप कुछ कर रहे हैं। बस श्वास-प्रक्रिया को शिथिल कर दें। जैसे वह सहज चलती है, वैसे चलने दें। फिर आंखें बंद कर लें और श्वास को देखते रहें—भीतर गई, बाहर आई, भीतर गई।

एकाग्रता न करें। यदि आप एकाग्रता करेंगे तो मुश्किल में पड़ जाएंगे, क्योंकि तब सब कुछ बाधा बन जाएगा। यदि कार में बैठे हुए आप एकाग्रता करेंगे, तो कार की आवाज बाधा बन जाएगी, पास में बैठा हुआ व्यक्ति बाधा बन जाएगा।

ध्यान एकाग्रता नहीं है। ध्यान सिर्फ जागरूकता है। आप सिर्फ शिथिल रहें और श्वास को देखते रहें। उस देखने में कुछ भी बहिष्कृत नहीं है। कार आवाज कर रही है—बिलकुल ठीक है, स्वीकार कर लें। सड़क पर ट्रैफिक है—वह भी ठीक है, जीवन का अंग है। आपके पास में बैठा व्यक्ति खर्राटे ले रहा है—स्वीकार कर लें। कुछ भी अस्वीकृत नहीं है।

21

'इस व्यक्ति को शांति मिले'

जब भी कोई व्यक्ति आपसे मिलने आए, तो आप अपने भीतर थिर हो जाएं, शांत हो जाएं। जब वह व्यक्ति भीतर प्रवेश करे तो अंतरतम में उसके लिए शांति का भाव करें। भाव करें : 'इस व्यक्ति को शांति मिले।' सिर्फ कहें ही नहीं, बल्कि इस भाव से भर जाएं, इसे प्राणों में महसूस करें। अचानक आप उस व्यक्ति में एक बदलाव देखेंगे, जैसे कि कुछ अज्ञात उसके भीतर प्रवेश कर गया हो। वह बिलकुल अलग ही व्यक्ति होगा। इसका प्रयोग करके देखें।

22

तनाव विधि

ओशो ने यह तनाव विधि उनके लिए दी है जिन्हें अपने रोजमर्रा के कार्यों में निराशा और क्रोध की सतत पुनरुक्ति का अनुभव होता है।

प्रतिदिन पंद्रह मिनट के लिए, जब भी सुविधाजनक समय हो, एक समय तय कर लें, उस समय कमरा बंद कर लें और क्रोधित हो जाएं—लेकिन क्रोध को बाहर न निकालें। क्रोध को बढ़ाते जाएं...क्रोध

से बिलकुल पागल हो जाएं, लेकिन उसे बाहर न निकालें—बाहर कोई अभिव्यक्ति न करें, तकिये तक को न पीटें। हर तरह से उसे भीतर दबा लें। मेरी बात समझ रहे हैं न? यह रेचन से बिलकुल विपरीत है।

यदि ऐसा लगे कि पेट में तनाव बढ़ता जा रहा है, जैसे कि कोई चीज फूटने ही वाली है, तो पेट को भीतर खींचें, जितना खींच सकें, खींचें। यदि ऐसा लगे कि कंधे तनावग्रस्त हो रहे हैं तो उन्हें और भी तानें। पूरे शरीर को जितना तनाव से भर सकें, भर लें—बिलकुल ऐसे जैसे कि कोई ज्वालामुखी धधक रहा हो और कोई निकास न हो। यही स्मरण रखने वाली बात है—कोई निकास नहीं, कोई अभिव्यक्ति नहीं। चीखें भी नहीं, नहीं तो पेट शिथिल हो जाएगा। कुछ पीटें भी नहीं, नहीं तो कंधे हलके और शिथिल हो जाएंगे। पंद्रह मिनट के लिए पूरे तनाव से भर जाएं, जैसे कि कोई सौ डिग्री पर हो। पंद्रह मिनट में तनाव की पराकाष्ठा को छू लें। पंद्रह मिनट का अलार्म लगा दें और जब अलार्म बजे तो अपनी पूरी ताकत लगा दें। और जैसे ही अलार्म बजना बंद हो, बिलकुल शांत बैठ जाएं, अपनी आंखें बंद कर लें और बस देखें कि क्या हो रहा है। शरीर को बिलकुल ढीला छोड़ दें।

शरीर को इस तरह से तनाव की पराकाष्ठा तक ले जाना आपके पुराने ढांचों को बदल देगा।

23
विपरीत पर विचार

यह एक सुंदर विधि है। यह बहुत उपयोगी होगी। उदाहरण के लिए: यदि आप बहुत असंतुष्ट महसूस कर रहे हैं, तो क्या करें? तो विपरीत का विचार करें। यदि आप असंतुष्ट महसूस कर रहे हैं तो संतोष के बारे में मनन करें—संतोष क्या है? एक संतुलन लाएं। अगर आपके मन में क्रोध उठ रहा है, तो करुणा को ले आएं, करुणा के बारे में विचार करें। और तुरंत आपकी भाव-दशा बदलने लगेगी, क्योंकि दोनों एक ही हैं, विपरीत भी वही ऊर्जा है। जैसे ही आप विपरीत भाव-दशा को ले आते हैं, तो वह पहली भाव-दशा को पी जाती है, अपने में समाहित कर लेती है।

तो अगर क्रोध हो तो करुणा पर मनन करें। एक काम करें: बुद्ध की एक मूर्ति रख लें, क्योंकि बुद्ध की मूर्ति करुणा की मुद्रा है। जब भी क्रोध उठे, अपने कमरे में चले जाएं, बुद्ध को देखें, बुद्ध की तरह बैठ जाएं और करुणा का भाव करें। अचानक ही आप देखेंगे कि आपके भीतर एक रूपांतरण होने लगा। क्रोध विलीन होने लगा, उत्तेजना चली गई, करुणा पैदा होने लगी। और यह कोई दूसरी ऊर्जा नहीं है। यह वही ऊर्जा है—वही क्रोध वाली ऊर्जा—लेकिन इसका गुणधर्म बदल गया, यह ऊपर उठने लगी।

इसे करके देखें!

आप उसे मन के अंधेरे अचेतन तहखाने में नहीं फेंक देना चाहते। नहीं, आप उसके साथ कुछ भी नहीं करते। आप सिर्फ जानते हैं कि वह है, लेकिन आप 'हां' के मार्ग पर चलते हैं—नहीं के प्रति बिना किसी दुर्भाव के, बिना किसी शिकायत के, बिना किसी क्रोध के। बस 'हां' के मार्ग पर चलें, 'नहीं' के प्रति कोई भाव न रखें।

'नहीं' को मारने का सबसे अच्छा तरीका उसकी उपेक्षा करना है। यदि आप उससे लड़ने लगते हैं, तो आप पहले ही उसके शिकार बन गए, बहुत ही सूक्ष्म ढंग से उसके जाल में पड़ गए; 'नहीं' की पहले ही आप पर जीत हो गई। जब आप 'नहीं' से लड़ने लगते हैं तो आप 'नहीं' को नहीं कह रहे हैं। इस तरह पिछले दरवाजे से उसने पुनः आप पर कब्जा जमा लिया।

तो 'नहीं' को भी नहीं न कहें—सिर्फ उसकी उपेक्षा करें। एक महीने के लिए 'हां' के मार्ग पर चलें और 'नहीं' से बिलकुल न लड़ें। आप हैरान हो जाएंगे कि धीरे-धीरे 'नहीं' कमजोर हो गई है, क्योंकि उसे कोई भोजन नहीं मिल रहा। और एक दिन अचानक आप पाएंगे कि वह है ही नहीं। और जब 'नहीं' विलीन हो जाती है तो जितनी ऊर्जा उसमें लगी थी वह सब मुक्त हो जाती है। और वह मुक्त ऊर्जा आपकी 'हां' के प्रवाह को और प्रगाढ़ कर देगी।

26
वृक्ष से मैत्री

किसी वृक्ष के पास जाएं, वृक्ष से बातें करें, वृक्ष को छुएं, वृक्ष को गले लगाएं, वृक्ष को महसूस करें, वृक्ष के पास बस बैठें और वृक्ष को भी महसूस होने दें कि आप एक अच्छे आदमी हैं और आपकी आकांक्षा उसे चोट पहुंचाने की नहीं है।

धीरे-धीरे मित्रता बढ़ेगी और आप महसूस करेंगे कि जब आप आते हैं, तत्क्षण वृक्ष की भाव-दशा बदलती है। आपको बिलकुल पता चलेगा। जब आप आएंगे तो वृक्ष की छाल पर बहुत ऊर्जा का प्रवाह अनुभव होगा। आपको स्पष्ट बोध होगा कि जब आप वृक्ष को छूते हैं, तो वह एक बच्चे की तरह, एक प्रियतम की तरह आनंदित होता है। जब आप वृक्ष के पास बैठेंगे तो आपको कई चीजें खयाल में आने लगेंगी; और शीघ्र ही आप महसूस करेंगे कि यदि आप उदास हैं और वृक्ष के पास आए हैं तो वृक्ष की उपस्थिति मात्र में आपकी उदासी खो गई।

और केवल तभी आप समझ सकेंगे कि हम सब परस्पर निर्भर हैं। हम वृक्ष को आनंदित कर सकते हैं और वृक्ष हमें आनंदित कर सकता है। और यह पूरा जीवन ही परस्पर निर्भर है। इसी पारस्परिक निर्भरता को मैं परमात्मा कहता हूं।

27

'क्या तुम यहां हो?'

अपना ही नाम पुकारें—सुबह में, रात में, दोपहर में। जब भी आपको नींद सी आने लगे, अपना नाम पुकारें। और न केवल पुकारें ही, बल्कि जवाब भी दें। और जोर से बोलें, दूसरों से डरें नहीं। दूसरों से काफी डर चुके। पहले ही उन्होंने हमें डरा-डरा कर मार डाला है। तो बिलकुल न डरें, बाजार में भी इसे स्मरण रखें, अपना नाम पुकारें: 'तीर्थ, क्या तुम यहां हो?' और फिर जवाब दें: 'जी हां।'

28

निष्क्रिय ध्यान

यह ध्यान प्रातःकाल के लिए है। इस ध्यान में रीढ़ को सीधा रख कर, आंखें बंद करके, गर्दन को सीधा रखना है। ओंठ बंद हों और जीभ तालु से लगी हो। श्वास धीमी पर गहरी लेना है। और ध्यान नाभि के पास रखना है। नाभि-केंद्र पर श्वास के कारण जो कंपन मालूम होता है, उसके प्रति जागे हुए रहना है। बस इतना ही करना है। यह प्रयोग चित्त को शांत करता है और विचारों को शून्य कर देता है। इस शून्य से अंततः स्वयं में प्रवेश हो जाता है।

इस प्रयोग में हम क्या करेंगे? शांत बैठेंगे। शरीर को शिथिल, रिलैक्स्ड और रीढ़ को सीधा रखेंगे। शरीर के सारे हलन-चलन, मूवमेंट को छोड़ देंगे। शांत, धीमी, पर गहरी श्वास लेंगे। और मौन, अपनी श्वास को देखते रहेंगे और बाहर की जो ध्वनियां सुनाई पड़ें, उन्हें सुनते रहेंगे। कोई प्रतिक्रिया नहीं करेंगे। उन पर कोई विचार नहीं करेंगे। शब्द न हों और हम केवल साक्षी हैं, जो भी हो रहा है, हम केवल उसे दूर खड़े जान रहे हैं, ऐसे भाव में अपने को छोड़ देंगे। कहीं कोई एकाग्रता, कनसनट्रेशन नहीं करनी है। बस चुप जो भी हो रहा है, उसके प्रति जागरूक बने रहना है।

सुनो! आंखें बंद कर लो और सुनो। चुपचाप मौन में सुनो। चिड़ियों की टीवी-टुट; हवाओं के वृक्षों को हिलाते थपेड़े, किसी बच्चे का रोना और पास के कुएं पर चलती हुई रेंट की आवाज—और बस सुनते रहो, अपने भीतर श्वास का स्पंदन और हृदय की धड़कन। और फिर एक अभिनव शांति और सन्नाटा उतरेगा और आप पाओगे कि बाहर ध्वनि है पर भीतर निस्तब्धता है। और आप पाओगे कि एक नये शांति के आयाम में प्रवेश हुआ है।

तब विचार नहीं रह जाते हैं, केवल चेतना रह जाती है। और इस शून्य के माध्यम में ध्यान, अटेंशन उस ओर मुड़ता है जहां हमारा आवास है। हम बाहर से घर की ओर मुड़ते हैं।

दर्शन बाहर लाया है, दर्शन ही भीतर ले जाता है। केवल देखते रहो—देखते रहो—विचार को, श्वास को, नाभि-स्पंदन को। और कोई प्रतिक्रिया मत करो। और फिर कुछ होता है, जो हमारे चित्त की सृष्टि नहीं है, जो हमारी सृष्टि नहीं है; वरन जो हमारा होना है, हमारी सत्ता है, जो धर्म है, जिसने हमें धारण किया है, वह उदघाटित हो जाता है और हम आश्चर्यों के आश्चर्य स्वयं के समक्ष खड़े हो जाते हैं।

29

आंधी के बाद की निस्तब्धता

'भयंकर आंधी के पश्चात जो निस्तब्धता छा जाती है, उसी में फूल के खिलने की प्रतीक्षा करो।'

प्रतीक्षा! तुम्हें कुछ करना नहीं है, तुम्हें आंधी से गुजरना है ठीक से और फिर जब आंधी जा चुकी हो, तब आंधी की चिंता छोड़ देनी है। वह जो अतीत हो गया, जा चुका; और फिर तुम्हें कुछ करना नहीं है। आंधी के बाद जो सन्नाटा छा जाता है, उस सन्नाटे में सिर्फ प्रतीक्षा काफी है, और फूल खिल जाएगा।

इसलिए यहां मैं जो ध्यान की प्रक्रिया दे रहा हूं, वह इस सूत्र में है। तीस मिनट भयंकर आंधी से गुजरना है। जितना भी तुम पागल हो सको, हो जाना है। और तीस मिनट के बाद तुम्हें कुछ भी नहीं करना है, तुम्हें बिलकुल मौन प्रतीक्षा करनी है। अगर तीस मिनट तुमने सच में ही तूफान पैदा कर लिया, तो तीस मिनट के बाद जो शांति आएगी, वह अपूर्व होगी। अगर तुम्हारा तूफान ही नपुंसक और कमजोर रहा, तो जो शांति आएगी, वह भी उसी कोटि की होगी। अगर तुम्हारा तूफान झूठा रहा, बे-मन से रहा, तो जो शांति आएगी, वह भी झूठी और बे-मन से आएगी। तुम्हारे तीस मिनट के तूफान पर ही निर्भर करेगा कि तीस मिनट के बाद जो निस्तब्धता आती है, वह कैसी है!

एक मित्र ने मुझे खबर दी है किसी के संबंध में। कि कोई दर्शक की तरह आया होगा, तो उसने बाकी तीस मिनट का हिस्सा तो छोड़ दिया, चुपचाप खड़ा रहा, देखता रहा—लोग तूफान में थे। फिर जब सबने आंखें बंद कीं, तो उसने भी आंखें बंद कर लीं। फिर खबर भेजी मुझे कि दस मिनट आंखें बंद किए रहा, लेकिन कुछ हुआ नहीं।

यह कहा किसने है कि दस मिनट आंख बंद करने से कुछ होगा? वह जो तूफान था, वह छोड़ दिया, दस मिनट आंख बंद कर ली। सोचा कि सबको ऐसा कुछ हो रहा है, अपने को भी हो जाएगा!

आंख बंद करने से कुछ नहीं होता। जो हो रहा है, वह उस तीस मिनट के तूफान में है। कितनी आथेंटिक, कितनी प्रामाणिक आंधी है भीतर, उतनी ही गहन शांति हो जाएगी। कितने शिखर पर उठते हैं आप तूफान के, उतनी ही गहन निस्तब्धता की खाई में प्रवेश कर जाएंगे। वह अनुपात सदा बराबर रहेगा।

इसलिए आप पर निर्भर है। वह तीस मिनट में जरा सी भी कंजूसी सब खराब कर देगी। इसलिए मैं देखता हूं कि आप हिल-डुल भी रहे हैं तो ऐसा जैसे कि अगर न हिले-डुले होते तो अच्छा था। अगर मैं आज्ञा दे देता कि बिलकुल हिलो-डुलो मत, तो अच्छा। लेकिन वह भी नहीं मान सकते हैं आप। जब मैं कहता हूं कि बिलकुल हिलें-डुलें मत, तब कहीं खांसने का मन, कहीं हिलने का मन, कहीं कुछ करने का मन होता है। वह भी इसलिए होता है कि तीस मिनट में आंधी नहीं निकल पाई पूरी, अभी बाकी है। उसको जब निकालने का वक्त है, तब रोकते हैं। जब नहीं निकालना है, तब फिर वह निकलना शुरू हो जाती है।

कैसी दुविधा आप अपने लिए खुद ही पैदा करते हैं! जब मैं कह रहा हूं कि तीस मिनट कूद लें, उछल लें, जो भी करना है, कर लें—तो कर ही डालें, फिर रोकें मत। एक-एक रोआं नाच ले आपके शरीर का, और एक-एक कण विक्षिप्त हो जाने दें। इसके बाद जो निस्तब्धता आएगी, वह आपको लानी नहीं है; वह तो तूफान का अनिवार्य परिणाम है, वह उसकी छाया है। और उस निस्तब्धता में सिर्फ प्रतीक्षा करनी है, जस्ट अवेटिंग। उस प्रतीक्षा में वह फूल खिलता है, उससे पहले नहीं।

30
निश्चल ध्यानयोग

ध्यान एक अनुभूति है। ध्यान के सैकड़ों प्रकार हैं। और सैकड़ों मार्गों से लोग ध्यान को उपलब्ध हो सकते हैं। निश्चल ध्यानयोग की तरफ पहुंचने के लिए भी सैकड़ों रास्ते हैं। और पृथ्वी पर अनेक-अनेक रास्तों से चल कर लोग उस क्षण को उपलब्ध हो गए हैं, जिसे हम मन का ठहर जाना कहें।

एक छोटी सी प्रक्रिया मैं आपसे कहूंगा, सरल, जिसे आप कर सकें। और आपको निश्चल मन की थोड़ी सी झलक और छाया भी मिलनी शुरू हो जाए, तो आपकी जिंदगी रूपांतरित होने लगेगी। एक नये आदमी का जन्म आपके भीतर हो जाएगा। पुराना आदमी बिखरने, पिघलने लगेगा; और एक नई चेतना, एक नया केंद्र, देखने का एक नया ढंग, जीने की एक नई प्रक्रिया, होने की एक नई व्यवस्था आपके भीतर पैदा हो जाएगी। जैसे अचानक अंधे की आंख खुल जाए, या जैसे अचानक बहरे को कान मिल जाएं, या जैसे अचानक मरा हुआ पुनरुज्जीवित हो जाए; ठीक ध्यान के अनुभव से ऐसी ही व्यापक क्रांतिकारी घटना चेतना में घटती है।

अगर आपने चित्र देखे हों बच्चों के उनके मां के पेट में, गर्भ में। मां के पेट में बच्चा जिस हालत में होता है, गर्भ में, उस अवस्था में मनोवैज्ञानिक कहते हैं, योग की गहरी खोज कहती है, कि मां के पेट में जब बच्चा होता है जिस पोस्चर में, जिस आसन में, उस समय बच्चे के पास न्यूनतम मन होता है, न के बराबर मन होता है। कह सकते हैं, होता ही नहीं। और बच्चे की चेतना मस्तिष्क में नहीं होती मां के

पेट में। और न ही बच्चे की चेतना हृदय में होती है। शायद आपको पता न हो कि मां के पेट में बच्चे का हृदय नहीं धड़कता। नौ महीने बच्चा बिना हृदय धड़कने के होता है।

इसलिए एक बात और समझ लेना कि हृदय की धड़कन से जीवन का कोई संबंध नहीं, क्योंकि बच्चा बिना हृदय की धड़कन के नौ महीने जिंदा रहता है। जीवन और गहरी बात है।

चेतना जब भाव में होती है, तो हृदय केंद्र होता है। और चेतना जब विचार में होती है, तो मस्तिष्क केंद्र होता है। लेकिन मस्तिष्क बहुत बाद में विकसित होता है। और हृदय भी नौ महीने के बाद धड़कता है। उसके भी पहले चेतना एक केंद्र पर होती है, वह नाभि है। बच्चा मां से, नाभि से जुड़ा होता है। जीवन का पहला अनुभव बच्चे को नाभि पर होता है।

जिन लोगों को मन के पार जाना है, उन्हें हृदय, मस्तिष्क दोनों से उतर कर नाभि के पास वापस लौटना होता है। अगर आप फिर से अपनी चेतना को नाभि के पास अनुभव कर सकें, तो आपका मन तत्क्षण ठहर जाएगा।

तो इस ध्यान की प्रक्रिया के लिए, जिसको मैं निश्चल ध्यानयोग की तरफ एक विधि कहता हूं, दो बातें ध्यान में रखने जैसी जरूरी हैं। जैसा कि सूफी फकीरों को अगर आपने देखा हो प्रार्थना करते, या मुसलमानों को आपने नमाज पढ़ते देखा हो, तो जिस भांति वे घुटने मोड़ कर बैठते हैं, वैसे घुटने मोड़ कर बैठ जाएं। बच्चे के घुटने ठीक उसी तरह मुड़े होते हैं मां के गर्भ में। आंख बंद कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें और श्वास को बिलकुल शिथिल छोड़ दें, रिलैक्स छोड़ दें, ताकि श्वास जितनी धीमी और जितनी आहिस्ता आए-जाए, उतना अच्छा। श्वास जैसे न्यून हो जाए, शांत हो जाए।

श्वास को दबा कर शांत नहीं किया जा सकता है। अगर आप रोकेंगे, तो श्वास तेजी से चलने लगेगी। रोकें मत, सिर्फ ढीला छोड़ दें। आंख बंद कर लें और अपनी चेतना को भीतर नाभि के पास ले आएं। सिर से उतारें हृदय पर, हृदय से उतारें नाभि पर। नाभि के पास चेतना को ले जाएं। श्वास का हलका सा कंपन पेट को नीचे-ऊपर करता रहेगा। आप अपने ध्यान को आंख बंद करके वहीं ले आएं, जहां नाभि कंपित हो रही है। श्वास के धक्के से पेट ऊपर-नीचे हो रहा है, आंख बंद करके ध्यान को वहीं ले आएं। शरीर को ढीला छोड़ते जाएं। थोड़ी ही देर में शरीर आपका आगे झुकेगा और सिर जाकर जमीन से लग जाएगा। उसे छोड़ दें और झुक जाने दें।

जब सिर आपका जमीन से लग जाएगा, तब आप ठीक उस हालत में आ गए, जिस हालत में बच्चा मां के पेट में होता है।

शांत होने के लिए इससे ज्यादा कीमती आसन जगत में कोई भी नहीं है। आसन ऐसा हो जाए, जैसा गर्भ में बच्चे का होता है; और आपका ध्यान नाभि पर चला जाए। बच्चे का ध्यान और चेतना नाभि में होती है। आपका ध्यान भी नाभि पर चला जाए।

अनेक बार ध्यान उचट जाएगा, कहीं कोई आवाज होगी, ध्यान चला जाएगा। कहीं कोई बोल देगा कुछ, ध्यान चला जाएगा। नहीं कहीं कुछ होगा, तो भीतर कोई विचार आ जाएगा, और ध्यान हट जाएगा। उससे लड़ें मत। अगर ध्यान हट जाए, चिंता मत करें। जैसे ही खयाल आए कि ध्यान हट गया, वापस अपने ध्यान को नाभि पर ले आएं। किसी कलह में न पड़ें, किसी कांफ्लिक्ट में न पड़ें कि यह मन मेरा क्यों हटा! यह मन बड़ा चंचल है, यह क्यों हटा! नहीं हटना चाहिए। इस सब व्यर्थ की बात में मत पड़ें। जब भी खयाल आ जाए, वापस नाभि पर अपने ध्यान को ले आएं।

और चालीस मिनट कम से कम—ज्यादा कितनी भी देर कोई रह सकता है—ठीक ऐसे बच्चे की हालत में मां के गर्भ में पड़े रहें। संभावना तो यह है कि दो-चार-आठ दिन के प्रयोग में ही आपको एक गहरी निश्चलता भीतर अनुभव होनी शुरू हो जाएगी। ठीक आप बच्चे के जैसी सरल चेतना में प्रवेश कर जाएंगे। मन ठहरा हुआ मालूम पड़ेगा। जितना नाभि के पास होंगे, उतनी देर मन ठहरा रहेगा। और जब नाभि के पास रहना आसान हो जाएगा, तो मन बिलकुल ठहर जाएगा।

जो आदमी नाभि के पास जितना जाएगा अपनी चेतना को लेकर, उतना ही वर्तमान के करीब आ जाएगा। जैसे बच्चा नाभि से जुड़ा होता है मां से, ऐसे ही एक अज्ञात नाभि के द्वार से हम अस्तित्व से जुड़े हैं। नाभि ही द्वार है।

जैसे हम मां से जुड़े होते हैं इस भौतिक शरीर से, ऐसे ही इस बड़े जगत, इस बड़े अस्तित्व से, इस प्रकृति या अस्तित्व के गर्भ से भी हम नाभि से ही जुड़े होते हैं। तो जैसे ही आप नाभि के निकट अपनी चेतना को लाते हैं, मन निश्चल हो जाता है।

जीसस का बहुत अदभुत वचन है—शायद ही ईसाई उसका अर्थ समझ पाए—जीसस ने कहा है कि तुम तभी मेरे प्रभु के राज्य में प्रवेश कर सकोगे, जब तुम छोटे बच्चों की भांति हो जाओ।

लेकिन मोटे अर्थ में इसका यही अर्थ हुआ कि हम बच्चों की तरह सरल हो जाएं। लेकिन गहरे वैज्ञानिक अर्थ में इसका अर्थ होता है कि हम बच्चे की उस आत्यंतिक अवस्था में पहुंच जाएं, जब बच्चा होता ही नहीं, मां ही होती है। और बच्चा मां के सहारे ही जी रहा होता है। न अपनी कोई हृदय की धड़कन होती है, न अपना कोई मस्तिष्क होता है; बच्चा पूरा समर्पित, मां के अस्तित्व का अंग होता है।

ठीक ऐसी ही घटना 'निश्चल ध्यानयोग' में घटती है। आप समाप्त हो जाते हैं और परमात्मा के साथ एकीभाव हो जाता है। और परमात्मा के द्वारा आप जीने लगते हैं।
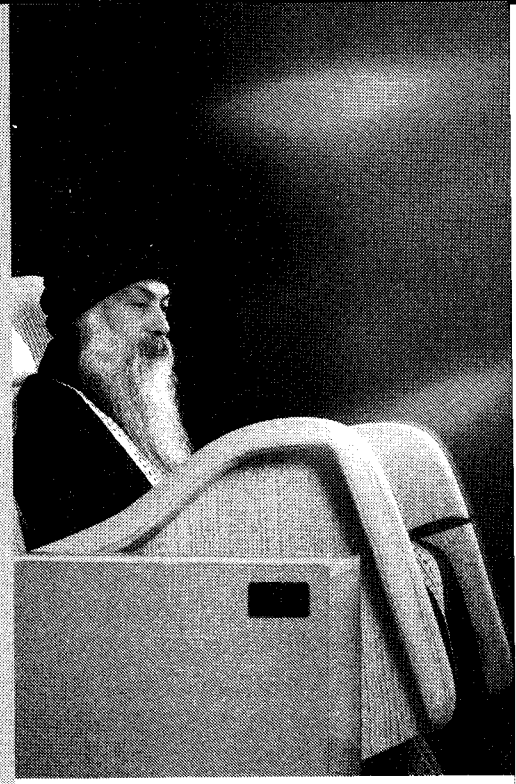
दिन के समय करने वाली ध्यान विधियां
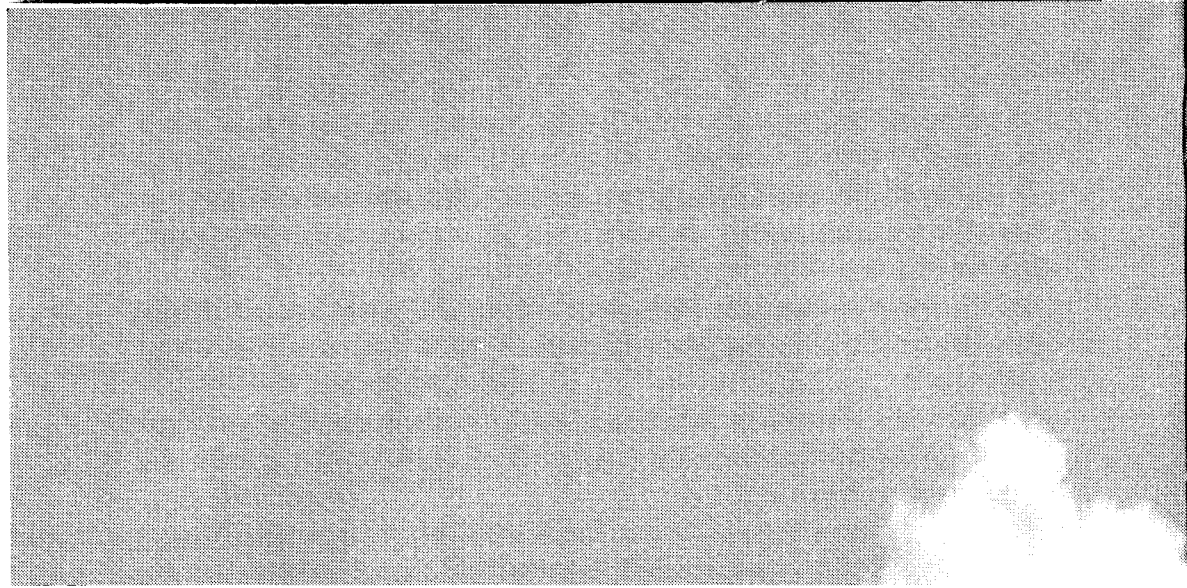
31
स्वप्न में सचेतन प्रवेश

एक मित्र ने पूछा है: क्या समझाने की कृपा करेंगे कि स्वप्न देखते हुए बोधपूर्ण होने के अन्य उपाय क्या हैं?

यह प्रश्न उन सबके लिए महत्वपूर्ण है जो ध्यान में उत्सुक हैं। क्योंकि सचाई यह है कि स्वप्न देखने की प्रक्रिया का अतिक्रमण ही ध्यान है।

तुम सतत सपना देखते हो। रात में ही नहीं, पूरा दिन भी सपना देखते रहते हो। यह समझने की पहली बात है कि जागते हुए भी तुम सपना देखते हो। दिन के किसी समय आंखें बंद करो, शरीर को थोड़ा शिथिल करो, और पाओगे कि सपना चल रहा है। वह कभी बंद ही नहीं होता, हमारे दैनंदिन कामकाज के चलते वह सिर्फ दबा रहता है। यह दिन के तारों जैसा है। रात में तुम तारों को देखते हो, दिन में उन्हें नहीं देखते; लेकिन तारे सदा होते हैं। दिन में सूर्य की रोशनी में बस छिप जाते हैं।

वही बात स्वप्न के साथ सही है। ऐसा नहीं है कि तुम नींद में ही सपना देखते हो। नींद में स्वप्न आसानी से अनुभव में आता है, क्योंकि उस समय दिन का कार्यकलाप बंद रहता है। इसलिए स्वप्न का भीतरी कार्यकलाप देखा और महसूस किया जाता है। जब सुबह तुम जागते हो तो भी स्वप्न चलता ही रहता है, सिर्फ तुम बाहर के कामों में व्यस्त हो जाते हो। दैनंदिन कामकाज का सिलसिला स्वप्न को दबा देता है। लेकिन भीतर स्वप्न जारी रहता है।

एक आरामकुर्सी में बैठ कर शरीर को शिथिल करो, आंखें बंद करो, और अचानक तुम देखोगे कि स्वप्न के तारे मौजूद हैं, वे कहीं गए नहीं हैं। स्वप्न सदा चलता रहता है, वह एक सतत प्रक्रिया है।

दूसरी बात, अगर सपना जारी है तो सच में तुम जागे हुए नहीं हो, तुम सोए हुए हो। फर्क इतना ही है कि रात में अधिक सोए रहते हो और दिन में थोड़ा कम। यह फर्क सापेक्ष है। तो अगर सपना जारी है तो तुम जागे हुए नहीं कहे जा सकते। सपना चेतना पर एक पर्त डाल देता है, और यह पर्त धुएं की भांति तुम्हें घेर लेती है।

इसलिए जब तक तुम सपना देखते हो तुम जागे हुए नहीं हो—चाहे दिन हो या रात हो।

इसलिए दूसरी बात यह कि जब सपना बिलकुल ही नहीं है तो ही तुम जागे हुए कहे जा सकते हो। हम बुद्ध को जाग्रत पुरुष कहते हैं। यह जागरण क्या है? यह जागरण वस्तुतः आंतरिक स्वप्न-प्रक्रिया का विसर्जन है। भीतर कोई सपना नहीं है। तुम जाते हो, तो वहां कोई सपना नहीं मिलता। मानो आकाश में तारे नहीं रहे, शुद्ध आकाश ही है। जब स्वप्न नहीं रहा तो तुम शुद्ध आकाश हो। यह शुद्धता, यह निर्दोषता, यह स्वप्नरहित चैतन्य ही बुद्धत्व या जागरण कहलाता है।

सदियों से सारे संसार का अध्यात्म—चाहे वह पूर्व का हो या पश्चिम का—कहता आया है कि मनुष्य सोया हुआ है। जीसस कहते हैं, बुद्ध कहते हैं, उपनिषद कहते हैं कि मनुष्य सोया हुआ है। इसलिए

तुलनात्मक रूप से रात में तुम ज्यादा सोए हो और दिन में कुछ कम। लेकिन अध्यात्म कहता है कि आदमी नींद में है।

तुम नहीं जानते, तुम्हें स्मरण नहीं है कि तुम कौन हो। क्या जानते हो कि तुम कौन हो? अगर रास्ते में तुम किसी व्यक्ति को मिलो और उससे पूछो कि तुम कौन हो और वह उत्तर न दे सके तो तुम क्या सोचोगे? तुम सोचोगे कि वह या तो पागल है या नशे में है या सोया हुआ है। अगर वह नहीं बता सके कि वह कौन है तो तुम उसके संबंध में क्या सोचोगे?

धर्म के मार्ग पर सबका यही हाल है। तुम नहीं बता सकते कि तुम कौन हो। जब गुरजिएफ या जीसस या कोई भी कहता है कि आदमी सोया है तो उसका पहला अर्थ यह है: तुम स्वयं के संबंध में जागरूक नहीं हो। तुम स्वयं को नहीं जानते हो, तुम स्वयं से कभी नहीं मिले हो। विषयगत संसार में तो तुम बहुत जानते हो, लेकिन स्वयं विषयी को नहीं जानते।

तुम्हारे मन का हाल यह है कि मानो तुम फिल्म देखने गए हो। पर्दे पर फिल्म चल रही है और तुम उसे देखने में ऐसे तल्लीन हो कि तुम्हें फिल्म और कहानी के अतिरिक्त सब भूल जाता है। उस समय अगर कोई पूछ दे कि तुम कौन हो तो तुम कुछ न कह सकोगे।

यही स्वप्न में घटता है। और यही हमारी जिंदगी है। फिल्म की घटना तो सिर्फ तीन घंटे की है, लेकिन स्वप्न-क्रिया जन्मों-जन्मों चलती है। और अचानक यदि सपना बंद भी हो जाए तो भी तुम नहीं पहचान पाओगे कि तुम कौन हो। अचानक तुम धुंधला-धुंधला अनुभव करोगे और भयभीत भी। तुम फिर फिल्म में लौट जाना चाहोगे, क्योंकि वह परिचित है। तुम उससे भलीभांति परिचित हो, तुम उसके साथ समायोजित हो।

क्योंकि जब स्वप्न तिरोहित होता है तो एक मार्ग खुलता है, खासकर झेन में जिसे त्वरित मार्ग, त्वरित बुद्धत्व का मार्ग कहते हैं। इन एक सौ बारह विधियों में कई ऐसी विधियां हैं जो त्वरित बुद्धत्व को प्राप्त करा सकती हैं। लेकिन वह तुम्हारे लिए अति हो जा सकती है। और हो सकता है कि तुम उसे झेल न पाओ। इस विस्फोट में तुम मर भी सकते हो। क्योंकि सपनों के साथ तुम इतने समय से जी रहे हो कि उनके हटने पर तुम्हें याद ही नहीं रहेगा कि तुम कौन हो।

अगर यह सारा संसार अचानक समाप्त हो जाए और तुम बिलकुल अकेले रह जाओ तो यह इतना बड़ा आघात होगा कि तुम मर जाओगे। ठीक वही बात होगी अगर सारी स्वप्न-क्रिया अचानक तुम्हारी चेतना में लुप्त हो जाए। तुम्हारा संसार ही समाप्त हो जाएगा, क्योंकि सपना ही तुम्हारा संसार है। हम सच में संसार में नहीं हैं। हमारा संसार बाहरी चीजों से नहीं, वरन हमारे सपनों से बना होता है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वप्न-लोक में रहता है।

याद रहे, हम जिस संसार की बात कर रहे हैं वह एक नहीं है। भौगोलिक तल पर तो वह एक है, लेकिन मनोवैज्ञानिक तल पर उतने ही संसार हैं जितने मन हैं। हरेक मन अपना अलग संसार है। और अगर तुम्हारा सपना समाप्त होता है तो तुम्हारा संसार ही समाप्त होता है। सपनों के बिना तुम्हारे लिए जीना कठिन होगा। यही कारण है कि त्वरित उपाय साधारणतः काम में नहीं लाए जाते। केवल क्रमिक उपाय काम में लाए जाते हैं।

इस बात को खयाल में रख लेना अच्छा होगा। क्रमिक उपाय इसलिए काम में लाए जाते हैं कि वे जरूरी हैं। तुम अचानक इसी क्षण आत्मबोध में, बुद्धत्व में छलांग लगा सकते हो। उसमें कोई बाधा नहीं

है। कभी कोई बाधा थी भी नहीं। तुम अभी भी वही हो, इसी क्षण बुद्धत्व में प्रवेश कर सकते हो। लेकिन वह छलांग खतरनाक हो सकती है, घातक भी। हो सकता है, तुम उसे बर्दाश्त न कर सको, तुम्हारे लिए वह अति हो जाए।

तुम झूठे सपनों में जीने के आदी हो। सत्य का सामना, सत्य का साक्षात्कार तुम नहीं कर सकते। तुम तापगृह में लगाए गए पौधे जैसे हो। तुम सपनों में ही जी सकते हो। वे अनेक तरह से तुम्हारे काम आते हैं। तुम्हारे लिए वे सपने नहीं हैं, यथार्थ हैं।

इसलिए क्रमिक उपाय उपयोगी हैं। वे इसलिए उपयोगी नहीं हैं कि स्वयं को उपलब्ध होने के लिए समय की जरूरत है। बुद्धत्व के लिए समय की जरूरत नहीं है। बुद्धत्व के लिए कतई समय की जरूरत नहीं है। यह उपलब्धि भविष्य में नहीं होती है। लेकिन क्रमिक उपायों के साथ चलकर तुम भविष्य में उसे उपलब्ध कर लेते हो। क्रमिक उपाय वस्तुतः क्या करते हैं? वे बुद्धत्व नहीं देते, वे तुम्हें बुद्धत्व झेलने के योग्य भर बनाते हैं। वे तुम्हें क्षमता और बल देते हैं कि तुम बुद्धत्व को झेल सको।

ऐसे सात उपाय हैं जिनसे तुम त्वरित बुद्धत्व को उपलब्ध हो सकते हो। लेकिन तुम उसे झेल न सकोगे। तुम अंधे हो जा सकते हो; अतिशय प्रकाश है वह। या अचानक मृत्यु भी घटित हो सकती है; अतिशय आनंद है वह।

हमारे सपने का, हमारी गहरी नींद का अतिक्रमण कैसे हो सकता है? अतिक्रमण के संबंध में यह प्रश्न अर्थपूर्ण है, 'क्या समझाने की कृपा करेंगे कि स्वप्न देखते हुए बोधपूर्ण होने के अन्य उपाय क्या हैं?'

मैं यहां और दो उपायों की चर्चा करूंगा।

पहली विधि : संसार स्वप्नवत है

एक तो यह कि तुम यह मान कर अपना कामकाज, अपना व्यवहार शुरू करो कि सारा संसार स्वप्नवत है। तुम जो भी करो, यह याद रखो कि यह सपना है। जब जागे हुए हो तो निरंतर याद रखो कि सब कुछ सपना है।

संसार को स्वप्न या माया कहने का यही कारण है। यह कोई दार्शनिक तर्क नहीं है। जब शंकर कहते हैं कि यह संसार माया है तो यह दार्शनिक सिद्धांत नहीं है, परिकल्पना नहीं है। शंकर किसी खास ध्यान के लिए उसे एक मदद के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

और ध्यान यह है—अगर तुम स्वप्न देखते हुए स्मरण रखना चाहते हो कि यह स्वप्न है तो तुम्हें जागते हुए ही उसका आरंभ करना होगा। अभी तो ऐसा है कि स्वप्न देखते हुए तुम नहीं याद रख सकते कि यह स्वप्न है। तुम तो सोचते हो कि यह यथार्थ ही है।

क्यों तुम सोचते हो कि यह यथार्थ है?

क्योंकि दिन भर तो तुम यही समझते हो कि सब कुछ यथार्थ है। वह तुम्हारी दृष्टि बन गई है—बंधी-बंधाई दृष्टि। जागते हुए तुमने स्नान किया, वह यथार्थ था। जागते हुए तुम भोजन कर रहे थे, वह यथार्थ था। जागते हुए तुम बातचीत कर रहे थे, वह भी यथार्थ था। पूरे दिन और इसी तरह पूरी जिंदगी, तुम जो भी सोचते हो, करते हो, उस पर तुम्हारी दृष्टि उसके यथार्थ होने की रहती है। यह दृष्टि

तुम्हारा स्वयं का यथार्थ आविर्भूत होता है, प्रकट होता है। तुम स्वयं को अनुभव कर सकते हो—यह एक तरीका हुआ।

दूसरी विधि : मैं हूं

फिर दूसरा तरीका है जो दूसरे ध्रुव पर है। एक ही चीज का एक ध्रुव पहला तरीका है और उसका दूसरा ध्रुव दूसरा तरीका है। पहला तो यह है कि संसार की हर चीज को स्वप्न की तरह समझा जाए, याद किया जाए। दूसरे में संसार के विषय में कुछ नहीं सोचना है, केवल यह याद रखना है कि मैं हूं।

गुरजिएफ दूसरे उपाय को प्रयोग में लाए थे। यह उपाय सूफी परंपरा का है, इस्लाम का है। उन्होंने इस विधि पर गहराई से प्रयोग किए। तुम जो भी करो उसमें सदा याद रखो कि मैं हूं। तुम पानी पीते हो, तुम भोजन करते हो; सब में सदा याद रखो कि मैं हूं। खाए जाओ और याद रखो कि मैं हूं। इसे भूलो मत।

यह स्मरण कठिन होगा। तुम सोचते हो कि मैं तो जानता ही हूं कि मैं हूं, इसे याद रखने की क्या जरूरत है? लेकिन सच यह है कि तुम्हें नहीं याद है कि तुम हो।

यह विधि बहुत संभावना से भरी है। जब चल रहे हो तो याद रखो कि मैं हूं। चलना जारी रहे, चलते रहो; लेकिन निरंतर इस आत्म-स्मरण से जुड़े रहो कि मैं हूं, मैं हूं। इसे भूलो मत। तुम अभी मुझे सुन रहे हो; यहीं प्रयोग भी करो। तुम मुझे सुनते हो; उसमें बहुत डूबो मत, उससे तादात्म्य मत करो। जो भी मैं कहता हूं, उसे सुनने के साथ-साथ अपने को याद रखो, भूलो मत। सुनना रहे, शब्द रहें; कोई बोल रहा है और तुम हो—यानी यह स्मरण कि मैं हूं, मैं हूं, मैं हूं। इस 'मैं हूं' को बोध का स्थायी अंग बन जाने दो।

यह बहुत कठिन है। पूरे एक मिनट के लिए भी तुम यह लगातार स्मरण नहीं रख सकते। एक प्रयोग करो। अपने सामने घड़ी रख लो और सेकेंड की सुई को देखना शुरू करो। एक सेकेंड, दो सेकेंड, तीन सेकेंड—उसे देखते जाओ। दो काम एक साथ करो—सेकेंड बताने वाली सुई को देखो और निरंतर स्मरण करो, मैं हूं, मैं हूं। प्रत्येक सेकेंड के साथ स्मरण रखो कि मैं हूं। पांच या छह सेकेंड के अंदर तुम देखोगे कि तुम भूल बैठे। अचानक तुम्हें याद आएगा कि कई सेकेंड गुजर गए और नहीं स्मरण किया कि मैं हूं।

पूरे एक मिनट भी स्मरण रखना चमत्कार है। और अगर तुम एक मिनट तक याद रख सके तो यह विधि तुम्हारी है। तब इसका प्रयोग करो। इसके द्वारा तुम सपनों का अतिक्रमण कर जाओगे और जानोगे कि सपने सपने हैं।

यह कैसे काम करती है? अगर तुम पूरे दिन याद रख सको कि मैं हूं तो यह स्मरण तुम्हारी नींद में भी प्रवेश कर जाएगा और तब तुम सपने में भी निरंतर याद रखोगे कि मैं हूं। और अगर सपने में याद रख सके कि मैं हूं तो सपना सपना ही हो जाएगा। तब सपना तुम्हें धोखा नहीं दे सकता है। तब स्वप्न यथार्थ की तरह नहीं प्रतीत हो सकता। यह इसकी तरकीब है, स्वप्न यथार्थ मालूम पड़ता है, क्योंकि तुम्हें आत्म-स्मरण नहीं रहा, तुम भूल गए कि मैं हूं। अपना स्मरण न रहने पर स्वप्न यथार्थ बन जाता है। और अगर अपना स्मरण रहे तो यथार्थ, तथाकथित यथार्थ महज स्वप्न बन जाता है।

स्वप्न और यथार्थ में यही भेद है। ध्यानपूर्ण मन के लिए या ध्यान के विज्ञान के लिए मात्र यही भेद है। यदि तुम हो तो समूचा यथार्थ स्वप्न मात्र है। और यदि तुम नहीं हो तो स्वप्न ही यथार्थ बन जाता है।

नागार्जुन कहते हैं, 'अब मैं हूं, क्योंकि संसार नहीं है। जब मैं नहीं था, संसार था। एक ही रह सकता है।' उसका यह अर्थ नहीं है कि संसार का लोप हो जाता है। नागार्जुन इस संसार के लिए नहीं कह रहे हैं, वे स्वप्न के संसार के लिए कह रहे हैं। या तो तुम हो या सपने हैं, दोनों नहीं हो सकते।

इसलिए पहले चरण में सतत स्मरण रखो कि मैं हूं। राम मत कहो, श्याम मत कहो; कोई नाम मत लो। क्योंकि तुम नाम नहीं हो। केवल कहो, मैं हूं। किसी भी क्रिया में इसका प्रयोग करो और तब अनुभव करो। अपने भीतर तुम जितने यथार्थ होते जाओगे, तुम्हारे चारों ओर का संसार उतना ही यथार्थहीन होता जाएगा। मैं वास्तविक होता जाएगा और संसार अवास्तविक होता जाएगा। या तो संसार वास्तविक है या मैं वास्तविक है—दोनों वास्तविक नहीं हो सकते। अभी तुम स्वप्नवत हो, तो संसार वास्तविक हो गया है। इस स्थिति को बदल दो। स्वयं वास्तविक हो जाओ, संसार स्वप्न हो जाता है।

गुरजिएफ इस विधि पर सतत काम करते रहे। उनके मुख्य शिष्य पी.डी. ऑस्पेंस्की ने उल्लेख किया है कि जब गुरजिएफ मेरे साथ इस विधि पर काम कर रहे थे और मैं तीन महीनों तक निरंतर 'मैं हूं' के स्मरण का अभ्यास कर रहा था तो तीन महीनों के बाद अचानक सब कुछ ठहर गया; विचार, सपने, सब कुछ बंद हो गए। मेरे भीतर केवल एक धुन शाश्वत संगीत की तरह बजती रही—मैं हूं, मैं हूं, मैं हूं। और तब यह प्रयत्नपूर्ण कर्म नहीं था; मैं हूं का स्मरण एक सहज कर्म हो गया था।

तीन महीने तक ऑस्पेंस्की को एक घर के अंदर रखा गया था, और उसे बाहर जाने की इजाजत नहीं थी। फिर एक दिन गुरजिएफ ने उसे बाहर बुलाया और कहा, 'मेरे साथ आओ।' उस समय वे लोग रूसी नगर तिफलिस में रहते थे। गुरजिएफ ने उसको अपने साथ लिया और दोनों सड़क पर आ गए। ऑस्पेंस्की अपनी डायरी में लिखता है, 'पहली बार मैंने समझा कि उनका क्या अभिप्राय था जब जीसस ने कहा कि मनुष्य सोया हुआ है। मुझे लगा कि समूचा नगर ही सोया हुआ है। लोग नींद में ही चल रहे थे; दुकानदार नींद में ही सामान बेच रहे थे, खरीददार भी नींद में ही खरीद रहे थे। पूरा नगर सोया था। फिर मैंने गुरजिएफ की तरफ देखा, केवल वे ही जागे हुए थे। सारा नगर नींद में था। नींद में ही लोग क्रोध कर रहे थे, लड़ रहे थे, प्रेम कर रहे थे, खरीद-फरोख्त कर रहे थे; सब कुछ नींद में कर रहे थे।'

फिर ऑस्पेंस्की लिखता है, 'अब मैं उनकी आंखों को, उनके चेहरों को देखता था; वे बिलकुल बेखबर थे। वे वहां नहीं थे। उनका आंतरिक केंद्र खो गया था, वह वहां नहीं था।'

ऑस्पेंस्की ने गुरजिएफ से कहा, 'मैं और आगे नहीं जाना चाहता हूं। इस नगर को क्या हो गया है? हर कोई नींद में, नशे में मालूम पड़ता है।'

गुरजिएफ ने कहा, 'नगर को कुछ नहीं हुआ है; तुमको अवश्य कुछ हुआ है। तुम नशे से बाहर आ गए हो। नगर तो वही का वही है। यह वही जगह है जहां तीन महीने पहले तुम घूमते थे, लेकिन तब तुम नहीं देख सकते थे कि लोग सोए हैं, क्योंकि तुम भी सोए थे। अब तुम देख सकते हो, क्योंकि अब बोध का कुछ गुण तुममें आया हुआ है। तीन महीने तक लगातार "मैं हूं" का अभ्यास करने से तुम थोड़ी मात्रा में जागरूक हो गए हो, तुम बोधपूर्ण हो गए हो। तुम्हारी चेतना का एक अंश स्वप्न के परे चला गया है। यही कारण है कि तुम्हें अब हर कोई नींद में, मृतवत चलता दिखाई पड़ता है, नशे में, सम्मोहन में मालूम पड़ता है।'

लेकिन जब जागे हुए हो तब शुरू करना। जिस क्षण याद आए उसी क्षण स्मरण का धागा पकड़ लेना कि मैं हूं। मैं नहीं कहता कि इन शब्दों को, 'मैं हूं' को दोहराओ। नहीं, उसका भाव करो। नहाते हुए अनुभव करो कि मैं हूं। ठंडे पानी का स्पर्श होने दो और उसके पीछे तुम स्वयं खड़े रहकर उसकी अनुभूति

करो और स्मरण करो कि मैं हूं। याद भर रखना है। यह मैं नहीं कहता कि तुम 'मैं हूं' का जाप करो। जाप कर सकते हो, लेकिन उससे बोध की उपलब्धि नहीं होगी। उलटे जाप से नींद ही बढ़ सकती है।

अनेक लोग हैं जो अनेक चीजों का जाप कर रहे हैं। वे राम-राम कहे जाते हैं। अगर वे बोध के बिना महज जप करते हैं तो यह राम-राम भी एक नशा बन जाता है। इसके जरिए वे ठीक से सो सकते हैं। यही कारण है कि पश्चिम में महेश योगी का इतना प्रभाव है। वे मंत्र जपने को देते हैं। और पश्चिम में नींद गंभीर समस्या का रूप ले रही है। वहां नींद की बहुत कमी हो गई है। स्वाभाविक नींद तो गायब ही हो गई है। तुम केवल ट्रैंक्विलाइजर की मदद से सो पाते हो, अन्यथा सोना असंभव हो गया है। महेश योगी के प्रभाव का यही कारण है। अगर तुम किसी भी शब्द को दोहराते रहो तो नींद गहरा जाएगी, बस।

इसलिए तथाकथित टी.एम.,भावातीत ध्यान एक मानसिक ट्रैंक्विलाइजर है, और कुछ भी नहीं है। उससे मदद मिलती है। लेकिन वह सोने के लिए तो काम की चीज है, ध्यान के बिलकुल काम की नहीं है। उससे तुम अच्छी तरह सो सकते हो। तुम्हारी नींद गहरी होगी। अच्छा है, लेकिन वह ध्यान कतई नहीं है।

मनस्विद कहते हैं कि जब तुम न सो सको तो दीवार-घड़ी पर मन को लगाओ, उस घड़ी की टिक-टिक की आवाज पर मन को एकाग्र करो। वह आवाज भी हृदय की धड़कन जैसी ही है, उससे तुम्हें नींद लग जाएगी। कुछ भी दोहराने से काम चल जाएगा।

इसलिए यह मैं हूं या मैं हूं का स्मरण कोई मंत्र नहीं है, उसका शाब्दिक उच्चार नहीं करना है। उसका बस भाव करो, उसे अनुभव करो; अपने अस्तित्व के प्रति संवेदनशील होओ। जब तुम किसी का हाथ स्पर्श करो तो उसका हाथ ही मत छुओ, उसके साथ अपने छूने को भी अनुभव करो। और इस अनुभव को, इस संवेदनशीलता को अपने मन में गहरे से गहरा उतरने दो, प्रवेश करने दो।

एक दिन तुम अचानक अपने केंद्र पर जाग जाओगे, और पहली बार केंद्र से संचालित होने लगोगे। और तब सारा संसार एक स्वप्न बन जाएगा। और तब तुम जानोगे कि स्वप्न देखना सच ही स्वप्न देखना था। और जब जानोगे कि सपना देखना सपना देखना था, तब सपना समाप्त हो जाएगा। वह तो तभी तक जारी रहता है जब तक हम उसे यथार्थ मानते हैं। उसे अयथार्थ जानते ही वह समाप्त हो जाता है।

और एक बार सपना गया कि तुम दूसरे आदमी हो गए। पुराना आदमी मर गया, सोया आदमी चल बसा। जो आदमी तुम पहले थे, अब वही न रहे। पहली बार तुम बोधपूर्ण हुए, सजग हुए। पहली बार इस नींद से भरी दुनिया में तुम जाग्रत हुए। तुम बुद्ध हुए।

और इस जागरण के साथ दुख समाप्त हो जाता है। इस बोध के बाद मृत्यु विदा हो जाती है। इस जागरण के द्वारा भय जाता रहता है। तुम पहली बार सब से—दुख, भय और मृत्यु से मुक्त हो जाते हो। तुम स्वतंत्रता को उपलब्ध हुए। घृणा, क्रोध, लोभ सब विदा हो जाते हैं। तुम प्रेम ही हो जाते हो; प्रेमपूर्ण नहीं, प्रेम ही हो जाते हो।

32

यौन-मुद्रा : काम-ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन की विधि

जीवन को उसके सभी स्तरों पर दो भांति देखा जा सकता है। दो पहलू हैं जीवन के। एक उसका पौदगलिक, मैटीरियल, पदार्थगत पहलू है, दूसरा उसका आत्मगत, स्प्रिचुअल पहलू है। यौन को भी दो दिशाओं से देखना आवश्यक है। एक तो यौन का जैविक, बायोलॉजिकल पहलू है, पौदगलिक, पदार्थगत, शरीर से जुड़ा हुआ, शरीर के अणुओं से जुड़ा हुआ। दूसरा यौन का शक्तिगत, आत्मिक पहलू है, मन से, चेतना से जुड़ा हुआ।

इसलिए दो शब्दों को पहले समझ लें। एक तो जैविक ऊर्जा, जो मनुष्य के जीवनकोष्ठों से संबंधित है, जिनके द्वारा व्यक्ति को शरीर उपलब्ध होता है। ये जो जीवकोष्ठ हैं, ये जो सेल्स हैं, ये शरीर के ही हिस्से हैं। जैविक, बायोलॉजिकल हिस्सा हम सबकी आंखों में प्रत्यक्ष है—जिसे हम वीर्य कहें, यौन-ऊर्जा कहें या कोई और नाम दें। लेकिन एक और पहलू भी उसके पीछे जुड़ा है जो आत्मगत है, शक्तिगत है। उसे मैं काम-ऊर्जा या आत्म-ऊर्जा या जो भी हम नाम देना चाहें, दे सकते हैं।

जैसे कि एक लोहे का चुंबक होता है। एक तो लोहे का टुकड़ा होता है जो साफ दिखाई पड़ता है और एक मैगनेटिक फील्ड होता है उसके चारों तरफ, जो दिखाई नहीं पड़ता है। लेकिन अगर हम आसपास लोहे के टुकड़े रखें, तो वह जो मैगनेटिक शक्ति है चुंबक की, उसे खींच लेती है। एक क्षेत्र है जिसके भीतर वह शक्ति काम करती है।

यह जमीन हमें खींचे हुए है, लेकिन उसका हमें पता नहीं चलता है। क्योंकि वह दिखाई पड़ने वाली बात नहीं है। जो दिखाई पड़ती है, वह जमीन है; जो नहीं दिखाई पड़ता है, वह उसका ग्रेविटेशन है। जो दिखाई पड़ता है, वह शरीर है; वह जो नहीं दिखाई पड़ता है, वह मनस और आत्मा है।

ठीक ऐसे ही काम के साथ, यौन के साथ दो पहलुओं को समझ लेना जरूरी है। जो दिखाई पड़ते हैं, वे जैविक कोष्ठ हैं; जो नहीं दिखाई पड़ती है, वह काम-ऊर्जा है। इस सत्य को ठीक से न समझने से आगे बातें फैला कर देखनी कठिन हो जाती हैं।

इस देश के योगियों ने कहा है कि काम-ऊर्जा, सेक्स-एनर्जी, नीचे से ऊपर की तरफ ऊर्ध्वगमन कर सकती है। वैज्ञानिक कहता है, हम शरीर में काट कर भी देख लेते हैं योगी के, लेकिन उसके वीर्य-कण तो वहीं पड़े रहते हैं। उसी जगह, जहां साधारण आदमी के शरीर में पड़े होते हैं। वीर्य ऊपर चढ़ता हुआ दिखाई नहीं पड़ता है।

वीर्य ऊपर चढ़ता भी नहीं है, चढ़ भी नहीं सकता। लेकिन जिस काम-ऊर्जा के चढ़ने की बात की है, उसे हम समझ नहीं पाए। वीर्य-कणों की वह बात नहीं है, वीर्य-कणों के साथ एक और ऊर्जा जुड़ी है, जो दिखाई नहीं पड़ती है, वह ऊर्जा ऊपर ऊर्ध्वगमन कर सकती है। और जब कोई व्यक्ति यौन-संबंध से गुजरता है, तो उसके जैविक परमाणु तो उसके शरीर को छोड़ते ही हैं, साथ ही उसकी काम-ऊर्जा, उसकी

सेक्स-एनर्जी भी उसके शरीर से बाहर जाती है। वह सेक्स-एनर्जी आकाश में खो जाती है। और यौन-कण नये व्यक्ति को जन्म देने की यात्रा पर निकल जाते हैं।

संभोग के क्षण में दो घटनाएं घटती हैं—एक जैविक और एक साइकिक। एक तो जीव-शास्त्रीय दृष्टि से घटना घटती है, जैसा कि बायोलॉजिस्ट अध्ययन कर रहा है, वह वीर्य-कण का स्खलन है। वह वीर्य-कण का यात्रा पर निकलना है अपने विरोधी कणों की खोज में, जिससे कि नये जीवन को वह जन्म दे पाए। और एक दूसरी घटना है। जिसकी योग खोज करता है, वह दूसरी घटना है। इस कृत्य के साथ ही मनस की शक्ति भी स्खलित होती है। वह तो सिर्फ शून्य में खो जाती है।

इस मनस-शक्ति को ऊपर ले जाने के उपाय हैं। और जब वीर्य के ऊर्ध्वगमन की बात कही जाती है, तो कोई शरीर-शास्त्री, कोई डाक्टर भूल कर यह न समझे कि वह वीर्य की, या वीर्य-कणों के ऊपर ले जाने की बात है। वीर्य-कण ऊपर नहीं जा सकते। उनके लिए कोई मार्ग नहीं है शरीर में ऊपर। सहस्रार तक तथा मस्तिष्क तक पहुंचने के लिए कोई उपाय नहीं है उनके पास। जो चीज जाती है वह ऊर्जा है। वह मैगनेटिक फोर्स है जो ऊपर की तरफ जाती है। यह जो मैगनेटिक फोर्स है, इसके ही नीचे जाने पर वीर्य-कण भी सक्रिय होते हैं।

यह जो काम-ऊर्जा है, यह अनंत है। महावीर ने उसे अनंत वीर्य कहा है। असल में महावीर को नाम ही महावीर इसीलिए मिला क्योंकि उन्होंने कहा कि यह अनंत वीर्य...अनंत वीर्य से अर्थ, जैविक वीर्य से नहीं, सीमेन से नहीं है। अनंत वीर्य से अर्थ उस काम-ऊर्जा का है जो निरंतर मन से शरीर तक उतरती है। और जो मन से शरीर तक उतरती है, वह मन से नहीं आती है। वह आती है आत्मा से मन तक और मन से शरीर तक। यह आत्मा से मन तक उतरेगी और मन से शरीर तक उतरेगी। यह उसकी सीढ़ियां हैं। इसके बिना वह उतर नहीं सकती। अगर बीच में से मन टूट जाए, तो आत्मा और शरीर के बीच सारे संबंध टूट जाएंगे।

जिस शक्ति को मैं काम-ऊर्जा कह रहा हूं, जिस शक्ति को योग ने और तंत्र ने काम-ऊर्जा कहा है, वह जीव-शास्त्रीय काम-ऊर्जा नहीं है। यह काम-ऊर्जा ऊपर की तरफ पुनः गति कर सकती है। और अगर किसी वृद्ध में भी यह काम-ऊर्जा ऊपर की तरफ गति कर जाए, तो उसकी जिंदगी उतनी ही सरल और इनोसेंट और निर्दोष हो जाएगी, जितनी छोटे बच्चे की थी। उसकी आंखों में फिर वही सरलता झलकने लगेगी। उसके व्यक्तित्व में फिर वही भोलापन लौट आएगा जो छोटे बच्चे का था।

एक बार अपरिपक्व मन जब काम की दुनिया में उतर जाता है, यौन की दुनिया में उतर जाता है, तो जीवन भर जब भी शक्ति इकट्ठी होती है, लीस्ट रेसिस्टेंस का नियम मान कर वह उसी मार्ग से बह जाने की तत्परता दिखलाती है। और जब तक नहीं बह जाती तब तक भीतर पीड़ा, परेशानी अनुभव होती है। और जब बह जाती है तो रिलीफ मालूम होता है। जैसे हलका हो गया मन, भार से हम मुक्त हो गए। लेकिन एक बार अगर ऊपर की तरफ जाने वाला मार्ग खुल जाए तो फिर निरंतर उसका स्मरण आता रहता है। किस विधि से मन यौन-ऊर्जा को ऊर्ध्वगामी बना सकता है, तीन बातें इस संबंध में समझ लेनी जरूरी हैं।

पहली बात तो यह समझ लेनी जरूरी है कि जो भी चीज नीचे जा सकती है वह चीज ऊपर भी जा सकती है। इसे वैज्ञानिक सूत्र समझा जा सकता है। असल में जिस चीज का भी नीचे जाने का उपाय है, उसके ऊपर जाने का भी उपाय होगा ही, चाहे हमें पता हो, चाहे हमें पता न हो। जिस रास्ते से हम नीचे जा सकते हैं, उसी रास्ते से ऊपर भी जा सकते हैं। रास्ता वही होता है, सिर्फ रुख बदलना होता है।

यौन-ऊर्जा नीचे की तरफ सहज आती है। प्रकृति की तरफ से आती है। अगर किसी मनुष्य को उस ऊर्जा को ऊपर ले जाना है, तो यह सहज नहीं होगा। प्रकृति की तरफ से नहीं होगा। यह संकल्प से होगा। यह मनुष्य के प्रयास, मनुष्य की आकांक्षा और अभीप्सा और श्रम से होगा। मनुष्य को इस दिशा में श्रम करना पड़ेगा, क्योंकि प्रकृति से उलटी दिशा में बहना पड़ेगा।

नदी में अगर नीचे की तरफ बहना हो, सागर की तरफ, तब तैरने की कोई भी जरूरत नहीं है। तब हम हाथ-पैर छोड़ कर सागर की तरफ बह सकते हैं। नदी ही सागर की तरफ ले जाएगी, हमें कुछ भी करना नहीं। लेकिन, अगर नदी के मूल स्रोत की तरफ, उदगम की तरफ जाना हो, तो फिर तैरना पड़ेगा, श्रम उठाना पड़ेगा। फिर एक संघर्ष होगा। नदी की धारा से संघर्ष होगा।

तो जो लोग भी ऊपर की तरफ जाना चाहते हैं, उन्हें दूसरी बात समझ लेनी चाहिए कि संकल्प और संघर्ष मार्ग होगा। ऊपर जाया जा सकता है, और ऊपर जाने के अपूर्व आनंद हैं। क्योंकि नीचे जाकर जब सुख मिलता है—क्षणिक ही सही, पर मिलता है—तो ऊपर जाकर क्या मिल सकता है, उसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

यौन-ऊर्जा नीचे बह कर जो लाती है वह सुख है, और यौन-ऊर्जा ऊपर उठ कर जो लाती है वह आनंद है। यौन-ऊर्जा नीचे जाकर जिसे लाती है वह क्षणिक है, क्योंकि वह घटना ही क्षणिक है। खोने की घटना क्षणिक ही होगी, संग्रहीत करने की घटना शाश्वत हो सकती है। नीचे जाकर आप खोते हैं, खोने की घटना क्षणिक है। एक क्षण को खोने का क्षण ही सब कुछ है। लेकिन ऊपर आप संग्रहीत करते हैं। ऊपर रिजर्वायर बनाते हैं। यह रिजर्वायर अनंत हो सकता है। वह रोज बढ़ता जाता है।

दूसरी बात, संकल्प और संघर्ष। संकल्प को थोड़ा समझना उपयोगी है कि संकल्प से क्या अर्थ है, और कैसे यह ऊर्जा संकल्प से ऊपर जा सकती है।

संकल्प, शक्तियों के रूपांतरण का नाम है। जब चित्त मांगता है यौन, जब चित्त मांगता है दूसरे को, अपोजिट को, स्त्री पुरुष को, पुरुष स्त्री को; जब चित्त मांगता है दूसरे की तरफ बहो, तब बहाव का रूपांतरण करना पड़ेगा। जब चित्त जिस ढंग से दूसरे को मांगता है उससे उलटी प्रक्रिया करनी पड़ेगी, ताकि चित्त की यह मांग परमात्मा की, मोक्ष की, निर्वाण की मांग बन जाए।

अब इसके लिए दो-तीन बातें खयाल में लेनी जरूरी हैं।

जैसे ही चित्त यौन की मांग करता है, सेक्स की मांग करता है, शरीर सेक्स की तैयारी करने लगता है। यौन-केंद्र मूलाधार से दूसरे की मांग की स्फुरणा शुरू हो जाती है। यौन-केंद्र बहिर्गामी हो जाता है। इस क्षण में, तंत्र कहता है कि अगर यौन-केंद्र को अंतर्गामी किया जा सके, भीतर की तरफ खींचा जा सके—जिसे 'यौन-मुद्रा' का नाम दिया है—अगर यौन-केंद्र मूलाधार को भीतर की तरफ खींचा जा सके, तो तत्काल आप दो क्षण में पाएंगे कि शरीर ने यौन की मांग बंद कर दी। मांग लेकिन पैदा हो गई थी। शक्ति जग गई थी, और अब मांग बंद हो गई। इस शक्ति को ऊपर ले जाया जा सकता है।

जैसे ही हम सेक्स का विचार करते हैं, वैसे ही हमारा चित्त जननेंद्रिय की तरफ बहने लगता है। तो तुरंत जननेंद्रिय को भीतर की ओर खींच लेते ही जननेंद्रिय से बाहर जाने वाले सब द्वार बंद हो जाते हैं। और जो ऊर्जा जग गई है, अगर उस क्षण में हम आंखों को बंद कर लें और आंख बंद करके सिर की छत की तरफ, अंदर से जैसे ऊपर की तरफ देख रहे हों, देखना शुरू कर दें, तो ऊर्जा ऊपर की तरफ बहना शुरू हो जाती है।

यह एक महीने भर के प्रयोग से अभूतपूर्व अनुभव में किसी भी व्यक्ति को उतार दिया जा सकता है। जब भी यौन का खयाल उठे तभी यौन-केंद्र को, मूलाधार को भीतर की ओर खींच लें, आंख बंद करें और सिर की छत की तरफ अंदर से जैसे ऊपर देख रहे हों, देखना शुरू कर दें। और आप एक महीने भर के भीतर, इक्कीस दिन के भीतर पाएंगे कि आपके भीतर से कोई चीज नीचे से ऊपर की तरफ जानी शुरू हो गई है।

यह वस्तुतः अनुभव होगा कि कोई चीज ऊपर बहने लगी, कोई चीज ऊपर उठने लगी। उसे कोई कुंडलिनी का नाम कहता है, उसे कोई और कोई नाम दे सकता है।

इसमें दो बिंदुओं पर ध्यान देना जरूरी है। एक तो सेक्स-सेंटर पर, मूलाधार पर, और दूसरे सहस्रार पर। सहस्रार हमारे ऊपर का केंद्र है सबसे ऊपर, और मूलाधार हमारे सबसे नीचे का केंद्र है। मूलाधार को सिकोड़ लें भीतर की तरफ। तो उसमें जो शक्ति पैदा हुई है, वह शक्ति मार्ग खोज रही है। और अपने चित्त को ले जाएं ऊपर की तरफ, तो वही मार्ग खुला रह जाता है। चित्त जिस तरफ देखता है, उसी तरफ शरीर की शक्ति बहनी शुरू हो जाती है। यह ट्रांसफॉर्मेशन की छोटी सी विधि है।

तो इसका अगर प्रयोग करें तो ब्रह्मचर्य बिना सप्रेशन के फलीभूत होता है। यह सप्रेशन नहीं है, यह सब्लिमेशन है। यह दमन नहीं है। दमन का तो मतलब है कि ऊपर का द्वार नहीं खुला है और नीचे के द्वार पर रोके चले जा रहे हैं। तब उपद्रव होगा, तब विक्षिप्तता होगी, पागलपन होगा। अगर मार्ग भी है शक्ति के लिए, तो दमन नहीं होगा, सिर्फ ऊर्ध्वगमन होगा। शक्ति नीचे से ऊपर की तरफ उठनी शुरू हो जाएगी।

यह तो प्रायोगिक बात मैंने आपसे कही। यह प्रयोग करें और समझें। यह कोई सैद्धांतिक बात नहीं है। न कोई बौद्धिक या शास्त्रीय बात है। यह करोड़ों लोगों की अनुभूत घटना है और सरलतम प्रयोग है। कठिन बहुत नहीं है। और एक बार मस्तिष्क के ऊपरी छोरों पर रस के फूल खिलने शुरू हो जाएं, तो आपकी जिंदगी से यौन विदा होने लगेगा। वह धीरे-धीरे खो जाएगा और एक नई ही ऊर्जा का, नई शक्ति का, एक नये ही वीर्य का, एक नई दीप्ति का, एक नये आलोक का एक नया संसार शुरू हो जाता है।

फिजिओलॉजिस्ट से इसका कोई लेना-देना नहीं है। जो शक्ति ऊपर उठेगी, उसे अगर हम शरीर को काट कर देखें, तो वह कहीं भी नहीं मिलेगी। वह मैगनेटिक फील्ड की तरह है। अगर हम हड्डियों को तोड़ें-फोड़ें तो उसका कहीं भी सुराग नहीं मिलेगा, कहीं उसका कोई पता नहीं चलेगा। वह शारीरिक घटना नहीं है। वह घटना साइकिक है। वह घटना मनस में घटती है, शरीर के तल पर लेकिन अंतर पड़ने शुरू हो जाएंगे। क्योंकि उस शक्ति के नीचे प्रवाहित होने पर शरीर के वीर्य-कणों का भी प्रवाह बाहर की तरफ होता है। यदि वह शक्ति नीचे नहीं बहेगी, तो शरीर के वीर्य-कण भी बाहर की ओर बहने बंद हो जाएंगे। शरीर भी संरक्षित होगा, लेकिन शरीर के संरक्षण के लिए यह प्रयोग नहीं है।

शरीर किसी भी तरह संरक्षित हो या न हो, क्योंकि शरीर की उम्र है, और वह मरेगा, और सड़ेगा। वह जाएगा। जन्म और मृत्यु के बीच फासला जितना है, वह पूरा कर लेगा। बड़ी जो घटना घटेगी वह साइकिक-एनर्जी की है। वह मनस-ऊर्जा की है। और जितनी मनस-ऊर्जा व्यक्ति के पास हो, उतना ही व्यक्ति का विस्तार होने लगता है, उतना ही वह फैलने लगता है, उतना ही वह विराट होने लगता है। और जिस दिन एक कण भी व्यक्ति की मनस-ऊर्जा का नीचे की तरफ प्रवाहित नहीं होता, उसी दिन व्यक्ति घोषणा कर सकता है, अहं ब्रह्मास्मि। वह कह सकता है, मैं ब्रह्म हूं।

यह 'अहं ब्रह्मास्मि' की घोषणा कोई तार्किक निष्पत्ति, कोई लॉजिकल कनक्लूजन नहीं है। यह एक

एग्जिस्टेंशिअल कनक्लूजन है। यह एक अस्तित्वगत अनुभव है। जिस दिन विराट से संबंध होता है, उस दिन पता चलता है कि मैं व्यक्ति नहीं हूं, विराट हूं। लेकिन यह विराट का अनुभव विराट शक्ति के संरक्षण से हो सकता है। और इस शक्ति का संरक्षण, जब तक काम-ऊर्जा ऊपर की तरफ प्रवाहित न हो, तब तक असंभव है।

33

मूलबंध : ब्रह्मचर्य-उपलब्धि की सरलतम विधि

जीवन ऊर्जा है, शक्ति है। लेकिन साधारणतः तुम्हारी जीवन-ऊर्जा नीचे की ओर प्रवाहित हो रही है। इसलिए तुम्हारी सब जीवन-ऊर्जा अनंत कामवासना बन जाती है। कामवासना तुम्हारा निम्नतम चक्र है। तुम्हारी ऊर्जा नीचे गिर रही है। और सारी ऊर्जा धीरे-धीरे काम-केंद्र पर इकट्ठी हो जाती है। इसलिए तुम्हारी सारी शक्ति कामवासना बन जाती है।

वह जो मूलाधार चक्र है—जहां से ऊर्जा काम-ऊर्जा बनती है, उसे बांध लेना है। उसे सिकोड़ लेना है। इसलिए योग ने, पतंजलि ने, हठयोग ने, बहुत सी प्रक्रियाएं खोजी हैं 'मूल' को बांधने की। मूल जब बंध जाए, तो ऊर्जा अपने आप ऊपर उठने लगती है; क्योंकि नीचे का द्वार बंद हो जाता है। द्वार अवरुद्ध हो जाता है।

एक छोटा सा प्रयोग, जब भी तुम्हारे मन में कामवासना उठे तो करो। तो धीरे-धीरे तुम्हें राह साफ हो जाएगी। जब भी तुम्हें लगे कि कामवासना तुम्हें पकड़ रही है, तब डरो मत। शांत होकर बैठ जाओ। जोर से श्वास को बाहर फेंको—उच्छवास। भीतर मत लो श्वास को—क्योंकि जैसे भी तुम भीतर गहरी श्वास को लोगे, भीतर जाती श्वास काम-ऊर्जा को नीचे की तरफ धकाती है।

जब तुम्हें कामवासना पकड़े, तब एक्सहेल करो, बाहर फेंको श्वास को। नाभि को भीतर खींचो, पेट को भीतर लो और श्वास को बाहर फेंको।...जितनी फेंक सको। धीरे-धीरे अभ्यास होने पर तुम संपूर्ण रूप से श्वास को बाहर फेंकने में सफल हो जाओगे।

जब सारी श्वास बाहर फिंक जाती है, तो तुम्हारा पेट और नाभि वैक्यूम हो जाते हैं, शून्य हो जाते हैं। और जहां कहीं शून्य हो जाता है, वहां आसपास की ऊर्जा शून्य की तरफ प्रवाहित होने लगती है। शून्य खींचता है; क्योंकि प्रकृति शून्य को बरदाश्त नहीं करती, शून्य को भरती है। तुम्हारी नाभि के पास शून्य हो जाए, तो मूलाधार से ऊर्जा तत्क्षण नाभि की तरफ उठ जाती है। और तुम्हें बड़ा रस मिलेगा—जब तुम पहली दफा अनुभव करोगे कि एक गहन ऊर्जा बाण की तरह आकर नाभि में उठ गई। तुम पाओगे, सारा तन एक

गहन स्वास्थ्य से भर गया। एक ताजगी! यह ताजगी वैसी ही होगी, ठीक वैसा ही अनुभव होगा ताजगी का, जैसा संभोग के बाद उदासी का होता है। जैसे ऊर्जा के स्खलन के बाद एक शिथिलता पकड़ लेती है।

संभोग के बाद जैसे विषाद का अनुभव होगा, वैसे ही अगर ऊर्जा नाभि की तरफ उठ जाए, तो तुम्हें हर्ष का अनुभव होगा। एक प्रफुल्लता घेर लेगी। ऊर्जा का रूपांतरण शुरू हुआ। तुम ज्यादा शक्तिशाली, ज्यादा सौमनस्यपूर्ण, ज्यादा उत्फुल्ल, सक्रिय, अन-थके, विश्रामपूर्ण मालूम पड़ोगे। जैसे गहरी नींद के बाद उठे हो। ताजगी आ गई।

इसलिए जो लोग भी मूलाधार से शक्ति को सक्रिय कर लेते हैं, उनकी नींद कम हो जाती है। जरूरत नहीं रह जाती। वे थोड़े घंटे सोकर भी, उठते ही ताजे हो जाते हैं। ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन बड़ा अनूठा अनुभव है। और पहला अनुभव होता है, मूलाधार से नाभि की तरफ जब संक्रमण होता है।

यह मूलबंध की सहजतम प्रक्रिया है कि तुम श्वास को बाहर फेंक दो। नाभि शून्य हो जाएगी, ऊर्जा उठेगी नाभि की तरफ, मूलबंध का द्वार अपने आप बंद हो जाएगा। वह द्वार खुलता है ऊर्जा के धक्के से। जब ऊर्जा मूलाधार में नहीं रह जाती, धक्का नहीं पड़ता, द्वार बंद हो जाता है।

इसे अगर तुम निरंतर करते रहे, अगर इसे तुमने एक सतत साधना बना ली—और इसका कोई पता किसी को नहीं चलता; तुम इसे बाजार में खड़े हुए कर सकते हो, किसी को पता भी नहीं चलेगा; तुम दुकान पर बैठे हुए कर सकते हो, किसी को पता भी नहीं चलेगा। अगर एक व्यक्ति दिन में कम से कम तीन सौ बार, क्षण भर को भी मूलबंध लगा ले, कुछ ही महीनों के बाद पाएगा, कामवासना तिरोहित हो गई। काम-ऊर्जा रह गई, वासना तिरोहित हो गई।

और तीन सौ बार करना बहुत कठिन नहीं है। यह मैं सुगमतम मार्ग कह रहा हूं, जो ब्रह्मचर्य की उपलब्धि का हो सकता है। फिर और कठिन मार्ग हैं, जिनके लिए सारा जीवन छोड़ कर जाना पड़ेगा। पर कोई जरूरत नहीं है। यह किसी को पता भी नहीं चलेगा कि कब तुमने श्वास बाहर फेंक दी—बाजार में अपनी दुकान पर, कुर्सी पर दफ्तर में बैठे हुए, कब तुमने चुपचाप अपने पेट को भीतर खींच लिया। एक क्षण में ऊर्जा ऊपर की तरफ स्फुरण कर जाती है। और तुम पाओगे कि उसके बाद घड़ी, आधा घड़ी के लिए तुम एकदम शांत हो गए, हलके हो गए, एक नई ताजगी आ गई।

बस, तुमने अगर एक बात सीख ली कि ऊर्जा कैसे नाभि तक जाए, शेष तुम्हें चिंता नहीं करनी है। तुम ऊर्जा को, जब भी कामवासना उठे, नाभि में इकट्ठा करते जाओ। जैसे-जैसे ऊर्जा बढ़ेगी नाभि में, अपने आप ऊपर की तरफ उठने लगेगी। जैसे बर्तन में पानी बढ़ता जाए, तो पानी की सतह ऊपर उठती जाए।

असली बात मूलाधार का बंद हो जाना है। घड़े के नीचे का छेद बंद हो गया, अब ऊर्जा इकट्ठी होती जाएगी। घड़ा अपने आप भरता जाएगा। एक दिन तुम अचानक पाओगे कि धीरे-धीरे नाभि के ऊपर ऊर्जा आ रही है। तुम्हारा हृदय एक नई संवेदना से आप्लावित हुआ जा रहा है।

जिस दिन हृदय-चक्र पर आएगी तुम्हारी ऊर्जा, तुम पाओगे, भर गए तुम प्रेम से। तुम जहां भी उठोगे, बैठोगे, तुम्हारे चारों तरफ एक हवा बहने लगेगी प्रेम की। दूसरे लोग भी अनुभव करेंगे कि तुममें कुछ बदल गया है। तुम अब वही नहीं हो। तुम कोई और ही तरंग लेकर आते हो। तुम्हारे साथ कुछ और ही लहर आती है—कि उदास प्रसन्न हो जाता है, कि दुखी थोड़ी देर को दुख को भूल जाता है, कि अशांत शांत हो जाता है, कि तुम जहां छू देते हो, जिसे छू देते हो, उस पर ही एक छोटी सी वर्षा प्रेम की हो जाती है। लेकिन, हृदय में ऊर्जा आएगी, तभी यह होगा।

ऊर्जा जब बढ़ेगी, हृदय से कंठ में आएगी, तब तुम्हारी वाणी में एक माधुर्य आ जाएगा। तब तुम्हारी वाणी में एक संगीत, एक सौंदर्य आ जाएगा। तुम साधारण से शब्द बोलोगे और उन शब्दों में काव्य होगा। तुम दो शब्द किसी से कह दोगे और तुम उसे तृप्त कर दोगे। तुम चुप भी रहोगे, तो तुम्हारे मौन में भी संदेश छिप जाएंगे। तुम न भी बोलोगे, तो भी तुम्हारा अस्तित्व बोलेगा। ऊर्जा कंठ पर आ गई।

ऊर्जा ऊपर उठती जाती है। एक घड़ी आती है कि तुम्हारे तीसरे नेत्र पर ऊर्जा का आविर्भाव होता है। तब तुम्हें पहली दफा दिखाई पड़ना शुरू होता है। तुम अंधे नहीं होते। उसके पहले तुम अंधे हो। क्योंकि उसके पहले तुम्हें आकार दिखाई पड़ते हैं, निराकार नहीं दिखाई पड़ता; और वही असली में है। सब आकारों में छिपा है निराकार। आकार तो मूलाधार में बंधी हुई ऊर्जा के कारण दिखाई पड़ते हैं। अन्यथा कोई आकार नहीं है।

मूलाधार अंधा चक्र है। इसलिए तो हम कामवासना को अंधी कहते हैं। वह अंधी है। उसके पास आंख बिलकुल नहीं है। आंख तो खुलती है—तुम्हारी असली आंख, जब तीसरे नेत्र पर ऊर्जा आकर प्रकट होती है। जब लहरें तीसरे नेत्र को छूने लगती हैं। तीसरे नेत्र के किनारे पर जब तुम्हारी ऊर्जा की लहरें आकर टकराने लगती हैं, पहली दफा तुम्हारे भीतर दर्शन की क्षमता जगती है।

दर्शन की क्षमता, विचार की क्षमता का नाम नहीं है। दर्शन की क्षमता देखने की क्षमता है। वह साक्षात्कार है। जब बुद्ध कुछ कहते हैं, तो देख कर कहते हैं। वह उनका अपना अनुभव है। अनानुभूत शब्दों का क्या अर्थ है? केवल अनुभूत शब्दों में सार्थकता होती है।

ऊर्जा जब तीसरी आंख में प्रवेश करती है, तो अनुभव शुरू होता है। और ऐसे व्यक्ति के वचनों में तर्क का बल नहीं होता, सत्य का बल होता है। ऐसे व्यक्ति के वचनों में एक प्रामाणिकता होती है, जो वचनों के भीतर से आती है। किन्हीं बाह्य प्रमाणों के आधार पर नहीं। ऐसे व्यक्ति के वचन को ही हम शास्त्र कहते हैं। ऐसे व्यक्ति के वचन वेद बन जाते हैं। जिसने जाना है, जिसने जीया है, जिसने परमात्मा को चखा है, जिसने पीया है, जिसने परमात्मा को पचाया है, जो परमात्मा के साथ एक हो गया है।

फिर ऊर्जा और ऊपर जाती है। सहस्रार को छूती है। पहला सबसे नीचा केंद्र, चक्र है, मूलबंधः मूलाधार। और सबसे अंतिम चक्र है, सहस्रार। उसे हम सहस्रार कहते हैं, आखिरी चक्र को, क्योंकि वह ऐसा है, जैसे सहस्र पंखुड़ियों वाला कमल। बड़ा सुंदर है। और जब खिलता है तो भीतर ऐसी ही प्रतीति होती है जैसे पूरा व्यक्तित्व सहस्र पंखुड़ियों वाला कमल हो गया है। पूरा व्यक्तित्व खिल गया।

जब ऊर्जा टकराती है सहस्र से, तो उसकी पंखुड़ियां खिलनी शुरू हो जाती हैं। सहस्रार के खिलते ही व्यक्तित्व से आनंद का झरना बहने लगता है। मीरा उसी क्षण नाचने लगती है। 'पग घुंघरू बांध मीरा नाची।' उसी क्षण चैतन्य महाप्रभु पागलों की तरह उन्मुक्त होकर नाचने लगते हैं। चेतना तो प्रसन्न होती ही है, रोआं-रोआं शरीर का आनंदित हो उठता है। आनंद की लहर ऐसी बहती है कि मुर्दा भी—शरीर तो मुर्दा है—वह भी नाचने लगता है।

34

कल्पना-भोग

किसी सुंदर युवती को देख कर जाने क्यों मन उसकी ओर आकर्षित हो जाता है, आंखें उसे निहारने लगती हैं! मेरी उम्र पचास हो गई है, फिर भी ऐसा क्यों होता है? क्या यह वासना है, या प्रेम, या सुंदरता की स्तुति? कृपया मेरा मार्ग-निर्देश करें।

ऐसा होता है निरंतर; क्योंकि जब दिन थे तब दबा लिया। तो रोग बार-बार उभरेगा। जब जवान थे, तब ऐसी किताबें पढ़ते रहे जिनमें लिखा है: ब्रह्मचर्य ही जीवन है। तब दबा लिया।

जवानी के साथ एक खूबी है कि जवानी के पास ताकत है—दबाने की भी ताकत है। वही ताकत भोग बनती है, वही ताकत दमन बन जाती है। लेकिन जवान दबा सकता है।

मेरे अनुभव में अक्सर ऐसी घटना घटती रही है, लोग आते रहे हैं, कि चालीस और पैंतालीस साल के बाद बड़ी मुश्किल खड़ी होती है, जिन्होंने भी दबाया। क्योंकि चालीस-पैंतालीस साल के बाद, वह ऊर्जा जो दबाने की थी वह भी क्षीण हो जाती है। तो वह जो दबाई गई वासनाएं थीं, वे उभरकर आती हैं। और जब बे-समय आती हैं तो और भी बेहूदी हो जाती हैं।

जिन मित्र ने पूछा है, उनको थोड़ा जाग कर अपने मन में पड़ी हुई, दबी हुई वासनाओं का अंतर्दर्शन करना होगा। अब मत दबाओ! कम से कम अब मत दबाओ! अभी तक दबाया और, उसका यह दुष्फल है। अब इस पर ध्यान करो। क्योंकि अब उम्र भी नहीं रही कि तुम स्त्रियों के पीछे दौड़ो या मैं तुमसे कहूं कि उनके पीछे दौड़ो। वह बात जंचेगी नहीं। अब जो जीवन में नहीं हो सका, उसे ध्यान में घटाओ।

अब एक घंटा रोज आंख बंद करके, कल्पना को खुली छूट दो। कल्पना को पूरी खुली छूट दो। वह किन्हीं पापों में ले जाए, जाने दो। तुम रोको मत। तुम साक्षी-भाव से उसे देखो कि यह मन जो-जो कर रहा है, मैं देखूं। जो शरीर के द्वारा नहीं कर पाए, वह मन के द्वारा पूरा हो जाने दो। तुम जल्दी ही पाओगे कुछ दिन के...एक घंटा नियम से कामवासना पर अभ्यास करो, कामवासना के लिए एक घंटा ध्यान में लगा दो, आंख बंद कर लो और जो-जो तुम्हारे मन में कल्पनाएं उठती हैं, सपने उठते हैं, जिनको तुम दबाते होओगे निश्चित ही—उनको प्रकट होने दो! घबराओ मत, क्योंकि तुम अकेले हो। किसी के साथ कोई तुम पाप कर भी नहीं रहे। किसी को तुम कोई चोट पहुंचा भी नहीं रहे। किसी के साथ तुम कोई अभद्र व्यवहार भी नहीं कर रहे कि किसी स्त्री को घूरकर देख रहे हो। तुम अपनी कल्पना को ही घूर रहे हो। लेकिन पूरी तरह घूरो। और उसमें कंजूसी मत करना।

मन बहुत बार कहेगा कि अरे, इस उम्र में यह क्या कर रहे हो! मन बहुत बार कहेगा कि यह तो पाप है! मन बहुत बार कहेगा कि शांत हो जाओ, कहां के विचारों में पड़े हो!

मगर इस मन की मत सुनना। कहना कि एक घंटा तो दिया है इसी ध्यान के लिए, इस पर ही ध्यान करेंगे। और एक घंटा जितनी स्त्रियों को, जितनी सुंदर स्त्रियों को, जितना सुंदर बना सको बना लेना। इस

एक घंटा जितना इस कल्पना-भोग में डूब सको, डूब जाना। और साथ-साथ पीछे खड़े देखते रहना कि मन क्या-क्या कर रहा है। बिना रोके, बिना निर्णय किए कि पाप है कि अपराध है। कुछ फिक्र मत करना। तो जल्दी ही तीन-चार महीने के निरंतर प्रयोग के बाद हलके हो जाओगे। वह मन से धुआं निकल जाएगा।

तब तुम अचानक पाओगे : बाहर स्त्रियां हैं, लेकिन तुम्हारे मन में देखने की कोई आकांक्षा नहीं रह गई। और जब तुम्हारे मन में किसी को देखने की आकांक्षा नहीं रह जाती, तब लोगों का सौंदर्य प्रकट होता है। वासना तो अंधा कर देती है, सौंदर्य को देखने कहां देती है! वासना ने कभी सौंदर्य जाना? वासना ने तो अपने ही सपने फैलाए।

और वासना दुष्पूर है; उसका कोई अंत नहीं है। वह बढ़ती ही चली जाती है।

तो थोड़ी सावधानी बरतनी पड़ेगी। आपरेशन से गुजरना होगा। और तुम्हीं कर सकते हो वह आपरेशन; कोई और कर नहीं सकता। तुम्हारा ध्यान ही तुम्हारी शल्यक्रिया होगी। तब एक घंटा रोज...। तुम चकित होओगे, अगर तुमने एक-दो महीने भी इस प्रक्रिया को बिना किसी विरोध के भीतर उठाए, बिना अपराध-भाव के निश्चिंत मन से किया, तो तुम अचानक पाओगे : धुएं की तरह कुछ बातें खो गईं! महीने दो महीने के बाद तुम पाओगे : तुम बैठे रहते हो, घड़ी बीत जाती है, कोई कल्पना नहीं आती, कोई वासना नहीं उठती। तब तुम अचानक पाओगे : अब तुम चलते हो बाहर, तुम्हारी आंखों का रंग और! अब तुम्हें सौंदर्य दिखाई पड़ेगा! क्योंकि सब सौंदर्य परमात्मा का सौंदर्य है। स्त्री का, पुरुष का कोई सौंदर्य होता है? फूल का, पत्ती का कोई सौंदर्य होता है? सौंदर्य कहीं से भी प्रकट हो; सौंदर्य परमात्मा का है, सौंदर्य सत्य का है। लेकिन सौंदर्य को देख ही वही पाता है, जिसने वासना को अपनी आंख से हटाया। वासना का पर्दा आंख पर पड़ा रहे, तुम सौंदर्य थोड़े ही देखते हो! सौंदर्य तुम देख ही नहीं सकते।

जब तुम वासना से किसी को देखते हो, व्यक्ति खो जाता है, वस्तु हो जाती है। इसलिए वासना की आंख को कोई पसंद नहीं करता। जब वासना खो जाती है तो सौंदर्य का अनुभव होता है। और जब सौंदर्य का अनुभव होता है, तो तुम्हारे भीतर प्रेम का आविर्भाव होता है।

तुम्हारा प्रेम प्रेम है? घृणा का ही बदला हुआ रूप मालूम पड़ता है। प्रेम सिर्फ तुम्हारी बातचीत है। प्रेम तो उनका अनुभव है जिनकी आंख से वासना गिर गई; जिन्हें सौंदर्य दिखाई पड़ा; जिसे सब तरफ उसके नृत्य का अनुभव हुआ; जिसे सब तरफ परमात्मा की पगध्वनि सुनाई पड़ने लगी। फिर प्रेम का आविर्भाव होता है। प्रेम यानी प्रार्थना। प्रेम यानी पूजा। प्रेम यानी अहोभाव, धन्यता, कृतज्ञता।

नहीं, अभी तुम्हें प्रेम का अनुभव नहीं हुआ। अभी तो तुमने वासना को भी नहीं जाना, प्रार्थना को तुम जानोगे कैसे? वासना को जानो, ताकि वासना से मुक्त हो जाओ। जब मैं निरंतर तुमसे कहता हूं, वासना को जानो, तो मैं यही कह रहा हूं कि वासना से मुक्त होने का एक ही उपाय है : उसे जान लो। जिसे हम जान लेते हैं, उसी से मुक्ति हो जाती है।

सत्य बड़ा क्रांतिकारी है। जान लेने के अतिरिक्त और कोई रूपांतरण नहीं है।

35

मैत्री : प्रभु-मंदिर का द्वार

मैत्री भाव का अर्थ है कि कोई दूसरा नहीं है। और दूसरा तब तक रहेगा जब तक मैं हूं, क्योंकि दूसरा सिर्फ मेरे 'मैं' की रिएक्शन है, उसकी प्रतिक्रिया है। जब तक 'मैं हूं,' तब तक 'तू है।' जिस दिन 'मैं' नहीं है उस दिन कोई 'तू' न रहा। जिस दिन कोई 'तू' न रहा उस दिन जो भाव जन्मेगा उस भाव का नाम है मैत्री, उसका नाम है फ्रेंडलीनेस। और जब कोई पराया न रहा, जब कोई अन्य न रहा, दि अदर, वह दूसरा न रहा, तब मैं किस तरह जीऊंगा? तब मैं किस तरह जीऊंगा—तब किसी रोते हुए आदमी के आंसू क्या मेरे आंसू नहीं हो जाएंगे? तब किसी आदमी की हंसती हुई मुस्कुराहट क्या मेरी मुस्कुराहट नहीं हो जाएगी? तब खिला हुआ फूल क्या मेरी खिली हुई आत्मा नहीं हो जाएगी? तब सागर की गरजती हुई लहरें क्या मेरा गर्जन न बन जाएंगी?

जब मैं नहीं हूं और तू नहीं है तो फिर जो रह गया वह सब एक है। और तब सक्रिय होती है करुणा। जब एक ही शेष रह गया, तब जो सक्रियता जीवन में पैदा होती है, तब मैं जो करता हूं, तब वह सभी कुछ मैत्रीपूर्ण है। तब जो भी मैं हूं—मेरा उठना-बैठना, मेरी श्वास, वह सभी मैत्रीपूर्ण है। तब जीवन के सारे दुख मेरे हैं और सारे सुख भी। तब जीवन के सारे आंसू मेरे हैं और सारी मुस्कुराहटें भी। तब जीवन और मैं एक हूं। वैसा जो तादात्म्य है, वैसा जो अद्वैत भाव है, उस अद्वैत भाव का नाम है मैत्री। इसलिए मैत्री दूसरा द्वार है।

कैसे पहुंचेंगे इस मैत्री के जगत तक? कैसे उठेंगे इस मित्रत्व में? कैसे उठेंगे इस एकता में? कैसे यह अद्वैत फलित होगा? कैसे तोड़ेंगे अपने को? तीन बातें ध्यान में रहें तो यह टूटना हो सकता है।

पहली बात, इस बात की अथक खोज चाहिए कि मैं हूं? इस बात की अथक खोज चाहिए—मैं हूं? मेरा कोई अलग होना है? मैं कोई अलग-थलग, कोई जीवन से टूटा हुआ, कोई खंड, कोई पृथकता है कहीं मेरे होने में—या कि एक अपृथक अस्तित्व है, एक इंटीग्रेटेड एग्जिस्टेंस है?

मैं श्वास ले रहा हूं, लेकिन श्वास तो मेरी नहीं है। यह जो चारों तरफ भरा हुआ श्वास का सागर है, ये जो हवाएं हैं, उनसे श्वास मुझ तक आती है और जाती है। अगर हवाएं बंद हो जाएं, इनकार कर दें कि बस बहुत हो गया, अब नहीं आदमियों से संबंध रखना है; तो मैं और आप तत्क्षण यहीं शून्य हो जाएंगे। जीवन विलीन हो जाएगा।

सूरज की किरणें आ रही हैं, बहुत लंबी यात्रा करके हम तक आती हैं, कोई आठ-नौ करोड़ मील दूर से। सूरज तय कर ले कि बस हो जाओ ठंडे, बहुत दिन हो गए! बहुत दिन हो गए और ठंडा हो जाए वहीं अभी; तो हमें पता भी नहीं चलेगा कि सूरज ठंडा हो गया है। क्योंकि उसके ठंडे होते ही हम भी ठंडे हो जाएंगे। वह जो ये दूर से आती हुई किरणें यहां गिर रही हैं आपके ऊपर, यह नौ करोड़ मील दूर से जीवन बरस रहा है। नौ करोड़ मील दूर से जीवन के सूत्र और धागे बंधे हैं। ये किरणें धागे हैं जीवन के। ये किरणें बंद और हम समाप्त! लेकिन हम कहे चले जाते हैं कि मैं हूं।

नहीं, मैं नहीं हूं। हवाएं हैं, सूरज है, पृथ्वी है, सब कुछ है—मैं कहां हूं! इन सबका अदभुत जोड़ है, इन सबका एक क्रास प्वाइंट है। इन सबसे मिल कर एक रूपाकृति है। उस रूपाकृति को यह भ्रम है कि मैं हूं।

व्यक्ति कहीं भी नहीं है। अनंत जीवन की ऊर्जा और शक्तियां कटती हैं और व्यक्ति निर्मित होता है। यह जो व्यक्ति अहंकार है, यह जो ईगो-सेंटर है, यह जो खयाल है कि मैं हूं, इसकी खोज करनी जरूरी है कि मैं हूं।

एक वृक्ष के पत्ते से हम पूछें, वह कहेगा कि मैं हूं, जरूर मैं हूं। उससे हम पूछें कि तुम्हारे पास की शाखा पर लगे हुए दूसरे पत्ते? वह कहेगा कि दूसरे हैं। क्योंकि उस पत्ते को कैसे पता हो सकता है कि बगल की पड़ोस में लगी शाखा पर जो पत्ते आए हैं वे उसी रस-स्रोत से आए हैं जिससे मैं आया हूं। मेरे प्राणों के धागे उसी शाखा से जुड़े हैं जिससे उनके प्राणों के धागे भी जुड़े हैं। हमारे प्राण एक ही ऊर्जा से निष्पन्न हुए हैं, प्रकट हुए हैं। एक पत्ते को कैसे पता चल सकता है?

लेकिन हम चूंकि बाहर खड़े हैं, हमें दिखाई पड़ता है कि पागल है यह पत्ता बहुत, कहता है कि मैं हूं और वह पत्ता दूसरा है और दोनों एक ही वृक्ष के पत्ते हैं। हम वृक्ष की शाखा से पूछें कि यह पड़ोस की शाखा? वह कहेगी, होगी कोई। हमेशा इससे डर लगा रहता है, न मालूम कैसी शत्रुता कर दे, न मालूम क्या कर दे। होगी कोई, मैं और हूं। शाखाओं को क्या पता हो सकता है? एक ही पेड़ से वे बंधी हैं। वृक्ष को हम पूछें कि यह जो पड़ोस में खड़ा हुआ वृक्ष है? वह कहेगा, है दूसरा, है शत्रु। लेकिन उस वृक्ष को क्या पता कि दोनों की जड़ें एक ही पृथ्वी से जुड़ी हैं और एक ही प्राण से संयुक्त हैं। और पृथ्वी को हम पूछें कि तुम? पृथ्वी भी कहेगी, मैं हूं, और ये चांद-तारे, और ग्रह-नक्षत्र होंगे दूसरे। लेकिन पृथ्वी को भी कैसे पता हो कि सारे चांद-तारे और सारे ग्रह-नक्षत्र किसी एक ही जीवन-ऊर्जा से संयुक्त हैं।

सारा जीवन एक से संयुक्त है। उस एक का नाम ही प्रभु है। और उस एक की तरफ जाने के लिए मैत्री दूसरा द्वार है, क्योंकि वह एकता में प्रवेश है। उस एक का नाम परमात्मा है और उस एकता की तरफ जो सबसे बड़ा कदम है वह है फ्रेंडलीनेस, वह है मैत्री। लेकिन मैत्री घटित होगी जब हम मैं को खोजने जाएंगे और पाएंगे कि 'मैं नहीं'। एक बात।

दूसरी बातः इसे केवल सोच लेना काफी नहीं है। आदमी अच्छी-अच्छी बातें सोच सकता है। सोच लेना पर्याप्त नहीं है, अनुभव से गुजरना भी जरूरी है। तो मैत्री सिर्फ एक फिलॉसफिक कंसेप्ट, एक दार्शनिक धारणा नहीं है। एक अनुभव, एक एक्सपीरिएंस, एक अनुभूति है।

तो जब यह लगे कि मैं नहीं हूं तो इसके थोड़े प्रयोग करने जरूरी हैं।

किसी वृक्ष के पास टिक कर बैठ गए हैं और तब यह अनुभव करना जरूरी है कि मैं नहीं हूं। और मैं आपसे कहता हूं कि किसी घड़ी में आपको लगेगा कि आप और वृक्ष एक हैं। सागर के तट पर बैठ कर यह अनुभव करना कि मैं नहीं हूं। और एकदम से हैरानी की धारा आएगी एक, और लगेगा कि मैं एक लहर हूं, लहर का गर्जन हूं। किसी फूल के पास बैठ कर यह अनुभव करना कि मैं नहीं हूं। और लगेगा कि भीतर कब फूल छा गया सारी आत्मा पर, रह गया फूल और मैं नहीं हूं! किसी व्यक्ति का हाथ हाथ में लेकर अनुभव करना कि मैं नहीं हूं। और पता चलेगा कि दोनों हाथ दो नहीं रहे, जुड़ गए कहीं किसी तल पर और एक रह गया है।

विचार के तल पर जानना है कि 'मैं नहीं हूं' और अनुभव के तल पर अनुभव करना है कि 'मैं नहीं

हूं' ताकि वह जोड़ एक जीवंत प्रतीति बन जाए। जीवन के चारों तरफ के विस्तार में जगह-जगह अनुभव करना है कि 'मैं नहीं हूं।'

भाव इतनी तीव्र एकता में ले जा सकता है! सोच ही नहीं लेना है, उसके प्रयोग करने हैं जीवन में कि वह गहरे में प्रविष्ट हो जाए और वहां पता चले। तब, तब एक बार पता चलेगा कि यह जो जीवन में सब तरफ घट रहा है, यह हमसे जुड़ा है; सिर्फ हमने मैत्री का संबंध नहीं जोड़ा है इसलिए धागे बीच में से कट गए हैं, एक दीवाल खड़ी हो गई है; अन्यथा जीवन बह रहा है, जा रहा है, आ रहा है! सारा जीवन एक है—मैत्री का दूसरा अनुभव!

और तीसरी बात: न केवल विचार पर्याप्त हैं, न केवल अनुभव; बल्कि तीसरी बात मैत्री के अनुभव का सक्रिय प्रकाशन। मैत्री का सक्रिय जीवन। उठते-बैठते, चलते-फिरते मैत्री का सक्रिय जीवन।

क्या अर्थ है मैत्री के सक्रिय जीवन का? धार्मिक जीवन उसी का नाम है। वह जो रिलीजस, धार्मिक जीवन जिसे कहें, वह मैत्री का जीवन है। मेरे कृत्य, मेरे विचार में, मेरे अनुभव में और मेरे कृत्य में मैत्री प्रविष्ट हो। मैं जो करूं वह मैत्री-प्रेरित हो। मैं जो करूं उसका एक ही आधार और एक ही कारण हो कि वह मैत्री है पीछे—मैं जीऊं तो मैत्री के लिए, मरूं तो मैत्री के लिए। मेरी श्वास उसके लिए चले, मेरा हृदय उसके लिए धड़के—सक्रिय मैत्री का तीसरा चरण।

चारों तरफ जीवन में कितना दुख है, कितनी पीड़ा है, कितनी चिंता है। चारों तरफ जीवन कितना कुरूप है, चारों तरफ जीवन कितना विकलांग है, चारों तरफ जीवन कितना पक्षाघात से घिरा है, चारों तरफ कितने घाव हैं, चारों तरफ कितनी पीड़ा का विस्तार है। मेरी मैत्री सक्रिय होनी चाहिए। एक छोटा सा घाव भी भर सकूं, एक छोटी सी पीड़ा दूर कर सकूं, एक छोटा सा कांटा किसी रास्ते से उठा सकूं, किसी मार्ग से एक पत्थर हटा सकूं, किसी के जीवन में एक सीढ़ी बना सकूं—कुछ भी जो मैं कर सकूं चारों तरफ के जीवन के लिए। मैत्री मेरी सक्रिय होनी चाहिए। तो मुझे मैत्री का उन तीनों आयामों में पूरा का पूरा, उनके तीनों डायमेंशन में मैत्री की ऊंचाई में, गहराई में, चौड़ाई में मेरा अनुभव होगा।

विचार में, अनुभव में, अभिव्यक्ति में जीवन की छोटी सी पीड़ा भी मैं दूर कर सकूं। नाम गिनाने की जरूरत नहीं है। हम सब जीवन की पीड़ाएं जानते हैं। चारों तरफ जीवन पीड़ा से भरा हुआ है। कोई बहुत बड़ा उपक्रम करने का भी सवाल नहीं है, क्योंकि एक छोटा सा गेस्चर, एक छोटा सा इशारा, आंख की एक मुस्कुराहट, किसी का हंस कर के स्वागत भी किसी की गहरी से गहरी पीड़ा को उतार दे सकता है। किसी को हाथ का छोटा सा स्पर्श भी न मालूम कितनी घनी पीड़ा का भार उतार दे सकता है। लेकिन हम मुस्कुराना भूल गए हैं। हमारी आंखों ने प्रेम बरसाना छोड़ दिया है। हमारे हाथों में वह पुलक नहीं उठती, हमारे प्राणों में वह गीत पैदा नहीं होता। वह हमें खयाल ही भूल गया है। हम पत्थर की तरह जी रहे हैं।

इस जीवन को चौबीस घंटे निरंतर उठने से सोने तक, चारों तरफ की पीड़ाओं का दर्शन करना है और चारों तरफ की पीड़ा से संवेदित होना है, चारों तरफ की पीड़ा से पीड़ित होना है। चारों तरफ के दुख और कांटों को प्रतीत करना है और जो बन सके प्रत्येक व्यक्ति से उन कांटों और उन पीड़ाओं को दूर करने का उपाय करना है—तो मैत्री सक्रिय बनती है।

जीवन है चारों तरफ बहुत दुख और पीड़ा से भरा हुआ। उसमें मैत्री के संस्करण, उसमें मैत्री की अभिव्यक्ति प्रकट होती रहनी चाहिए। और वह प्रत्येक व्यक्ति को अपने लिए चुनना होता है कि उसकी मैत्री किन-किन मार्गों से प्रकट हो और बहे।

तो ये तीन बातें मैत्री के संबंध में स्मरण रखनी जरूरी हैं। फिर से मैं दोहरा दूं, करुणा है निराकार। वह है आकाश में छा गया बादल जो पानी से भरा है। मैत्री है वर्षा, जो आ गई पृथ्वी तक और फैल गई पृथ्वी की जड़ों में। करुणा है भाव, मैत्री है क्रिया। करुणा है आत्मा, मैत्री है शरीर। करुणा भीतर जन्मती है, वह है केंद्र; मैत्री है अभिव्यक्ति, वह है परिधि। जिसकी करुणा मैत्री तक पहुंच जाती है वह भगवान के दूसरे द्वार में प्रविष्ट हो जाता है।

36

शांति-सूत्र : नियति की स्वीकृति

जीवन में छोटे-बड़े दुख के कारण कभी-कभी मन अशांत, निराश और बेचैन बन जाता है। तो संसार में ही रह कर मन सदा शांत, प्रसन्न और उत्साही कैसे रखें?

नियति की जो बात हम कर रहे हैं, उसे अगर ठीक से समझ लें, तो मन शांत हो जाएगा। और कोई भी उपाय मन को शांत करने का नहीं है। और सब उपाय ऊपरी-ऊपरी हैं, उनसे थोड़ी-बहुत राहत मिल सकती है, लेकिन मन शांत नहीं हो सकता।

लेकिन नियति की बात थोड़ी कठिन है, समझ में थोड़ी मुश्किल से पड़ती है। मन अशांत होता है। नियति का विचार कहेगा, उस अशांति को स्वीकार कर लें। उसके विपरीत शांत होने की कोशिश मत करें। मन उदास है। नियति का विचार कहेगा, उदासी को स्वीकार कर लें, प्रफुल्लित होने की चेष्टा न करें। क्योंकि असली अशांति अशांति के कारण नहीं, अशांति को दूर हटाने के विचार से पैदा होती है।

असली उदासी उदासी से नहीं, कैसे मैं प्रफुल्लित हो जाऊं, इस धारणा से, इस विचार से, इस आकांक्षा से पैदा होती है। उदासी को स्वीकार कर लें, और आप पाएंगे शीघ्र ही कि उदासी विलीन हो गई है। उसकी स्वीकृति में ही उसका अंत है।

कैसे दुखी न हों, यह न पूछें। दुखी हैं, दुख को स्वीकार कर लें। वह भाग्य। वह नियति। वह है। उससे लड़ें मत। उससे सब लड़ाई छोड़ दें। उसके पार जाने की आकांक्षा भी छोड़ दें। उससे विपरीत की मांग भी छोड़ दें। उसे स्वीकार कर लें कि यह मेरी नियति, यह मेरा भाग्य। मैं दुखी हूं, बात यहां पूरी हो गई। दुख से राजी हो जाएं और फिर देखें कि दुख कैसे टिक सकता है। अशांति को स्वीकार कर लें और आप शांत हो जाएंगे। हमारी अशांति अशांति नहीं है। हमारी अशांति शांति की चाह से पैदा होती है। इसलिए जो लोग शांति के लिए बहुत आकांक्षी हो जाते हैं, उनसे ज्यादा अशांत कोई भी नहीं होता।

मैं रोज न मालूम कितने लोगों को इस संबंध में इस उलझन में पड़ा हुआ देखता हूं। जिस दिन से

आपको खयाल हो जाता है कि शांत कैसे हों, उस दिन से आपकी अशांति बढ़ेगी। क्योंकि अशांति तो है ही, अब एक नई अशांति भी शुरू हो गई कि शांत कैसे हों!

और अशांत आदमी कैसे शांत हो सकता है? और अशांत आदमी पूजा भी करेगा, तो उसकी अशांति ही होगी उसकी पूजा में प्रकट। और अशांत आदमी ध्यान भी करेगा, तो उसका ध्यान भी उसकी अशांति से ही निकलेगा। अशांत आदमी मंदिर भी जाएगा, तो अपनी बेचैनी को साथ ले जाएगा। अशांत गीता भी पढ़ेगा, तो करेगा क्या? अशांति से अशांति ही निकल सकती है। इसलिए आप कुछ भी करें, करेगा कौन? वह जो अशांत है, वही कुछ करेगा।

ध्यान रहे, एक बहुत मनोवैज्ञानिक, आधारभूत नियम, कि अगर आप अशांत हैं, तो आप जो भी करेंगे, उससे अशांति बढ़ेगी। कौन करेगा? अशांत आदमी कुछ करेगा। वह और अशांति को दुगुनी कर लेगा, तीन गुनी कर लेगा।

ऐसा समझें कि एक लोभी आदमी है, वह लोभ छोड़ने की कोशिश कर रहा है। वह करेगा क्या? यह लोभ छोड़ने की कोशिश भी लोभ से ही निकलेगी। वह आदमी लोभी है। तो अगर कोई उसको विश्वास दिला दे कि अगर तू इतना दान करता है, तो स्वर्ग में तुझे भगवान के मकान के बिलकुल पास मकान मिल जाएगा। अगर यह पक्का हो जाए, तो वह दान कर सकता है। मगर यह दान लोभ से निकलेगा। स्वर्ग में जगह बिलकुल निश्चित हो जाए, यह लोभ! तो दान कर सकता है वह। मगर यह दान लोभ के विपरीत नहीं है, लोभ का हिस्सा है।

लोभी आदमी क्या करेगा? जो भी करेगा, वह लोभ के कारण ही कर सकता है। क्रोधी आदमी क्या करेगा? वह जो भी करेगा, क्रोध के कारण कर सकता है। आप जो हैं, उसके रहते आप जो भी करेंगे, वह आपसे ही निकलेगा। और अगर नीम से पत्ता निकलेगा, तो वह कड़वा होगा। और आपसे जो पत्ता निकलेगा, वह आपका ही स्वाद वाला होगा।

नियति का विचार यह कहता है कि आप कुछ करें मत। आप कर नहीं सकते कुछ, आप सिर्फ राजी हो जाएं। इसका प्रयोग करके देखें। अशांति आई है बहुत बार और आपने शांत होने की कोशिश की है और अब तक हो नहीं पाए हैं। इस दूसरे प्रयोग को करके देखें। अशांति आए, स्वीकार कर लें कि मैं अशांत हूं। मैं आदमी ऐसा हूं कि मुझे अशांति मिलेगी। मैंने ऐसा कर्म किया होगा कि मुझे अशांति मिल रही है। मेरी नियति में अशांति का ही पात्र हूं मैं, इसे स्वीकार कर लें। इस अशांति से रत्ती-मात्र संघर्ष न करें।

क्या होगा? जैसे ही आप स्वीकार करते हैं, अशांति तिरोहित होनी शुरू हो जाती है। क्योंकि स्वीकार का भाव ही उसकी मृत्यु बन जाता है। जिस चीज को हम स्वीकार कर लेते हैं, उसके हम पार हो जाते हैं। अशांत हैं, अशांति को स्वीकार कर लें, लड़ें मत। फिर देखें, क्या होता है। स्वीकृति क्रांतिकारी तत्व है। और जिस बात को हम स्वीकार कर लेते हैं, उससे छुटकारा उसी क्षण शुरू हो जाता है।

हमारा उपद्रव क्या है? सुख को हम पकड़ते हैं, दुख को हम पकड़ते नहीं। दुख से हम बचना चाहते हैं। सुख कहीं छूट न जाए, इस कोशिश में होते हैं। और हमें पता नहीं कि सुख और दुख एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। तो जब हम सुख को पकड़ते हैं, तब हमने दुख को पकड़ लिया, वह उसी का छिपा हुआ पहलू है। तो हम उलटा काम कर रहे हैं; सुख पकड़ना चाहते हैं, दुख को हटाना चाहते हैं। यह नहीं होगा। या तो दोनों को छोड़ दें, या दोनों के लिए राजी हो जाएं। दोनों हालत में आपके जीवन में क्रांति हो जाएगी।

लेकिन सुख-दुख तो हमारी समझ में आ जाते हैं। जब कोई आ जाता है, कहता है शांत-अशांति, तो लगता है यह कोई दूसरी बात कर रहा है। बात वही है। वही के वही सिक्के हैं। नाम बदल गए हैं।

आप शांति चाहते हैं। आप शांति चाहते हैं, इसलिए आपको अशांत होना पड़ेगा। क्योंकि वह दूसरा हिस्सा कौन स्वीकार करेगा? आप शांति पा लेंगे, तो अशांति कौन पाएगा? आधा हिस्सा कहां जाएगा? और सिक्के के दो पहलू अलग नहीं किए जा सकते।

आप अशांति को भी राजी हो जाएं, अगर शांति चाहते हैं। तो दोनों को राजी हो जाएं। दोनों के लिए राजी होने में ही क्रांति घट जाती है। क्योंकि साधारणतया मन दोनों के लिए राजी नहीं होता, एक के लिए राजी होता है। मन की तरकीब यह है कि आधे को पकड़ो, आधे को छोड़ो। यही मन का द्वंद्व है, यही उसका कष्ट है। जब आप दोनों के लिए राजी हो गए, आप मन के पार हो गए। या दोनों को छोड़ दें, या दोनों को पकड़ लें, दोनों एक ही बात है।

इसलिए जगत में दो उपाय हैं, दो विधियां हैं। परम अनुभूति के पाने की दो विधियां हैं। एक, दोनों को छोड़ दें—यह संन्यासी का मार्ग है। दोनों को पकड़ लें—यह गृहस्थ का मार्ग है। दोनों का परिणाम एक है। क्योंकि मन की तरकीब है, एक को पकड़ना और एक को छोड़ना। दोनों को छोड़ें, तो भी मन छूट जाता है। दोनों को पकड़ लें, तो भी मन छूट जाता है। क्योंकि मन आधे के साथ जी सकता है।

ये दो उपाय हैं। या तो दोनों छोड़ दें—सुख भी, दुख भी; शांति भी, अशांति भी—फिर आपको कोई अशांत न कर सकेगा। या दोनों पकड़ लें। दोनों पकड़ना 'सहज-योग' है।

इन मित्र ने यही पूछा है कि घर में, संसार में रहते हुए कैसे शांति पाऊं?

पहली बात, शांति पाने की कोशिश मत करें, अशांति को स्वीकार कर लें। आप शांत हो जाएंगे। फिर इस दुनिया में आपको कोई अशांत नहीं कर सकता।

अगर मैं अशांति के लिए राजी हूं, तो मुझे कौन अशांत कर सकेगा? अगर मैं गाली के लिए राजी हूं, तो कौन मेरा अपमान कर सकता है? मैं गाली के लिए राजी नहीं हूं, इसलिए कोई मेरा अपमान कर सकता है। मैं अशांति के लिए राजी नहीं हूं, इसलिए कोई भी अशांत कर सकता है। और जितना हम शांत होने की कोशिश करते हैं, उतने हम संवेदनशील हो जाते हैं।

अगर हम ठीक से मन की प्रक्रिया को समझ लें, तो मन की प्रक्रिया को समझकर जीवन बदला जाता है। प्रक्रिया यह है कि मन हमेशा चीजों को दो में तोड़ लेता है—मान-अपमान, सुख-दुख, शांति-अशांति, संसार-मोक्ष—दो में तोड़ लेता है। और कहता है, एक नहीं चाहिए, अरुचिकर है; और एक चाहिए, रुचिकर है। बस, यह मन का खेल है।

इस मन से बचने के दो उपाय हैं। या तो दोनों के लिए राजी हो जाएं, मन मर जाएगा। या दोनों को छोड़ दें, तो भी मन मर जाएगा। जो आपके लिए अनुकूल मालूम पड़े, वैसा कर लें। अन्यथा आपके शांत होने का फिर कोई उपाय नहीं है। जब तक आप शांत होना चाहते हैं, तब तक शांत न हो सकेंगे। जब तक आप सुखी होना चाहते हैं, दुख आपका भाग्य होगा। और जब तक मोक्ष के लिए पागल हैं, संसार आपकी परिक्रमा होगी। दोनों के लिए राजी हो जाएं। मांग ही छोड़ दें। कह दें, जो होता है, मैं राजी हूं।

इसका थोड़ा प्रयोग करके देखें, चौबीस घंटे, ज्यादा नहीं। लड़ने का प्रयोग तो आप हजारों जन्मों से कर रहे हैं। एक चौबीस घंटे तय कर लें कि आज सुबह छह बजे से कल सुबह छह बजे तक, जो भी होगा, उसको मैं स्वीकार कर लूंगा। जरा भी विरोध, द्वंद्व खड़ा नहीं करूंगा।

देखें, चौबीस घंटे में आपकी जिंदगी में एक नई हवा का प्रवेश हो जाएगा। जैसे कोई झरोखा अचानक खुल गया और ताजी हवा आपकी जिंदगी में आनी शुरू हो गई। फिर ये चौबीस घंटे कभी खत्म न होंगे। एक दफा इसका अनुभव हो जाए, फिर आप इसमें गहरे उतरने लगेंगे।

कोई विधि नहीं है शांत होने की, शांत होना जीवन-दृष्टि है। कोई मेथड नहीं होता कि राम-राम, राम-राम जप लिया और शांत हो गए। नहीं होंगे आप शांत। राम-राम की आपकी अशांति ही होगी। वह भी आप अशांत मन से ही जपते रहेंगे। वह भी आपकी बेचैनी और बुखार का सबूत होगा, और कुछ भी नहीं।

शांत हो जाएं। कैसे? अशांति को स्वीकार कर लें। दुख को स्वीकार कर लें। मृत्यु को स्वीकार कर लें, फिर आपकी कोई मृत्यु नहीं है। जिसे हम स्वीकार कर लेते हैं, उसके हम पार हो जाते हैं।

37

मौन और एकांत में इक्कीस दिवसीय प्रयोग

इक्कीस दिन के पूर्ण एकांत और मौन में श्वास के प्रति सजगता का अभ्यास सहायक है। इससे बहुत कुछ घटित होगा।

इक्कीस दिवसीय इस प्रयोग के दौरान दिन में एक बार सक्रिय ध्यान अवश्य करें और दिन के चौबीस घंटे श्वास के प्रति सतत सजग रहें। न कुछ पढ़ें, न लिखें, न सोचें। क्योंकि ये सभी क्रियाएं मनस-शरीर (मेंटल-बॉडी) की हैं; ये प्राण-शरीर (ईथरिक-बॉडी) से संबंधित नहीं हैं।

आप टहलने के लिए जा सकते हैं। टहलना सहयोगी है, क्योंकि टहलना प्राण-शरीर का हिस्सा है; सभी शारीरिक क्रियाएं प्राण-शरीर से संबंधित हैं। ये क्रियाएं करता तो भौतिक शरीर है, लेकिन ये प्राण-शरीर से संबंधित हैं। प्राण-शरीर से संबंधित सभी चीजें करनी चाहिए और मनस-शरीर से संबंधित सभी चीजें बिलकुल नहीं करनी चाहिए। आप दिन में एक-दो बार स्नान कर सकते हैं; यह भी प्राण-शरीर से संबंधित है।

और जब आप टहलने के लिए जाएं, तो बस टहलें। और कुछ भी न करें; बस टहलने का आनंद लें। और टहलते समय अपनी आंखें आधी खुली रखें। आधी खुली आंखें रास्ते के अलावा कुछ नहीं देख सकतीं, और रास्ता अपने आप में इतना नीरस है कि वह आपको सोचने के लिए कुछ नया नहीं देगा।

तो नीरसता के परिवेश में ही रहें—एक ही कमरे में, उसी फर्श को देखते हुए। वह इतना नीरस होना चाहिए कि आप उसके बारे में कुछ भी न सोच सकें। सोचने-विचारने के लिए उत्तेजना चाहिए;

चिंतन-मनन के लिए नई संवेदनाएं चाहिए। अगर आपके संवेदन-तंत्र को सदा ऊबा हुआ रखा जाए तो बाहर का कुछ भी सोचने को नहीं रह जाएगा।

पहले सप्ताह में हो सकता है नींद की आवश्यकता कम महसूस हो। इससे चिंतित न हों। क्योंकि आप सोच-विचार नहीं कर रहे हैं, ऐसी बहुत सी चीजें नहीं कर रहे हैं जिनमें साधारणतः हम उलझे रहते हैं, इसलिए नींद की आवश्यकता कम हो जाएगी। और अगर आप श्वास के प्रति निरंतर सजग रहे, तो इतनी ऊर्जा जगेगी, आप इतना जीवंत महसूस करेंगे कि नींद की जरूरत नहीं लगेगी। इसलिए अगर नींद आए तो ठीक है; अगर न आए तो भी ठीक है। अगर नींद नहीं आती है तो भी कोई नुकसान नहीं होगा।

इसके बहुत से कारण हैं कि क्यों श्वास के प्रति सजगता से हमारे भीतर इतनी अधिक ऊर्जा अनुभव होती है। एक तो कारण यह है कि जब हम श्वास पर ध्यान देते हैं तो श्वास लयबद्ध हो जाती है। वह अपने छंद में चलती है, एक तालमेल पैदा हो जाता है और पूरा अस्तित्व संगीतमय हो जाता है। यही लयबद्धता शक्ति का संरक्षण करती है।

साधारणतः हमारी श्वास लयबद्ध नहीं होती, अव्यवस्थित होती है। इसके कारण व्यर्थ ही ऊर्जा का अपव्यय हो जाता है। लयबद्धता ऊर्जा का एक भंडार निर्मित करती है। और क्योंकि आप निरंतर सजग हैं, श्वास पर ध्यान देने में बहुत कम ऊर्जा का उपयोग होता है। आप कुछ कर नहीं रहे हैं; यह कोई क्रिया नहीं है। आप तो बस सजग हैं।

जैसे ही आप कुछ करने लगते हैं, चाहे वह सोच-विचार ही क्यों न हो, क्रिया शुरू हो जाती है। अब ऊर्जा का अपव्यय होगा। यदि आप अपना शरीर भी हिलाते हैं, तो भी करना हो गया; ऊर्जा का अपव्यय होगा। चौबीसों घंटे की सतत सजगता का अर्थ हुआ बहुत कम मात्रा में शक्ति का अपव्यय, ताकि शक्ति का संरक्षण हो; आप अदम्य शक्ति का एक भंडार बन जाएं। यही शक्ति कुंडलिनी जागरण में उपयोग होगी।

साधारणतः, दिन में इतनी सारी ऊर्जा का अपव्यय हो जाता है कि कुंडलिनी जागरण के लिए वहां पर्याप्त ऊर्जा ही नहीं बचती। ऊर्जा के अधोगमन के लिए ज्यादा ऊर्जा की आवश्यकता नहीं है, लेकिन ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन के लिए आपके पास ऊर्जा का विशाल भंडार होना चाहिए, केवल तभी ऊपर के द्वार खुल सकते हैं, अन्यथा नहीं।

इसलिए जिनके पास बहुत थोड़ी ऊर्जा है, उनके लिए कामवासना का द्वार ही एकमात्र खुला द्वार है। आमतौर पर हम एक कामुक व्यक्ति को बहुत ऊर्जावान व्यक्ति की तरह सोचते हैं, पर ऐसा नहीं है। एक अति ऊर्जावान व्यक्ति कामुक नहीं होता। क्योंकि जब ऊर्जा अतिरेक में होती है तो वह ऊर्ध्वगमन करने लगती है। कामुकता के लिए भी ऊर्जा चाहिए, लेकिन बहुत थोड़ी सी मात्रा में। इतनी कम मात्रा में ऊर्जा ऊर्ध्वगमन नहीं कर सकती; इसलिए केवल अधोगमन, काम-केंद्र की ओर बहने की ही संभावना बचती है। ऊर्जा कहीं न कहीं तो बहेगी ही। वह स्थिर नहीं रह सकती; वह कहीं न कहीं बहेगी। अगर वह ऊर्ध्वगमन नहीं कर सकती, तो वह नीचे की ओर बहेगी; और कोई विकल्प नहीं है। अगर वह ऊपर की ओर गति करने लगे, तो अंततः नीचे का मार्ग अपने आप ही बंद हो जाएगा। ऐसा नहीं है कि आप काम-केंद्र से बह रही ऊर्जा को रोकेंगे, बल्कि वह अपने आप ही रुक जाएगी, क्योंकि ऊर्जा ऊपर की ओर गति कर रही है।

अगर आप अपनी श्वास पर सतत ध्यान दे रहे हैं, तो सभी अनावश्यक क्रियाएं रुक जाएंगी और

ऊर्जा का संरक्षण भी होगा। लेकिन साथ ही एक दूसरी बात भी है, और वह यह है कि वह ध्यान, वह होश, वह सजगता भी जीवन-शक्ति को और ज्यादा ओजपूर्ण बनाने में मदद करती है। यह ऐसे ही है जैसे कि कोई आपको देख रहा हो। अगर कोई आपको देख रहा हो, तो आपको ऊर्जा मिलती है; आलस्य तिरोहित हो जाता है।

इसीलिए नेतागण ऊर्जावान अनुभव करते हैं। भीड़ की आंखें उन पर लगी होती हैं, और वही भीड़ का ध्यान देना उन्हें ऊर्जावान बनाता है। जिस क्षण भीड़ उन्हें भूल जाती है, भीड़ के भूलते ही वे मुर्दे हो जाते हैं। नेता बनने का, लीडर बनने का, सेलिब्रिटी बनने का जो आनंद है, वह ओजस्विता के अनुभव के कारण है जो कि लोगों के देखने से आती है। यह जीवन-शक्ति किसी के देखने मात्र से ही नहीं आती, लेकिन इस कारण कि इतने सारे लोग आपको देख रहे हैं, तो आप अपने प्रति सजग हो जाते हैं, और यही सजगता जीवन-शक्ति बन जाती है।

तो जब आप अपनी श्वास के प्रति सजग होते हैं, जब आप अपने प्रति बोध से भरते हैं, तो जीवन-शक्ति का अंतरतम स्रोत स्पर्श होता है। इसलिए यदि नींद खो जाए तो उसके विषय में चिंतित न हों। वह स्वाभाविक है।

यदि आपके मन में उथल-पुथल होने लगे। यदि आपके मन में ऐसी चीजें आने लगें, जिनके बारे में आपने पहले कभी सोचा भी नहीं था—चित्र, कल्पनाएं—तब भी चिंतित न हों; केवल उन्हें देखते रहें। अचेतन में दबा हुआ बहुत कुछ मुक्त हो रहा है; इसको बाहर फेंकने से पहले इसका सचेतन मन में आना जरूरी है। अगर आप इनको दबा देंगे तो ये फिर से अचेतन में बैठ जाएंगी। दूसरी तरफ, अगर आप इनके प्रति बहुत चिंतित होते हैं तो अनावश्यक ही ऊर्जा का अपव्यय होगा। इसलिए बस अपनी श्वास पर ध्यान रखें और परिधि पर, पृष्ठभूमि में जो कुछ भी हो रहा हो उसे तटस्थ देखते रहें। जो कुछ भी हो रहा हो उसके प्रति बस उदासीन रहें, कोई भाव न लें; बस अपनी श्वास के प्रति साक्षी बने रहें।

आप अपनी श्वास के साक्षी रहेंगे, लेकिन परिधि पर चीजें घटती रहेंगी। विचार होंगे, कंपन होंगे—लेकिन केवल परिधि पर—केंद्र पर नहीं। केंद्र पर तो आप मात्र अपनी श्वास को देख रहे हैं। बहुत कुछ उभर कर सामने आएगा—बेतुकी, असंगत, अकल्पनीय, कल्पनातीत, काल्पनिक, दुःस्वप्न जैसी चीजें आएंगी। आप तो बस श्वास को देखते रहें। इन चीजों को आने और जाने दें; इनके प्रति उदासीन रहें। ऐसे ही जैसे कि आप टहलने जा रहे हैं। सड़क लोगों से भरी है, लोग गुजर रहे हैं, लेकिन आप उनके प्रति उदासीन हैं; आप उनसे तादात्म्य नहीं बनाते।

तो ये चित्र और कल्पनाएं मन के पर्दे पर उभरेंगी। और पहले सप्ताह के अंत तक एक नई शांति आपको अनुभव होगी। जैसे-जैसे अचेतन निर्भार होगा, भीतर कोई शोरगुल नहीं बचेगा। एक शांति आपको अनुभव होगी, एक गहन भीतरी शांति।

आपको उदासी भी पकड़ सकती है। यदि गहरी जड़ें जमाए कोई विषाद का भाव अचेतन में दबाया हुआ है, तो वह आएगा और आपको उदास कर जाएगा। यह एक विचार मात्र नहीं होगा, यह एक भाव-दशा होगी। केवल विचार ही नहीं आएंगे, बल्कि भाव-दशाएं भी आएंगी। किसी समय आप आनंदित अनुभव करेंगे, किसी समय आप उदास या नीरस अनुभव करेंगे। लेकिन इन भाव-दशाओं के प्रति भी उदासीन रहें जैसे कि विचारों के प्रति उदासीन हैं। उन्हें भी आने-जाने दें। वे भी अपने आप चली जाएंगी, इसलिए उनसे चिंतित न हों। भाव-दशाएं भी अचेतन में दबी हैं। इक्कीस दिवसीय प्रयोग के

दौरान वे निकल जाएंगी, और तब आप कुछ ऐसा अनुभव करेंगे जैसा कि पहले आपने कभी अनुभव नहीं किया होगा—कुछ नया, कुछ अज्ञात।

और प्रत्येक व्यक्ति कुछ भिन्न अनुभव करेगा। कई संभावनाएं हैं। लेकिन जो कुछ भी हो, उससे भयभीत न हों। भय की कोई आवश्यकता नहीं है। यदि ऐसा लगे कि मैं मर रहा हूं, चाहे वह कितनी ही प्रगाढ़ प्रतीति क्यों न हो, उसे स्वीकार कर लें। विचार, भावनाएं, भाव-दशाएं बहुत प्रगाढ़, बहुत वास्तविक मालूम होंगी। बस उन्हें स्वीकार कर लें। यदि ऐसा लगे कि मृत्यु आ रही है, तो उसका भी स्वागत करें—और अपनी श्वास को देखते रहें।

अनुभूतियों के प्रति उदासीन रहना कठिन है, पर यदि आप विचारों और भाव-दशाओं के प्रति उदासीन रह सके, तो यह भी संभव होगा। आप ऐसा अनुभव कर सकते हैं कि मृत्यु आ ही गई, एक क्षण के भीतर मैं मर जाऊंगा—और दूसरी कोई संभावना नहीं है। आप उसके लिए कुछ नहीं कर सकते, इसलिए उसे स्वीकार कर लें, उसका स्वागत करें। जिस क्षण आपने उसका स्वागत किया कि आप उसके प्रति उदासीन हो गए। यदि आप उससे लड़ते हैं, तो आप सब कुछ विकृत कर देते हैं।

तो आप ऐसा अनुभव कर सकते हैं कि मृत्यु आ रही है, या आप ऐसा अनुभव कर सकते हैं कि आप बीमार हो गए हैं। आप बीमार हो नहीं गए हैं, बीमार होने की या मरने की अनुभूति मात्र आपके अचेतन मन का हिस्सा है जो कि निकल रहा है। कई किस्म की बीमारियां अनुभव में आएंगी जो कि क्षण भर पहले अज्ञात थीं। प्रत्येक बीमारी के प्रति उदासीन रहें और अपनी श्वास को देखते रहें। श्वास को देखना आवश्यक है—चाहे कुछ भी विचार चल रहे हों, चाहे कुछ भी भाव-दशाएं गुजर रही हों, चाहे कुछ भी अनुभव हो रहे हों।

पहले सप्ताह के बाद आपको कुछ मानसिक अनुभूतियां होने लगेंगी। शरीर बहुत बड़ा या बहुत छोटा मालूम हो सकता है। कभी शरीर खो जाएगा, वाष्पीभूत हो जाएगा, और आप अशरीरी हो जाएंगे। भयभीत न हों। ऐसे क्षण भी आएंगे जब आप खोज नहीं पाएंगे कि आपका शरीर कहां है—वह नहीं है। और ऐसे क्षण भी आएंगे जब आप अपने शरीर को अपने से अलग कुछ दूर लेटा हुआ या बैठा हुआ देखेंगे। फिर भी भयभीत न हों।

आपको बिजली के झटके भी अनुभव हो सकते हैं। हर बार जब नया चक्र खुलता है तो वहां झटके और कंपन होंगे; सारा शरीर कंप जाएगा। उसका प्रतिरोध न करें; उन प्रक्रियाओं को सहयोग दें। अगर आप प्रतिरोध करते हैं, तो आप अपने ही विरोध में लड़ेंगे। तो झटके, कंपन, बिजली की कौंध, गर्मी, सर्दी—जो कुछ भी अनुभव हो, उसके साथ सहयोग करें। आपने स्वयं ही उसे आमंत्रित किया है, इसलिए उसका प्रतिरोध न करें। अगर आप उसका प्रतिरोध करते हैं, तो आपकी ऊर्जाएं आपस में ही संघर्ष में पड़ जाएंगी। इसलिए जो भी अनुभव हों, उनके साथ सहयोग करें।

कभी ऐसा लग सकता है कि श्वास बंद हो गई है। श्वास बंद नहीं हो गई है, बल्कि वह इतनी स्वाभाविक, इतनी शांत, इतनी लयबद्ध हो गई है कि अनुभव में नहीं आती। हम केवल बीमारी को ही अनुभव कर पाते हैं। जब सिरदर्द होता है, तभी सिर का पता चलता है। जब सिरदर्द नहीं होता तो सिर का पता भी नहीं चलता। सिर है, पर हमें उसका पता नहीं चलता। उसी तरह जब हमारी श्वास असहज, अस्वाभाविक होती है, तो हमें उसका पता चलता है। लेकिन जब वह सहज-स्वाभाविक हो जाती है, तो वह अनुभव में नहीं आती। वह अनुभव में नहीं आती, लेकिन वह है।

जैसे आप अपनी श्वास को देखते रहेंगे, श्वास और भी ज्यादा सूक्ष्म हो जाएगी। लेकिन सजगता भी और ज्यादा सूक्ष्म हो जाएगी, क्योंकि आप उस सूक्ष्म श्वास को निरंतर देख रहे होंगे। और जब श्वास रुक गई सी लगेगी तो आप उस 'अ-श्वास' के प्रति सजग होंगे, आप उस समस्वरता के प्रति सजग होंगे; तब सजगता और भी गहराई में प्रवेश कर जाएगी। जितनी अधिक श्वास सूक्ष्म होगी, उतना अधिक आपको सजग होना पड़ेगा ताकि आप उसके प्रति साक्षी रह सकें।

तो बस सजग रहें। यदि ऐसा लगे कि श्वास रुक गई है, तो 'अ-श्वास' के प्रति सजग रहें। श्वास लेने का प्रयास न करें; बस 'अ-श्वास' के प्रति सजग रहें। यह बहुत ही आनंद का क्षण होगा।

सजगता जितनी अधिक सूक्ष्म होगी, उतनी ही अधिक वह प्राण-शरीर में चली जाएगी। जब आप अपनी श्वास को देखना शुरू करते हैं, तो सबसे पहले स्थूल-श्वास के प्रति सजगता होती है। आप अपने स्थूल-शरीर और श्वास के प्रति सजग होते है। जब श्वास सूक्ष्म और समस्वर हो जाती है, तब आप अपने प्राण-शरीर के प्रति सजग होते हैं। तब आपको ऐसा लग सकता है कि श्वास नहीं चल रही है, पर श्वास अभी भी चल रही है। वह उतनी तेज नहीं होगी जितनी पहले होती थी, क्योंकि आपकी आवश्यकताएं अब उतनी ज्यादा नहीं हैं, पर श्वास अभी भी चल रही है।

आपने देखा होगा कि अगर आप क्रोध में हैं तो आपको आक्सीजन की आवश्यकता अधिक पड़ती है, और अगर आप क्रोध में नहीं हैं तो उतनी आवश्यकता नहीं पड़ती। जब कामवासना पकड़ती है तो श्वास तेज चलने लगती है। इस तरह श्वास की गति आवश्यकतानुसार घटती-बढ़ती रहती है। अगर आप बिलकुल शांत हैं, तो हवा की बहुत थोड़ी सी मात्रा की जरूरत होगी—जितनी जीवित रहने के लिए पर्याप्त है।

इस स्थिति के प्रति बस सजग रहें। आप श्वास के प्रति सजग थे; अब इस स्थिति के प्रति सजग रहें जहां श्वास का कोई अनुभव नहीं हो रहा। जो कुछ भी हो, उसके प्रति सजग रहें। सजगता अनिवार्य तत्व है। अगर कुछ भी अनुभव नहीं हो रहा, तो इस अनुभव-शून्य स्थिति के प्रति सजग रहें। कुछ भी अनुभव नहीं हो रहा, पर सजगता पूरी रहे।

इस क्षण में सो मत जाएं, क्योंकि यही वह क्षण है जिसकी अभीप्सा थी। अगर आप सो जाते हैं, तो अब तक जो भी किया सब बेकार हो गया। जो भी हो रहा है, अब उसके प्रति सजग रहें। श्वास रुक सी गई है; उसके प्रति सजग रहें। पूर्ण मौन में श्वास खो सी जाती है। बहुत कम श्वास की आवश्यकता है, और केवल उतनी ही आती है। मात्रा बहुत कम हो गई है और लयबद्धता बहुत बढ़ गई है, इसलिए आप उसे अनुभव नहीं करते।

अगर आप श्वास को देखते रहे और बाकी सब घट रही चीजों के प्रति उदासीन रहे, तो तीसरा सप्ताह एक पूर्ण शून्यता का सप्ताह होगा। जैसे कि सब कुछ मिट गया, जैसे कि सब कुछ अनस्तित्व में लीन हो गया और केवल शून्यता ही शेष रह गई।

इक्कीस दिन पूरे होने के पहले इस प्रयोग को मत छोड़ें। पहले सप्ताह के बाद आपको लग सकता है कि छोड़ दें। आपका मन कह सकता है : 'यह सब बकवास है। छोड़ो।' मन की न सुनें। अपने आप से बस एक बार कह दें कि इक्कीस दिन के लिए कहीं नहीं जाना है।

तीसरे सप्ताह के बाद आप शायद कुछ दिन और बढ़ाना चाहें। यदि आपका मन इतना आनंदित हो कि आप उसमें कोई बाधा न डालना चाहें, उस शून्यता, उस आनंद, उस वैक्यूम में कुछ समय रहना चाहें,

तो आप इस प्रयोग को दो-तीन-चार दिन के लिए बढ़ा सकते हैं। पर इक्कीस दिन पूरे होने से पहले इसे मत छोड़ें।

अगर कुछ लिख लेने जैसा लगे, तो वह आपको एकांतवास से निकल आने के बाद ही लिखना है, उससे पहले नहीं। फिर आप चाहें तो एक-दो दिन बैठ कर सब कुछ लिख ले सकते हैं। लेकिन इन इक्कीस दिनों में कुछ भी नहीं लिखना है। कुछ याद रखने की कोशिश भी न करें। जो कुछ भी घटा है, वह सब वहां रहेगा, बल्कि और भी स्पष्ट रहेगा क्योंकि मन ने उसे स्मरण करने की कोशिश नहीं की है।

अगर हम किसी चीज को स्मरण रखने की कोशिश करें, तो हम उसे भूल भी सकते हैं। पर हम उसे नहीं भूल सकते जिसे हमने स्मरण रखने की कोशिश ही नहीं की है। तब वह भलीभांति हमारी स्मृति में रहेगी। और अगर वह नहीं रहती है, तो इसका अर्थ है कि वह व्यर्थ है—इसलिए उसे जाने दें। जो कुछ भी उपयोगी है वह याद रहता है। हम व्यर्थ की चीजों को याद रखने का प्रयास करते हैं और नहीं समझ पाते कि वे व्यर्थ हैं। लेकिन मन स्वतः ही यह कार्य करता है; जो कुछ भी याद रखने योग्य है, वह सदा याद रखता है।

तो किसी भी चीज को याद रखने की कोशिश न करें; उसकी कोई आवश्यकता नहीं है। जो कुछ भी घटित हुआ है, आप उसे भूलेंगे नहीं। जो कुछ भी याद रखने योग्य है, वह प्रयोग समाप्त होने के बाद भी आपके साथ रहेगा।

तो जाएं और इसे जितनी जल्दी आप कर सकें, शुरू करें।

38

प्राण-साधना

क्या किया जा सके कि हमारे भीतर एक अद्वैत आबद्ध हो जाए? हम कैसे भीतर एक हो जाएं? लाओत्से की साधना-पद्धति में भीतर होने के बड़े सुगम उपाय हैं। एक उपाय की हम पहले बात करें।

लाओत्से मानता था, तुम जो भी करो—उठो या बैठो, भोजन करो या सोओ—जो भी करो, उसमें पूरे संयुक्त और लीन हो जाओ। अगर रास्ते पर चल रहे हो, तो चलना ही बन जाओ। इतना भी फासला मत रखो कि मैं चल रहा हूं। साक्षी की जिस साधना की हम चर्चा करते रहे हैं, लाओत्से कहता है, साक्षी भी अद्वैत पर नहीं ले जा सकेगा। एक सीमा पर साक्षी को भी छोड़ देना जरूरी है। कृष्णमूर्ति अवेयरनेस की, जागरूकता की बात करते हैं। वह भी अद्वैत पर नहीं ले जा सकेगी। एक जगह जाकर उसे भी छोड़ देना जरूरी है।

लाओत्से कहता है, न जागरूकता, न साक्षी—वरन एकता, लीनता। तुम जो कर रहे हो, वही हो जाओ। चल रहे हो, तो चलने की क्रिया ही हो जाओ; चलने वाला न बचे। और भोजन कर रहे हो, तो भोजन करना ही हो जाओ; भोजन करने वाला न बचे। और अगर देख रहे हो, तो आंख ही बन जाओ; देखने वाला न बचे। और अगर सुन रहे हो, तो कान ही बन जाओ। जो भी कर रहे हो, उसमें इतनी समग्रता से एक हो जाओ कि भीतर कोई फासला न रहे। भीतर कोई भी फासला न रहे। और अगर भीतर का फासला क्रियाओं में टूटता चला जाए, तो बुद्धि और वासना के बीच, इंद्रिय और विवेक के बीच, आत्मा और शरीर के बीच सेतु निर्मित हो जाता है। वे दोनों आलिंगन में आबद्ध हो जाते हैं।

इस आलिंगन को ही तंत्र ने आंतरिक-मैथुन कहा है, जब भीतर की चेतना भीतर की वासना से एक हो जाती है। बुद्धि कहा है तंत्र ने पुरुष को और शरीर की प्रकृति को स्त्री कहा है। और जब भीतर की स्त्री भीतर के पुरुष से एक हो जाती है, आलिंगन में बद्ध हो जाती है, तो परम समाधि फलित होती है।

उसी आलिंगन की बात लाओत्से कर रहा है। जो भी किया जाए, उस करने में मेरे भीतर दो मौजूद न हों। क्षुद्र से क्षुद्र काम भी मुझे पूरा ही डुबा ले। क्षुद्र से क्षुद्र क्रिया में भी मेरी लीनता परिपूर्ण हो जाए। मैं पीछे न बचूं। मेरा बचना ही द्वंद्व है। मेरा पूरी तरह एक हो जाना ही निर्द्वंद्व हो जाना है। तो आलिंगन फलित होता है।

लेकिन यह प्रक्रिया तो पूरे जीवन पर फैलानी पड़े। और अभी फैलानी कठिन है, क्योंकि अभी हमारे भीतर कुछ शारीरिक व्यवस्थागत अनिवार्य फासले हो गए हैं। और जब तक वे फासले न टूट जाएं, तब तक इस लीनता की साधना को साधना मुश्किल है। उन फासलों को हम समझ लें। वे फासले यांत्रिक हो गए हैं, मैकेनिकल हो गए हैं। और जब तक हम यांत्रिक व्यवस्था को ही न तोड़ डालें, और नया न कर लें, तब तक केवल लीनता के प्रयोग से कुछ भी न होगा। हमारे भीतर यंत्रगत भूलें हो गई हैं। और यंत्रगत भूलों को समझ लेना जरूरी है।

श्वास का जो प्राथमिक स्रोत है, जापानी भाषा में उसके लिए एक शब्द है। हमारी भाषा में कोई शब्द नहीं है। वह शब्द है उनका : तांदेन। नाभि से दो इंच नीचे, ठीक श्वास चलती हो तो नाभि से दो इंच नीचे, जिसे जापानी तांदेन कहते हैं, उस बिंदु से श्वास का संबंध होता है। और जितना तनावग्रस्त व्यक्ति होगा, तांदेन से श्वास का बिंदु उतना ही दूर हटता जाता है।

तो जितने ऊपर से आप श्वास लेते हैं, उतने ही तनाव से भरे होंगे। और जितने नीचे से श्वास लेते हैं, उतने ही विश्राम को उपलब्ध होंगे। और अगर तांदेन से श्वास चलती हो, तो आपके जीवन में तनाव बिलकुल नहीं होगा। बच्चे के जीवन में तनाव न होने का जो व्यवस्थागत कारण है, वह तांदेन से श्वास का चलना है। लेकिन कुछ कारण हैं जिनकी वजह से हम लोगों को शिक्षा देते हैं कि पेट से श्वास मत लेना। एक तो, एक पागलपन का खयाल सारी दुनिया में फैल गया है और वह यह है कि छाती फूली हुई होनी चाहिए, छाती बड़ी होनी चाहिए। तो छाती जितनी बड़ी करनी हो, उतनी श्वास छाती में भरनी चाहिए, नीचे नहीं; और छाती से ही वापस लौटा देनी चाहिए।

तो छाती को बड़ा करने का खयाल भीतर एक खतरनाक स्थिति को पैदा करता है। और वह खतरनाक स्थिति है : ऐंद्रिक और बौद्धिक...। तीन केंद्र ताओ मानता है एक तांदेन—नाभि केंद्र, दूसरा हृदय केंद्र और तीसरा बुद्धि का मस्तिष्क केंद्र। नाभि केंद्र अस्तित्व का सबसे गहरा केंद्र है। फिर उसके बाद उससे कम गहरा केंद्र हृदय का है। और सबसे कम गहरा केंद्र बुद्धि का है।

नाभि से श्वास चलनी चाहिए। नाभि से जिसकी श्वास चल रही है, वह अस्तित्व के साथ वैसा ही जुड़ गया है, जैसे छोटे बच्चे जुड़े होते हैं। अगर आप तनावमुक्त हों, शून्य हों, तो श्वास आपकी अनिवार्य रूप से नाभि केंद्र पर पहुंच जाएगी। कभी शिथिल होकर, शांत होकर कुर्सी पर बैठकर देखें, आपको फौरन पता चलेगा: श्वास नाभि से चलने लगी। लेकिन ढीला छोड़ें अपने को।

लेकिन ढीला हम छोड़ते नहीं हैं। क्या इसका कारण केवल इतना ही होगा कि हम सीने को बड़ा करना चाहते हैं? नहीं, इतना ही नहीं है। कारण और भी गहरे हैं। सबसे बड़ा कारण, जो आपको खयाल में भी नहीं होगा, लेकिन आप समझेंगे तो शीघ्र खयाल में आ जाएगा।

फ्रायड कहता है, बच्चे को अपने शरीर का सबसे पहले बोध तभी होता है, जब वह अपनी काम-इंद्रिय को स्पर्श करता है। तभी मां-बाप उसको रोकते हैं कि ठहरो, मत करो, मत छुओ। अगर बच्चा अपनी नाक छूता है, अपनी आंख छूता है, अपना हाथ हिलाता है, तो मां बहुत प्रसन्न होती है। पैर हिलाता है, तो मां बहुत आनंदित होती है। लेकिन बच्चा अगर अपनी जननेंद्रिय छूता है, तो मां बहुत बेचैन और परेशान हो जाती है। बच्चे को पहली दफे पता चलता है कि शरीर में कोई हिस्सा भी है जो छूने योग्य नहीं है, और शरीर में कोई हिस्सा है जो खतरनाक है, और शरीर में कोई हिस्सा है जो अपराध है। यह मां और बाप की आंखों को देख कर बच्चे को पता चलता है। यह अपराध मां और बाप को अपने मां-बाप से पता चला था। यह अपराध परंपरागत है। अपराध कहीं है नहीं। लेकिन बच्चे के शरीर में एक भेद शुरू हो गया। जैसे ही हमारे भीतर यह भेद घटित होता है, वैसे ही श्वास ऊपर से चलने लगेगी। उसके कारण हैं। क्योंकि तांदेन का जो बिंदु है, अगर उस तक श्वास जाए, तो जननेंद्रिय पर उसका असर पड़ता है। इसलिए जैसे ही हमको यह खयाल आ गया कि जननेंद्रिय हमारा हिस्सा नहीं है, तो हमारा तांदेन सिकुड़ जाता है, सप्रेस्ड हो जाता है। और हम डरे हुए जीने लगते हैं कि कहीं जननेंद्रिय तक श्वास न चली जाए!

क्या आपको पता है कि रात सोते समय हर पुरुष को कम से कम बारह से अठारह बार जननेंद्रिय पर इरेक्शन होता है—नींद में। उसका कारण कुल इतना है कि श्वास की जो चोट...नींद में श्वास पूरी चलेगी, पूरी चलने से तांदेन पर चोट पड़ती है। तांदेन का बिंदु और वीर्य-ऊर्जा का बिंदु निकट हैं, सीमांत पर हैं। श्वास की चोट ही वीर्य को सक्रिय करती है। अगर तांदेन तक श्वास न पहुंचे, तो नपुंसकता तक भी फलित हो सकती है। ताओ को मानने वाले चिकित्सकों का खयाल है कि अनेक पुरुषों की नपुंसकता केवल श्वास के तांदेन तक न पहुंचने से पैदा होती है। इसलिए बहुत मजे की बात आपसे कहूं, अक्सर पहलवान नपुंसक हो जाते हैं।

श्वास अगर तांदेन से चले, तो वह तभी चल सकती है, जब आपने अपनी कामवासना को भी स्वीकार किया हो। अगर अस्वीकार किया है, तो श्वास तांदेन से नहीं चल सकेगी। असल में, जब तक आपने अपनी पूरी वासना को भी समग्रीभूत अंगीकार न कर लिया हो, शिशुवत स्वीकार न कर लिया हो, तब तक आपके भीतर अद्वैत निर्मित नहीं हो सकता है। और यह बहुत आनंद की अदभुत बात है कि जैसे ही कोई व्यक्ति अपनी वासना को उसकी समग्रता में स्वीकार कर लेता है, वैसे ही वासना से मुक्त हो जाता है।

ताओ की साधना में जो उतरते हैं, उनका पहला काम यह है कि वे श्वास को फेफड़ों से लेना बंद कर दें, नाभि से लेना शुरू करें। इसका अर्थ हुआ कि जब आपकी श्वास भीतर जाए, तो पेट ऊपर उठे; और जब श्वास नीचे गिरे, तो पेट नीचे गिरे। और सीना शिथिल रहे, शांत रहे।

शायद पुरुष राजी भी हो जाएं, क्योंकि सभी पुरुषों को पहलवान होने का पागलपन नहीं है। स्त्रियां

और भी मुश्किल से राजी हो सकती हैं। क्योंकि स्त्रियों को उससे भी बड़ा पागलपन सवार हुआ है। और वह है स्तन को सुदृढ़, सुडौल और बड़े बनाने का। तो स्त्रियां कभी नाभि से श्वास लेने को तैयार नहीं होतीं।

आप एक तीन सप्ताह का प्रयोग करके भी दंग रह जाएंगे कि अगर श्वास नाभि से चले, तो आपके न मालूम कितने क्रोध विलीन हो गए; और आपकी न मालूम कितनी ईर्ष्या खो गई; और आपके न मालूम कितने तनाव अब नहीं हैं; और आपकी नींद गहरी हो गई; और आपका व्यक्तित्व संतुलित होने लगा।

तो पहला सूत्र है—श्वास को धीरे-धीरे नाभि पर ले आना। सीने का काम ही न रह जाए।

दूसरा ताओ प्राण-साधना का हिस्सा है कि सदा श्वास बाहर जाए, उस पर ध्यान देना; भीतर आती श्वास पर बिलकुल ध्यान नहीं देना। और जब श्वास बाहर जाए, तो जितने जोर से श्वास को उलीचा जा सके, उलीच देना; और भीतर कभी श्वास अपनी तरफ से नहीं लेना। जितनी आए आ जाने देना।

तो लाओत्से का दूसरा सूत्र है—सदा श्वास को फेंकिए; लेने को भूल ही जाइए। लेने का आपको काम ही नहीं करना है, वह तो प्रकृति स्वयं कर लेती है।

और तीसरा सूत्र है लाओत्से का—केंद्र नाभि हो जाए, छोड़ने पर जोर हो जाए और तीसरा—यह जो श्वास का आना-जाना है, इससे अपने को पृथक न समझें। जब श्वास बाहर जाए, तो समझें कि मैं बाहर चला गया; और जब श्वास भीतर आए, तो समझें कि मैं भीतर आ गया। प्राण के साथ एक हो जाएं।

अगर यह खयाल रख सकें कि श्वास के साथ मैं बाहर गया और श्वास के साथ मैं भीतर आया। इसका जप निर्मित हो जाए। यह धीरे-धीरे-धीरे-धीरे-धीरे जप की भांति आपके भीतर गूंजने लगे कि श्वास में बाहर गया, श्वास में भीतर आया। तो श्वास की यह सतत क्रिया अगर जप बन जाए बाहर और भीतर आने की, तो अद्वैत फलित होता है, तो अद्वैत का अनुभव होता है।

39
मंत्र-साधना

मन को जो मार दे, वह मंत्र है। मन की जिससे मृत्यु घटित हो जाए, वह मंत्र है। और मन जब नहीं रह जाता, तो तुम्हारे और शरीर के बीच जो सेतु है वह टूट जाता है। मन ही जोड़े हुए है तुम्हें शरीर से। अगर बीच का सेतु, बीच का संबंध टूट जाए, तो शरीर अलग, तुम अलग हो जाते हो। और जिसने जान लिया अपने को शरीर से अलग और मन से शून्य, वह शिवत्व को उपलब्ध हो जाता है। वह परम केवली है।

इसलिए मंत्र को समझ लें। मंत्र की परिभाषा है—जिससे सिर ही खो जाए, मन न बचे। और ये जो

पर्तें हैं शरीर की, मन की, इनको काटने की विधि। एक-एक कदम बढ़ना जरूरी है। और धैर्य रखना होगा; क्योंकि मंत्र बहुत धीरज का प्रयोग है। अधैर्य जिनके मन में बहुत ज्यादा है, उन्हें मंत्र से लाभ न होगा, नुकसान हो सकता है। इसे पहले समझ लें। क्योंकि वैसे ही तुम काफी परेशान हो, मंत्र एक और नई परेशानी बन जाएगी अगर अधैर्य हुआ।

तो मंत्र के साथ अत्यंत धैर्य चाहिए, अन्यथा उस झंझट में मत पड़ना। जैसे दवा को मात्रा में लेना होता है! यह मत सोचना कि पूरी बोतल इकट्ठी पी गए तो बीमारी अभी ठीक हो जाएगी। उससे बीमार मर सकता है, बीमारी न मरेगी। उसे मात्रा में ही लेना। और मंत्र की मात्राएं बड़ी होमियोपैथिक हैं, बड़ी सूक्ष्म हैं। तो बहुत धैर्य की जरूरत है, वह पहली जरूरत है। फल की बहुत जल्दी आकांक्षा मत करना; वह जल्दी आएगा भी नहीं, क्योंकि यह परम फल है। यह कोई मौसमी फूल नहीं है कि बोया और पंद्रह दिन के भीतर आ गया! जन्म-जन्म लग जाते हैं! और एक कठिन बात जो समझ लेने की है, वह यह है कि जितना धैर्य हो उतने जल्दी फल आ जाएगा, और जितना अधैर्य हो उतनी ज्यादा देर लग जाएगी।

एक आदमी जा रहा था रास्ते से। उसका जूता उसे काट रहा था; जूता छोटा था। वह जूते को गालियां दे रहा था और बहुत परेशान था। नसरुद्दीन ने उससे पूछा कि 'मेरे भाई, इतना तंग जूता कहां से खरीदा?' वह आदमी वैसे ही जला-भुना था, वैसे ही क्रोध में था। उसने कहा, 'जूता कहां से खरीदा! झाड़ से तोड़ा है!' नसरुद्दीन ने कहा, 'मेरे भाई, थोड़ी देर रुक जाते तो पैर के नाप का तो हो जाता। कच्चा तोड़ लिया!'

मंत्र कभी कच्चा मत तोड़ना, नहीं तो बुरे फंस जाओगे। जूते को तो कोई फेंक दे, मंत्र को फेंकना बहुत मुश्किल है। क्योंकि जूता तो बाहर है, मंत्र भीतर होता है। और अगर गलती से मंत्र में फंस गए, तो निकलना बहुत मुश्किल हो जाता है। बहुत से धार्मिक लोग पागल हो जाते हैं। उसका कारण है: मंत्र में फंस गए, कुछ जल्दी कर ली तोड़ने की; फल पक नहीं पाया था, कच्चा ले गए। पक कर तो फल बहुत मीठा हो जाता; कच्चा बहुत तिक्त होगा, बहुत कड़वा होगा, जहरीला होगा।

पहली पर्त है शरीर। तो मंत्र का पहला प्रयोग शरीर से शुरू करना जरूरी है। क्योंकि वहीं तुम हो, वहीं से इलाज शुरू होगा। अगर तुमने वह पर्त छोड़ कर मंत्र का इलाज शुरू किया, तो बीमारी तुम्हारी रह जाएगी, मिटेगी नहीं। कल नहीं परसों, कच्चा फल हाथ आएगा। ध्यान रखना, यात्रा वहीं से शुरू की जा सकती है जहां तुम खड़े हो; कहीं और से यात्रा की, वह सपना है। तुम अभी शरीर हो। तो अभी मंत्र को शरीर से ही शुरू करना होगा।

पूर्व तैयारी : नासाग्र दृष्टि

विधि को समझ लो। पहले दस मिनट शांत बैठ जाना। शांत बैठने के पहले—क्योंकि शांत बैठना आसान नहीं है—पांच मिनट नाचना, उछलना, कूदना। और दिल खोल कर उछलना, कूदना, नाचना। ताकि शरीर के भीतर, रग-रग, रेशे-रेशे में जो रेस्टलेसनेस है, वह जो बेचैनी है, वह निकल जाए। तभी तुम दस मिनट शांति से बैठ पाओगे। शांति से बैठने के लिए यह जरूरी रेचन है। दस-पांच मिनट, जितना तुम्हें ठीक लगे, जितनी तुम्हारी बेचैनी हो, उस हिसाब से तुम नाचना, कूदना, डोलना, शरीर को सब तरफ से हिलाना। ताकि दस मिनट शरीर हिलने की आकांक्षा न करे। उसकी हिलने की तृप्ति कर देना। दस

मिनट शरीर को हिलाना-डुलाना, नाचना-कूदना, दौड़ना, फिर बैठ जाना। और फिर बैठ जाना बिलकुल थिर, दस मिनट अब शरीर न हिले। आंख आधी खुली रखना। और उचित होगा कि प्रयोग खुले में मत करना, बंद में करना। छोटा कमरा हो, बंद हो और बिलकुल खाली हो, वहां कोई भी चीज न हो।

इसलिए मंदिर, मस्जिद या चर्च बहुत अच्छा है, जहां कुछ भी नहीं है, कोई सामान नहीं है। या घर में एक कोना साफ कर लेना, जहां कुछ भी नहीं है। वहां देवी-देवताओं को भी मत रखना, वे भी उपद्रव हैं। वहां बिलकुल खाली कर देना। बस, खालीपन ही एक परमात्मा है, बाकी सब चीजें मन का ही खेल हैं।

कमरे को बिलकुल खाली रखना। जितना शून्य हो, उतना अच्छा है; क्योंकि इसी शून्य की भीतर तलाश है। यह कमरा तुम्हारे भीतर शून्य का प्रतीक हो, और छोटा हो, क्योंकि मंत्र में उसका उपयोग है; और खाली हो, उसका भी उपयोग है।

आंख आधी खुली रखना; क्योंकि जब आंख पूरी खुली होती है, तो तुम दरवाजे पर खड़े हो अपने मकान के—पीठ मकान की तरफ, मुंह संसार की तरफ। एकदम से पीठ न मुड़ेगी। एकदम से परिवर्तन आसान नहीं। तुम सिर्फ आधी आंख खोलना, आधा संसार की तरफ बंद और आधा अपनी तरफ खुले। आधी आंख खुले होने का यही अर्थ है कि आधा संसार देख रहे हैं, आधा अपने को। यहीं से शुरू करना।

और जल्दी की कोई आवश्यकता नहीं है। आधी आंख जब खुली होती है, तो तुम एक तंद्रा जैसी स्थिति अनुभव करोगे। तो अपनी नाक के शीर्ष भाग को देखते रहना। बस, उतनी ही आंख खोलनी है। एकाग्रता नहीं करनी है; शांत भाव से नाक का अगला हिस्सा दिखाई पड़ रहा है—नासाग्र दिखाई पड़ रहा है।

पहला चरण : ओंकार का उच्चार

तब 'ओम्' का पाठ जोर से शुरू करना—शरीर से, क्योंकि शरीर में तुम हो। तो जोर से ओम् की ध्वनि करना कि कमरे की दीवारों से टकरा कर तुम पर गिरने लगे। इसलिए खाली जरूरी है। खाली होगा तो प्रतिध्वनि होगी। जितनी प्रतिध्वनि हो, उतनी लाभ की है। इसलिए अगर तुम ईसाइयों का कैथेड्रल देखे हो, तो वह मंत्र के लिए बनाया गया था। वहां कुछ भी बोलो तो वह ध्वनि हजार गुना होकर तुम्हारे ऊपर लौट आती है। हिंदुओं ने मंदिर बनाया था अर्द्धवृत्त में—सिर्फ इसीलिए कि उसकी गुंबज में ध्वनि टकरा कर वापस लौट आएगी। वृत्ताकार वस्तु में कोई भी ध्वनि बाहर नहीं जा सकती, भीतर लौट आती है। वे मंत्र के लिए थे।

तो तुम बैठ जाना, जोर से ओंकार—ओम्...ओम्...जितने जोर से कर सको; क्योंकि शरीर का उपयोग करना है। तुम्हारा पूरा शरीर निमज्जित हो जाए ओम् में। ऐसा लगने लगे कि तुमने अपनी पूरी जीवन-ऊर्जा ओम् में लगा दी, कुछ बचाया नहीं। जैसे इसी पर जीवन-मरण टिका है। इससे कम में मंत्र पूरा नहीं होता। ऐसे धीरे-धीरे मुर्दे की तरह कहते रहो, आधे-आधे, उससे हल न होगा। समग्र भाव से! जैसे कि इसी पर निर्भर है कि अगर तुमने पूरी तरह ओम् कहा, तो ही तुम बचोगे, अन्यथा तुम मर जाओगे। दांव पर लगा देना! जैसे सिंहनाद होने लगे। आधी आंख खुली, आधी बंद, जोर से ओम् का पाठ। और ध्यान रखना, जैसे कोई पत्थर फेंकता है शांत झील में, लहरें आती हैं, चारों तरफ चली जाती हैं, ऐसा जब तुम ओम् कहोगे, तुमने एक पत्थर फेंका उस शांत शून्यता में कमरे की, चारों तरफ किरणें फैलीं, ध्वनि गई, टकराई, वापस लौटी।

और तुम इतने जल्दी ओम् कहना कि ओवरलैपिंग हो जाए। एक मंत्र-उच्चार के ऊपर दूसरा मंत्र-उच्चार हो जाए—ओम्...ओम्...। दो ओम् के बीच जगह मत छोड़ना। पसीना-पसीना हो जाना। सारी ताकत लगा देना। थोड़े ही दिनों में तुम पाओगे कि पूरा कक्ष ओम् से भर गया। तुम पाओगे कि पूरा कक्ष तुम्हें साथ दे रहा है; ध्वनि लौट रही है। अगर तुम कोई गोल कक्ष खोज पाओ तो ज्यादा आसान होगा। अगर गुंबद वाला कक्ष खोज पाओ तो और भी आसान होगा। बिलकुल कुछ भी न हो, ताकि ध्वनि पूरी तरह तुम पर बरसने लगे। तुम्हारा शरीर स्नान से गुजर जाएगा। और तुम पाओगे कि ऐसी शीतलता जल के स्नान से कभी भी नहीं मिलती।

जब चारों तरफ से ओंकार तुम पर बरसने लगेगा, लौटने लगेगा, तुम्हारी ध्वनि वर्तुलाकार हो जाएगी, तुम पाओगे शरीर का रोआं-रोआं प्रसन्न हो रहा है; रोएं-रोएं से रोग झड़ रहा है; शांति, स्वास्थ्य प्रगाढ़ हो रहा है। तुम हैरान होकर पाओगे कि तुम्हारे शरीर की बहुत सी तकलीफें अपने आप खो गईं; क्योंकि यह बड़ा गहरा स्नान है। और बड़ी गहराई तक इसकी पकड़ और पहुंच है। शरीर ध्वनि का ही जोड़ है। और ओंकार से अदभुत ध्वनि नहीं।

यह दस मिनट ओंकार का उच्चार जोर से, शरीर के माध्यम से।

दूसरा चरण : ओंकार का अंतस गुंजन

फिर आंख बंद कर लेना। ओंठ बंद कर लेना। जीभ तालू से लग जाए, इस तरह मुंह बंद कर लेना कि बिलकुल बंद है, कोई जगह न बची; क्योंकि अब जीभ का उपयोग नहीं करना है, ओंठ का उपयोग नहीं करना है।

दूसरा कदम है, दस मिनट तक अब ओम् का उच्चार करना भीतर मन में। अभी तक कक्ष था चारों तरफ, अब शरीर है चारों तरफ। अभी तक मकान के भीतर थे तुम, अब शरीर मकान है। दूसरे दस मिनट में अब तुम अपने भीतर मन में ही गुंजाना—ओंठ का, जीभ का, कंठ का कोई उपयोग न करना। सिर्फ मन में—ओम्...ओम्...। लेकिन गति वही रखना; तीव्रता वही रखना।

जैसे तुमने कमरे को भर दिया था ओंकार से, ऐसे ही अब शरीर को भीतर से भर देना ओंकार से—कि शरीर के भीतर ही कंपन होने लगे, ओम् दोहरने लगे पैर से लेकर सिर तक। और इतनी तेजी से यह ओम् करना है, जितनी तेजी से तुम कर सको। और दो ओम् के बीच जरा भी जगह मत छोड़ना। क्योंकि मन का एक नियम है कि वह एक साथ दो विचार नहीं कर सकता। एक साथ दो विचार असंभव हैं।

तो अगर तुमने इतने जोर से गुंजाया कि दो ओम् के बीच में जरा सी भी संधि न बची, तो कोई विचार न आ सकेगा। अगर जरा सी भी संधि बची तो विचार आ जाएगा; उसी संधि में से जगह बना लेगा। तो संधि मत छोड़ना; संधि-शून्य उच्चार। इसकी भी फिक्र न करना कि एक ओम् पर दूसरा चढ़ा जा रहा है। जैसे कभी मालगाड़ी टकरा जाती है, एक डब्बे के ऊपर दूसरा डब्बा हो जाता है, ऐसा तुम ओम् का एक-दूसरे के ऊपर हो जाने देना, जगह बीच में मत छोड़ना।

और ध्यान रखना, शरीर का उपयोग नहीं करना है इसमें। आंख इसीलिए अब बंद कर ली। शरीर थिर है। मन में ही गूंज करनी है। शरीर से ही टकरा कर गूंज मन पर वापस गिरेगी, जैसे कमरे से टकरा कर शरीर पर गिर रही थी। उससे शरीर शुद्ध हुआ; इससे मन शुद्ध होगा। और जैसे-जैसे गूंज गहन होने

लगेगी, तुम पाओगे कि मन विसर्जित होने लगा। एक गहन शांति, जैसी तुमने कभी नहीं जानी, उसका स्वाद मिलना शुरू हो जाएगा।

तीसरा चरण : साक्षी-भाव

दस मिनट तक तुम भीतर गुंजार करना और दस मिनट के बाद गर्दन झुका लेना कि तुम्हारी दाढ़ी तुम्हारी छाती को छूने लगे। दो-चार दिन तकलीफ भी मालूम होगी गर्दन में, उसकी फिक्र मत करना, वह चली जाएगी।

तीसरे चरण में दाढ़ी छूने लगे; जैसे गर्दन कट गई, उसमें कोई जान न रही। और अब तुम मन में भी गुंजार मत करना ओम् का। अब तुम सुनने की कोशिश करना; जैसे ओंकार हो ही रहा है, तुम सिर्फ सुनने वाले हो, करने वाले नहीं। क्योंकि मन के बाहर तभी जा सकोगे, जब कर्ता छूट जाएगा। अब तुम साक्षी हो जाना। अब तुम गर्दन झुका कर यह कोशिश करना कि भीतर ओंकार चल रहा है, मैं उसे सुनूं।

गालिब का बहुत प्रसिद्ध वचन है :

> दिल के आईने में है तस्वीरे-यार।
> जब जरा गर्दन झुकाई, देख ली।

वह गर्दन झुकाना जरूरी है। जैसे ही गर्दन झुकती है, दिल का आईना सामने आ जाता है। और उस परमप्रिय की तस्वीर वहां है, प्रतिबिंब वहां है। लेकिन गर्दन झुकाना तुम्हें नहीं आता। तुम तो गर्दन अकड़ा कर चलते हो। जहां गर्दन झुकाने की बात आई, वहीं तुम और तन जाते हो। तुम अगर परमात्मा को खो रहे हो, तो सिर्फ एक अकड़ से कि तुम गर्दन झुकाने को राजी नहीं; समर्पण की तुम्हारी तैयारी नहीं। यह तो प्रतीक है गर्दन को लटका देना, जैसे कट गई, ताकि तुम झुक सको। और जैसे ही गर्दन झुकती है, भीतर देखना आसान हो जाता है। जैसे ही गर्दन झुकती है, विचार मुश्किल हो जाते हैं।

अब तुम सुनने की कोशिश करना। अभी तक तुम मंत्र का उच्चार कर रहे थे; अब तुम मंत्र के साक्षी बनने की कोशिश करना। और तुम चकित होओगे कि तुम पाओगे कि भीतर सूक्ष्म उच्चार चल रहा है। वह ओम् जैसा है; ठीक ओम् नहीं है, क्योंकि भाषा में उसे लाना कठिन है; ठीक ओम् जैसा है। तुम अगर शांति से सुनोगे तो अब वह तुम्हें सुनाई पड़ेगा। शरीर से तुम हट गए। पहले मंत्र के प्रयोग ने तुम्हें शरीर से काट दिया। दूसरे मंत्र के प्रयोग ने तुम्हें मन से काट दिया। अब तीसरे मंत्र का प्रयोग साक्षी-भाव का है।

तो दो चरण तो तुम मंत्र करोगे, तीसरे चरण में तुम मंत्र को सुनोगे; श्रावक बनोगे, साक्षी बनोगे। दो तक कर्ता रहोगे, क्योंकि शरीर और मन कर्तृत्व का हिस्सा है; और तीसरा चरण साक्षी-भाव का है। तो तीसरे चरण में तुम सिर्फ सुनना। शरीर कटा, मन कटा; तब तुम बच गए। प्याज के छिलके अलग हुए, अब सिर्फ शुद्ध अस्तित्व बचा। वही शिवत्व है।

और एक बार इसका स्वाद आ जाए, तो फिर तुम जल्दी-जल्दी जाने लगोगे। फिर स्वाद ही खींचने लगेगा। फिर स्वाद एक मैगनेट बन जाता है।

मैं सदा जोर देता हूं कि प्रत्येक ध्यान के पहले रेचन जरूरी है। रेचन तुम्हें सहयोगी होगा। दस मिनट दौड़ लो, कूद लो, उछल लो; सारी ऊर्जा जो जम गई है, उसे फेंक दो। फिर बैठ जाओ। जैसे तूफान

के बाद शांति आ जाती है, ऐसे रेचन के बाद शरीर हलका हो जाता है, उसकी बेचैनी खो जाती है। पर वह भूमिका है, वह कोई चरण नहीं। वह मकान की सीढ़ी है। मकान के भीतर असली यात्रा तो शुरू होती है: दस मिनट ओंकार की ध्वनि शरीर से; दस मिनट ओंकार की ध्वनि मन से; दस मिनट ओंकार की ध्वनि तुम्हें नहीं करनी, वह अस्तित्व में हो ही रही है, तुम्हें सिर्फ सुननी है।

तुम ओम् का प्रयोग करना। और इस भांति जैसा मैंने कहा। तीन महीने तुम चिंता मत करना कि क्या परिणाम आ रहे हैं। तुम परिणाम का विचार ही मत करना। तुम सिर्फ किए जाना। तुम सोचना ही मत कि कुछ हो रहा है कि नहीं हो रहा, अभी तक हुआ कि नहीं। तुम तीन महीने तक सोचना ही मत। तुम एक तारीख तय कर लेना कि तीन महीने, फलां तारीख को लौट कर सोचेंगे कि कुछ हुआ कि नहीं; तब तक नहीं सोचेंगे फल को। तीन महीने धैर्य से किया तो बड़े मीठे रस से भर जाएंगे; जिसको कबीर ने 'गूंगे का गुड़' कहा है। और एक बार वह गुड़ स्वाद में आ जाए, फिर कोई कठिनाई नहीं है। फिर तुम जहां हो, ठीक हो; तुम जो कर रहे हो, ठीक हो। फिर संसार स्वप्नवत हो जाता है। जीवन एक अभिनय से ज्यादा नहीं रह जाता। तुम साक्षी हो जाते हो। तुम्हारा साक्षित्व ही शिवत्व है।

40

अंतर्वाणी साधना

स्वधर्म; कैसे पहचानें, क्या है स्वधर्म? कैसे जानें, मैं क्या होने को पैदा हुआ हूं? कैसे जानें कि मैं कुछ और होने में तो नहीं लगा हूं? कैसे पहचानें कि मैंने किसी परधर्म को ही तो नहीं पकड़ लिया है?

पहचान हो सकती है। सूक्ष्म होंगे पहचान के सूत्र। लेकिन दो-तीन सूत्र आपसे कहना चाहूंगा।

पहली बात, अगर आप दुखी हैं जीवन में, तो पक्का समझ लेना कि आप स्वधर्म से च्युत हुए हैं, स्वधर्म से च्युत हो रहे हैं। क्योंकि जहां भी स्वधर्म की यात्रा होती है, वहीं आनंद फलित होता है।

अशांत हों यदि, तो जान लेना कि परधर्म के पीछे चल रहे हैं। रुक जाना, पुनः सोच लेना। फिर से विचार कर लेना, रिकंसीडर कर लेना कि जो यात्रा चुनी, जो कर रहे हैं, उससे दुख और पीड़ा, अशांति बढ़ती है, तो निश्चित ही वह मार्ग मेरा नहीं है। शांति बढ़े, तो स्वधर्म के निकट चल रहे हैं आप। अशांति बढ़े, तो स्वधर्म से च्युत हो रहे हैं आप। शांति मापदंड है।

दूसरा, यदि कोई स्वधर्म के साथ-साथ चल रहा हो, तो उसके जीवन में स्वीकार का भाव बढ़ता जाएगा, अस्वीकार का भाव कम होता जाएगा। उसकी एक्सेप्टिबिलिटी बढ़ती जाएगी। वह चीजों को स्वीकार करने लगेगा। क्योंकि जिसके भीतर भी जरा सा आनंद आया, उसके बाहर स्वीकृति आने लगती है; वह चीजों को स्वीकार करने लगता है अर्थात संतुष्ट होने लगता है।

अगर स्वधर्म के अनुकूल न चलता हो, तो असंतुष्ट होता चला जाता है; अस्वीकार करने लगता है। हर चीज के प्रति दुश्मन की दृष्टि आ जाती है, दोस्त की नहीं। हर चीज के प्रति इनकार, नो; यस, हां का भाव नहीं। हर चीज के प्रति इनकार हो जाता है।

तीसरी बात, स्वधर्म के अनुकूल अगर जाना हो, तो सिर्फ बाहर की चीजों में उलझा रह कर कोई व्यक्ति कभी नहीं जा सकता। दैनंदिन कामों में पता ही नहीं चलता कि स्वधर्म क्या है, परधर्म क्या है। जिसे स्वधर्म की खोज करनी हो, उसे बाहर की दुनिया से कम से कम चौबीस घंटे में घंटे भर के लिए बिलकुल छुट्टी ले लेनी चाहिए, और भीतर की दुनिया में डूब जाना चाहिए। कर देने चाहिए द्वार बंद बाहर के। कह देना चाहिए बाहर के जगत को बाहर, और अब मैं होता भीतर। सब इंद्रियों के द्वार बंद करके भीतर घंटे भर के लिए डूब जाना चाहिए। वहीं पता चलेगा उस रहस्य का जो स्व है, जो निजता है। वहीं से सूत्र मिलेंगे, ध्वनि सुनाई पड़ेगी, वहीं से इशारे मिलेंगे। और धीरे-धीरे इशारे गहरे होते चले जाते हैं। पहले आवाज बड़ी छोटी होती है। यह आखिरी सूत्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, इसे ठीक से खयाल में ले लेंगे।

स्वधर्म का पता अंतर की वाणी के अतिरिक्त और कहीं से नहीं चलता है। पहले मैंने दो लक्षण की बातें कहीं कि इससे आप पता लगा लेना कि जिंदगी ठीक मार्गों से जा रही है या नहीं। और तीसरे से मैं आपके स्वधर्म के केंद्र को ही छू लेने की सूचना देता हूं।

घंटे भर के लिए चौबीस घंटे में, बंद कर देना बाहर की दुनिया को, भूल जाना; छोड़ देना सब बाहर का बाहर; अपने भीतर डुबकी लगा जाना। उस डुबकी में धीरे-धीरे भीतर की अंतर्वाणी सुनाई पड़नी शुरू होगी। सबके भीतर छिपा है वह। दि स्टिल स्माल वॉइस, छोटी है आवाज—धीमी, नाजुक, सूक्ष्म। केवल वे ही सुन सकते हैं, जो उतनी सूक्ष्म आवाज को सुनने के लिए अपने को ट्रेन करते हैं, प्रशिक्षित करते हैं।

जल्दी न करें। एक घंटा तय कर लें स्वधर्म की खोज के लिए। आपको पता नहीं, लेकिन आपकी अंतरात्मा को पता है कि क्या है आपका स्वधर्म। आंख बंद करें। मौन हो जाएं। चुप बैठ कर सुनें। मौन, सिर्फ भीतर ध्यान को करके, सुनने की कोशिश करें कि भीतर कोई बोलता है! कोई आवाज!

बहुत सी आवाजें सुनाई पड़ेंगी। पहचानने में कठिनाई न होगी कि ये बाहर की आवाजें हैं। मित्रों के शब्द याद आएंगे, शत्रुओं के शब्द; दुकान, बाजार, मंदिर, शास्त्र—सब शब्द याद आएंगे। पहचान सकेंगे भलीभांति, बाहर के सुने हुए हैं। छोड़ दें। उन पर ध्यान न दें। और भीतर! और प्रतीक्षा करते रहें।

अगर तीन महीने कोई सिर्फ एक घंटा चुप बैठ कर प्रतीक्षा कर सके धैर्य से, तो उसे भीतर की आवाज का पता चलना शुरू हो जाएगा। और एक बार भीतर का स्वर पकड़ लिया जाए, तो आपको फिर जिंदगी में किसी से सलाह लेने की जरूरत न पड़ेगी।

जब भी जरूरत हो, आंख बंद करें और भीतर से सलाह ले लें; पूछ लें भीतर से कि क्या करना है। और स्वधर्म की यात्रा पर आप चल पड़ेंगे। क्योंकि भीतर से स्वधर्म की ही आवाज आती है। भीतर से कभी परधर्म की आवाज नहीं आती। परधर्म की आवाज सदा बाहर से आती है।

जो व्यक्ति अपने भीतर की इनर-वॉइस, अंतर्वाणी को नहीं सुन पाता, वह व्यक्ति कभी स्वधर्म के तप को पूरा नहीं कर पाएगा। लेकिन सब हो सकते हैं, सबके पास वह अंतर्वाणी का स्रोत है। जन्म के साथ ही वह स्रोत है, जीवन के साथ ही वह स्रोत है। बस, हमें उसका कोई स्मरण नहीं। हमने कभी उसे टैप भी नहीं किया; हमने कभी उसे खटखटाया भी नहीं; हमने कभी उसे जगाया भी नहीं। हमने कभी कानों को प्रशिक्षित नहीं किया कि वे सूक्ष्म आवाज को पकड़ लें।

जीसस या बुद्ध या महावीर भीतर की आवाज से जीते हैं। भीतर की आवाज जो कह देती है वही...।

इसमें एक बात और आपको खयाल दिला दूं कि भीतर की आवाज एक बार सुनाई पड़नी शुरू हो जाए, तो आपको अपना गुरु मिल गया। वह गुरु भीतर बैठा हुआ है। लेकिन हम सब बाहर गुरु को खोजते फिरते हैं। गुरु भीतर बैठा हुआ है। परमात्मा ने प्रत्येक को वह विवेक, वह अंतःकरण, वह कॉनशिएंस, वह अंतर की वाणी दी है, जिससे अगर हम पूछना शुरू कर दें, तो उत्तर मिलने शुरू हो जाते हैं। और वे उत्तर कभी भी गलत नहीं होते। फिर वह रास्ता बनाने लगता है भीतर का ही स्वर, और तब हम स्वधर्म की यात्रा पर निकल जाते हैं।

अंतर्वाणी को सुनने की क्षमता ही स्वधर्मरूपी यज्ञ का मूल आधार है।

41

संयम साधना—1

कृष्ण ने दो निष्ठाओं की बात कही है।

एक वे, जो इंद्रियों का संयम कर लेते हैं। जो इंद्रियों को विषय की तरफ—विषयों की तरफ इंद्रियों की जो यात्रा है, उसे विदा कर देते हैं; यात्रा ही समाप्त कर देते हैं। जिनकी इंद्रियां विषयों की तरफ दौड़ती ही नहीं हैं। संयम का अर्थ समझेंगे, तो खयाल में आए। दूसरे वे, जो विषयों को भोगते रहते हैं, फिर भी लिप्त नहीं होते। ये दोनों भी यज्ञ में ही रत हैं।

एक वे, जो इंद्रियों को विषयों तक जाने ही नहीं देते—उसकी अलग साधना है—इंद्रियों और विषयों के बीच में जो सेतु है, ब्रिज है, उसे ही तोड़ देते हैं। दूसरे वे, जो इंद्रियों को विषयों तक जाने देते हैं, लेकिन इंद्रियों और लिप्त हो जाने में जो सेतु है, उसे तोड़ देते हैं।

अब यह दो सेतुओं का जो तोड़ना है, वह खयाल में ले लेना जरूरी है। दोनों ही स्थितियों से एक ही परम-अवस्था उपलब्ध होती है।

पहले, पहले को खयाल में लें, इंद्रियों को विषयों तक नहीं जाने देते!

इंद्रियां विषयों की तरफ भागती ही रहती हैं। रास्ते पर गुजरे हैं आप। सुंदर भवन दिखाई पड़ गया, कि सुंदर चेहरा दिखाई पड़ गया, कि सुंदर काया दिखाई पड़ गई, कि सुंदर कार दिखाई पड़ गई—आपको पता ही नहीं चलता कि जब आपने कहा सुंदर है, तभी इंद्रियां दौड़ चुकीं। ऐसा नहीं कि सुंदर है, ऐसा जानने के बाद इंद्रियां दौड़ना शुरू करती हैं। इंद्रियां दौड़ चुकी होती हैं। उनका कनक्लूजन है यह, सुंदर है, यह निष्कर्ष है। दौड़ गई इंद्रियों का, पहुंची इंद्रियों का निष्कर्ष है यह कि सुंदर है।

ऐसा मत सोचना आप कि आप सुंदर चेहरा देख कर आकर्षित होते हैं; आप आकर्षित होते हैं, इसलिए चेहरा सुंदर दिखाई पड़ता है। आकर्षण की घटना सूक्ष्म है और बड़े अदृश्य में घट जाती है। सौंदर्य की घटना सूक्ष्म नहीं है और विचार में पता चलती है।

सुंदर हमारी निष्पत्ति है, कारण नहीं। सुंदर की वजह से कोई आकर्षित नहीं होता; आकर्षित होने की वजह से सुंदर का निष्कर्ष लेता है। यह हमारा बौद्धिक निष्कर्ष है। इंद्रियों ने तो अनुभव किया है आकर्षण का; बुद्धि ने निर्णय लिया है सुंदर का। इंद्रियां पहुंच चुकीं; इंद्रियों ने स्पर्श कर लिया।

इंद्रियों की गति सूक्ष्म है। ऐसा नहीं कि जब आप किसी के शरीर को छूते हैं, तभी इंद्रियां छूती हैं। इंद्रियों के छूने के अलग-अलग मार्ग हैं। आंख देखती है, और छू लेती है। देखना आंख के छूने का ढंग है। सुनना कान के छूने का ढंग है। स्पर्श हाथ के छूने का ढंग है। ये सब छूने के ढंग हैं। सब इंद्रियां छूती हैं।

इंद्रिय का अर्थ है, स्पर्श की व्यवस्था, उपकरण। सब इंद्रियां स्पर्श करती हैं। सूक्ष्म स्पर्श दूर से हो जाते हैं। स्थूल स्पर्श पास से करने पड़ते हैं।

इससे विपरीत काम भी चलता है पूरे समय। शरीर से सबको नहीं छुआ जा सकता। लेकिन एक परफ्यूम डाल कर बड़े सूक्ष्म तल पर, गंध से, सब को छुआ जा सकता है।

आवाज, गंध, ध्वनि, दृश्य, दर्शन—वे सब छूते हैं। जब आप सज-संवर कर घर से निकलते हैं, तो आप दूसरों की आंख से छुए जाने का निमंत्रण लेकर निकल रहे हैं। और अगर कोई आंख से न छुए, तो आप बड़े उदास लौटेंगे। यह दोहरा काम चल रहा है, छूने का, छुए जाने का। इंद्रियां प्रतिपल इस काम में संलग्न हैं। आपको पता भी नहीं चलता कि यह हो रहा है। यह खयाल में भी नहीं आता।

इंद्रियां पूरे समय स्पर्श को लालायित और स्पर्श देने को और लेने को आतुर हैं। ले रही हैं।

तो जिस व्यक्ति को इंद्रियों को विषयों तक जाने से रोकना है, उसे इंद्रियों की इस सूक्ष्म स्पर्श-व्यवस्था के प्रति जागरूक होना पड़ेगा। अत्यंत सूक्ष्म व्यवस्था है। आपको पता चलने के पहले घटित हो जाता है। इतना शीघ्रता से घटित होता है इंद्रिय का स्पर्श, कि आपको पता ही तब चलता है, जब घटित हो जाता है। इसके प्रति जागना पड़े। इसे देखना पड़े। इसको स्मरण रखना पड़े।

तुम्हारी आंख सिर्फ देख रही है या स्पर्श भी कर रही है, इन दोनों में फर्क है। फर्क कैसे पता चलेगा? अगर सिर्फ देखा हो, तो पीछे कोई लकीर नहीं छूटेगी। और अगर स्पर्श भी किया हो, तो पीछे लकीर छूटेगी। अगर सिर्फ देखा हो, तो लौट कर नहीं देखना पड़ेगा; अगर स्पर्श भी किया हो, तो लौट कर भी देखना पड़ेगा। अगर सिर्फ देखा हो, तो स्मृति नहीं बनेगी; अगर स्पर्श भी किया हो, तो स्मृति बनेगी। अगर सिर्फ देखा हो, तो कल भी देखूं, ऐसी आकांक्षा नहीं जगेगी; अगर स्पर्श किया हो, तो फिर-फिर देखूं, ऐसी आकांक्षा जगेगी।

आंख से सिर्फ देखने का काम लें, स्पर्श करने का नहीं, तो कृष्ण जो कह रहे हैं, पहली घटना घट सकती है। हाथ से सिर्फ छूने का काम लें, स्पर्श करने का नहीं। अब आप कहेंगे, छूना और स्पर्श करना तो बिलकुल एक ही बात है। वही फर्क जो मैंने आंख के लिए कहा, सिर्फ देखने का काम आंख से, स्पर्श करने का नहीं। कान से काम सुनने का, स्पर्श करने का नहीं। कोई आवाज कान सुनता है, ठीक। लेकिन मीठी लग गई, तो छू ली गई। फिर आकांक्षा जगेगी, डिजायर पैदा होगी—और, और, और सुनूं। और सुनाई पड़े, तो स्पर्श हो गया। इंद्रिय ने रस लेना शुरू कर दिया। इंद्रिय सिर्फ उपकरण न रही, मालिक हो गई। इंद्रिय ने सिर्फ देखा नहीं, इंद्रिय ने पकड़ भी लिया।

जो योगी इंद्रिय को विषय से तोड़ता है, वह विषय और इंद्रिय के बीच स्पर्श को, संस्पर्श को तोड़ता है। देखना तो नहीं तोड़ा जा सकता। देखने से तोड़ने से कुछ फर्क नहीं पड़ता। आंख से स्पर्श विदा होना चाहिए। लेकिन कब होगा? जब आप जागेंगे, तो स्पर्श विदा हो जाएगा। क्या करेंगे? जब भी देखें, तब होश से यह भी देखें कि स्पर्श हो रहा है कि नहीं! सिर्फ देख रहे हैं? धीरे, धीरे, धीरे, फासला साफ दिखाई पड़ने लगेगा। और साफ दिखाई पड़ने लगता है कि मैंने स्पर्श किया कि देखा। और जब आप पाएंगे कि दिखाई पड़ने लगा स्पर्श किया, तभी आपको अनुभव हो जाएगा कि इंद्रियां जहां-जहां स्पर्श करती हैं, वहीं-वहीं बंधन को निर्मित करती हैं। जहां-जहां स्पर्श नहीं करतीं, वहां-वहां बंधन निर्मित नहीं होता।

संयमी का अर्थ है, जो इंद्रियों से उपकरण का काम लेता है, भोग का नहीं। संयमी का अर्थ है, जो इंद्रियों से भोगता नहीं, केवल उपयोग लेता है। असंयमी का अर्थ है, जो इंद्रियों से उपयोग कम लेता, भोग ज्यादा लेता। आंख से देखना उपयोग है। आंख से भोगना, स्पर्श करना, उपयोग नहीं है; भोग है। भोग बंधन है, उपयोग बंधन नहीं है।

इस स्पर्श की सूक्ष्म व्यवस्था को स्मरणपूर्वक देखने से व्यवस्था क्रमशः टूटती चली जाती है।

सप्रेशन संयम नहीं है; दमन संयम नहीं है।

संयम जागरण है—होश, रिमेंबरिंग, स्मृति। इसको प्रयोग करके देखें।

इसे देखते रहें और प्रयोग करते रहें, तो पहली घटना घट सकती है संयम की, अर्थात विषयों तक इंद्रियों का रस तिरोहित हो जाता है। विषय तक इंद्रियां जाती हैं उपयोग के लिए, भोग के लिए नहीं। सेतु टूट गया। तब जो व्यक्ति है, वह संयमी है। ऐसा संयमी व्यक्ति, कृष्ण कहते हैं, उपलब्ध हो जाता है।

42

संयम साधना—2

दूसरा, कृष्ण कह रहे हैं, भोग करते हुए भी, भोग में होते हुए भी इंद्रियों को विषयों से बिना तोड़े हुए, छूना ही नहीं, स्पर्श करते हुए भी, ज्ञानीजन बाहर हो जाते हैं।

उसकी प्रक्रिया और भी सूक्ष्म होगी, क्योंकि वह एक प्रतिशत के लिए है। यह अभी जो मैंने कहा, निन्यानबे प्रतिशत के लिए है। यह भी कठिन है। वह और भी कठिनतर है। स्पर्श करते हुए, इंद्रियों का उपयोग ही नहीं, भोग करते हुए। फिर क्या करें? फिर कैसे सेतु टूटेगा? भोग करते हुए भी, पूरा भोग करते हुए भी, जो भोग के क्षण में जाग सकता है; भोग के क्षण में...!

भोजन कर रहे हैं। स्वाद की तरंगें बह रही हैं। स्वाद में उतरा रहे, डूब रहे। ठीक उस क्षण में स्वाद के प्रति जो जाग जाए, देखे कि डूब रहा, उतरा रहा; भागता नहीं, तोड़ता नहीं; स्वाद पूरी तरह लेते हुए सिर्फ होश से भर जाऊं, तो अचानक दिखाई पड़ेगा, मैं भोक्ता नहीं हूं; भोग है; मैं द्रष्टा हूं। भोग है; मैं द्रष्टा हूं, भोक्ता नहीं हूं। द्रष्टा का भोक्ता-भाव गिर जाता है। तो वह भोगता रहे! संगीत को सुनेगा; कान गदगद होंगे, आनंदातिरेक में नाचने लगेंगे। कान के भीतर तरंगें उठ कर सुख देने लगेंगी। कान पूरी तरह रसमग्न हो जाएगा। स्पर्श करेगा ध्वनि को, संगीत को। लेकिन भीतर जो चेतना है, वह जाग कर देखेगी: ऐसा हो रहा है; दिस इज़ हैपनिंग। और ऐसे स्मरण से कि ऐसा हो रहा है, तत्काल कोई गहरा सेतु टूट जाता है; जहां से भीतर की चेतना भोक्ता नहीं रह जाती, सिर्फ द्रष्टा रह जाती है।

इस मार्ग से भी ज्ञानीजन उस परात्पर सत्य को उपलब्ध हो जाते हैं। कृष्ण ने फिर ये दो बातें कहीं। ये अलग-अलग जरा भी नहीं हैं। व्यक्ति की बात है, उसे क्या निकटतम सुलभ मालूम पड़ सकता है।

दूसरा कठिन सिर्फ इसलिए है कि डर यही है कि हम अपने को धोखा दे लें। वही उसकी कठिनाई है। डिसेप्शन का डर है। आत्म-वंचना का डर है। दूसरे की कठिनाई आत्मवंचना है। एक आदमी कह सकता है कि ठीक है। हम तो वेश्या के घर नृत्य देखते हैं, साक्षी रहते हैं। रस लेते हैं पूरा, लेकिन ज्ञानीजन की तरह लेते हैं! परीक्षा बहुत कठिन है। लेकिन परीक्षाएं भी निकाली गई हैं। तंत्र ने बहुत सी परीक्षाएं निकालीं। एक अदभुत परीक्षा तंत्र ने निकाली है, वह मैं आपसे कहूं। क्योंकि विश्व में वैसा प्रयोग और कहीं हुआ नहीं।

वह परीक्षा यह थी कि जो व्यक्ति कहता है कि मैं भोगते हुए भी तटस्थ होता हूं, द्रष्टा होता हूं; तंत्र ने कहा कि तुम शराब पीओ और शराब पीते हुए तुम होश में रहो; और हम शराब पिलाए चले जाएंगे, तुम होश में रहना। अगर घटना घट गई है साक्षी की, द्रष्टा की—भोगते हुए—तो शराब में भी होश कायम रहना चाहिए। क्योंकि नशा करेंगी इंद्रियां; तुम जागे रहना; तुम मत सो जाना।

तो तंत्र ने अदभुत प्रक्रिया निकाली नशे की—शराब, गांजा, अफीम। और आखिर तक बात वहां पहुंची कि जब अफीम, गांजा, इस सबका भी कोई असर नहीं हुआ साधक पर और वह जागा ही रहा, उतने ही होश में, जितने होश में वह बिना नशे का था, तब सांप से भी जीभ पर कटाने के प्रयोग किए गए

और उसमें भी जागा रहा। सांप जीभ पर काट लिया है, जहर हो गया। आदमी मर जाए! और वह भीतर की चेतना की ज्योति जागी हुई है।

यह आमतौर पर हमको कठिन मालूम पड़ता है कि साधु-संन्यासी गांजा पीएं, शराब पीएं। वह कभी परीक्षा थी। कभी वह परीक्षा थी, अब वह रोज का उपक्रम है। रोज सांझ को गांजा पी रहे हैं! कभी वह एक बहुत गहरी परीक्षा थी। लेकिन दूसरे वर्ग की ही परीक्षा है, पहले वर्ग की परीक्षा वह नहीं है।

43

संतुलन ध्यान—1

लाओत्से के साधना-सूत्रों में एक गुप्त सूत्र आपको कहता हूं, जो उसकी किताबों में उल्लिखित नहीं है, लेकिन कानों-कान लाओत्से की परंपरा में चलता रहा है। वह सूत्र है लाओत्से की ध्यान की पद्धति का। वह सूत्र यह है।

लाओत्से कहता है कि पालथी मार कर बैठ जाएं और भीतर ऐसा अनुभव करें कि एक तराजू है, बैलेंस, एक तराजू। उसके दोनों पलड़े आपकी दोनों छातियों के पास लटके हुए हैं और उसका कांटा ठीक आपकी दोनों आंखों के बीच, तीसरी आंख जहां समझी जाती है, वहां उसका कांटा है। तराजू की डंडी आपके मस्तिष्क में है। दोनों उसके पलड़े आपकी दोनों छातियों के पास लटके हुए हैं। और लाओत्से कहता है, चौबीस घंटे ध्यान रखें कि वे दोनों पलड़े बराबर रहें और कांटा सीधा रहे।

लाओत्से कहता है कि अगर भीतर उस तराजू को साध लिया, तो सब सध जाएगा।

लेकिन आप बड़ी मुश्किल में पड़ेंगे! जरा इसका प्रयोग करेंगे, तब आपको पता चलेगा। जरा सी श्वास भी ली नहीं कि एक पलड़ा नीचा हो जाएगा, एक पलड़ा ऊपर हो जाएगा। अकेले बैठे हैं, और एक आदमी बाहर से निकल गया दरवाजे से। उसको देख कर ही, अभी उसने कुछ किया भी नहीं, एक पलड़ा नीचा, एक ऊपर हो जाएगा।

लाओत्से ने कहा है कि भीतर चेतना को एक संतुलन! दोनों विपरीत द्वंद्व एक से हो जाएं और कांटा बीच में बना रहे।

जीवन में सुख हो या दुख, सम्मान या अपमान, अंधेरा या उजाला, भीतर के तराजू को साधते चला जाए कोई, तो एक दिन उस परम संतुलन पर आ जाता है, जहां जीवन तो नहीं होता, अस्तित्व होता है; जहां लहर नहीं होती, सागर होता है; जहां मैं नहीं होता, सब होता है।

44

संतुलन ध्यान—2

तिब्बत में एक बहुत छोटी सी विधि है—बैलेंसिंग, संतुलन उस विधि का नाम है।

कभी घर में खड़े हो जाएं सुबह स्नान करके, दोनों पैर फैला लें और खयाल करें कि आपके बाएं पैर पर ज्यादा जोर पड़ रहा है कि दाएं पैर पर ज्यादा जोर पड़ रहा है। अगर बाएं पर पड़ रहा है तो फिर आहिस्ते से जोर को दाएं पर ले जाएं। दो क्षण दाएं पर जोर को रखें, फिर बाएं पर ले जाएं।

एक पंद्रह दिन, सिर्फ शरीर का भार बाएं पर है कि दाएं पर, इसको बदलते रहें। और फिर यह तिब्बती प्रयोग कहता है कि फिर इस बात का प्रयोग करें कि दोनों पर भार न रह जाए, आप दोनों पैर के बीच में रह जाएं।

और एक तीन सप्ताह का प्रयोग और जब आप बिलकुल बीच में होंगे—भार न बाएं पर होगा, न दाएं पर होगा—जब आप बिलकुल बीच में होंगे—तब आप ध्यान में प्रवेश कर जाएंगे। ठीक उसी क्षण में आप ध्यान में चले जाएंगे।

ऊपर से देखने पर लगेगा, इतनी सी आसान बात! करेंगे तो आसान भी मालूम पड़ेगी और कठिन भी मालूम पड़ेगी। बहुत सरल मालूम पड़ती है, दो पंक्तियों में कही जा सकती है, लेकिन लाखों लोगों ने इस छोटे से प्रयोग के द्वारा परम आनंद को उपलब्ध किया है। जैसे ही आप बैलेंस होते हैं—न बाएं पर रह जाते, न दाएं पर रह जाते, जैसे ही दोनों के बीच में रह जाते हैं, वैसे ही आप पाते हैं कि वह बैलेंसिंग, वह संतुलन आपकी कांशसनेस का, चेतना का भी बैलेंसिंग हो गया। चेतना भी बैलेंस्ड हो गई, चेतना भी संतुलित हो गई। तत्काल तीर की तरह भीतर गति हो जाती है।

45

श्रेष्ठतम क्षण का ध्यान

ईसाइयों का एक पुराना संप्रदाय था—ईसेन, जिसमें जीसस को दीक्षा मिली थी। ईसेन संप्रदाय का एक ध्यान-मार्ग था। और ध्यान-मार्ग यह था कि तुम्हारे जीवन में अगर कभी भी कोई ऐसा क्षण घटा हो, जिस क्षण में विचार न रहे हों और तुम आनंद से भर गए हो, तो उसी क्षण को पुनः-पुनः स्मरण करके,

उसी पर ध्यान करो। वह क्षण कोई भी रहा हो, उसी को बार-बार स्मरण करके उस पर ही ध्यान करो, क्योंकि उस क्षण में तुम अपनी श्रेष्ठतम ऊंचाई पर थे, जहां तक तुम अब तक जा सके हो। उसी को खोदो, उसी जगह मेहनत करो।

सभी के जीवन में ऐसा कोई क्षण है। उसी की आशा में आदमी जीए चला जाता है कि शायद वह क्षण फिर आए। इसी भरोसे में जीए चला जाता है कि शायद वह क्षण और गहरा हो जाए। ऐसा आदमी खोजना कठिन है, जिसके जीवन में एकाध ऐसी स्मृति न हो। कभी-कभी तो बहुत क्षुद्र कारणों में वैसी घटना घट जाती है। कभी तुम जा रहे हो, सूरज की किरणें तुम्हारे सिर पर पड़ रही हैं, अचानक तुम पाते हो कि तुम शांत हो। तुमने कुछ किया नहीं है, आकस्मिक, तुम उस जगह आ गए हो, जहां ट्यूनिंग हो गई।

कभी बहुत साधारण सी घटनाओं में, कि तुम अपने बिस्तर पर पड़े हो, सुबह तुम्हारी आंख खुली और अचानक तुम पहचान भी नहीं पाते हो कि तुम कौन हो! वह जो आदमी रात सोया था—उपद्रव, परेशानी, चिंता से भरा—वह नहीं है। एक क्षण को तुम्हें यह भी समझ में नहीं आता कि तुम कहां हो! तुम एकदम शांत हो। तुम इतने शांत हो कि खुद की पहचान भी भूल गई है। कभी किन्हीं भी कारणों में—उनका कोई संबंध नहीं है। तुम्हारे भीतर जिंदगी चलती रहती है। कभी तुम्हारे अनजाने भी भीतर के खंड-खंड इकट्ठे पड़ जाते हैं—संयोगवश। और तब कोई भी घड़ी बाहर मौजूद हो, तुम अचानक शांत हो जाते हो।

इन स्मृतियों को संजोओ। फिर अगर तुम ध्यान कर रहे हो, तो ऐसी स्मृतियां बढ़ती चली जाएंगी। इन स्मृतियों को इकट्ठा करो। इनको हृदय के कोने में इकट्ठा करते जाओ, ताकि वे गहरी हो जाएं। और सारी स्मृतियां जितनी तुम्हारे जीवन में इस आनंद की घटी हों, जब तुमने संगीत जाना हो, उन सबको पास ले आओ, उनको एकाग्र कर दो एक बिंदु पर, ताकि उन सबके सहारे तुम आगे बढ़ सको। अभी तुम्हें खंड-खंड मिलेंगे, तुम इन्हें इकट्ठे करते जाना। कभी ये खंड इकट्ठे होते जाएंगे, तो और बड़े खंडों के मिलने की संभावना बढ़ती जाएगी। ऐसे धीरे-धीरे एक-एक ईंट रख कर वह भवन खड़ा होगा, जिस दिन तुम उस महा-संगीत को सुन सकोगे, जिसे जीवन का संगीत कहा जा रहा है।

लेकिन आदमी बहुत उलटा है। हम दुख की स्मृति संजोते हैं! हम दुख में बड़ा रस लेते हैं। हम बार-बार दुख की चर्चा करते हैं। लोगों की बातें सुनो, वे अपना दुख रोते रहते हैं। सुख कोई भी नहीं हंसता, दुख लोग रोते हैं! तो यह भाषा में शब्द ही नहीं कि फलां आदमी सुख हंस रहा है। भाषा में शब्द यह है कि फलां आदमी दुख रो रहा है। लोग अपना दुख एक-दूसरे को बताते रहते हैं, जैसे कि दुख कुछ बताने जैसा है! जैसे कि दुख कुछ बड़ी घटना है! कोई आपने महान कार्य किया है कि आप दुखी हैं!

लेकिन क्यों आदमी दुख की इतनी चर्चा करता है? और उसे पता नहीं कि वह अपना आत्मघात कर रहा है। क्योंकि दुख की चर्चा से दुख घना हो जाता है। दुख की चर्चा से दुख इकट्ठा हो जाता है। दुख की चर्चा से दुख पर ध्यान बंट जाता है, ध्यान बंध जाता है। दुख की चर्चा से दुख घनीभूत होता है और नये दुखों को पैदा करता है। क्योंकि तुम जो संजोते हो, उसी को जानने में समर्थ होते चले जाते हो।

सुख की कोई बात ही नहीं करता! सुख को हम छोड़ कर ही चलते हैं। वैसे सुख है भी कम। लेकिन उसके कम होने का एक कारण यह भी है कि हम सुख को इकट्ठा नहीं करते हैं। हम दुख को इकट्ठा करते हैं।

पर क्यों? आदमी दुख की चर्चा क्यों करता है?

उसके कारण हैं। क्योंकि जब भी कोई आदमी दुख की चर्चा करता है, तो उसका अर्थ केवल इतना ही है कि वह दूसरे की सहानुभूति चाहता है, दूसरे का प्रेम चाहता है। और सुख की चर्चा इसलिए नहीं करता कि सुख से कोई सहानुभूति नहीं करता। और सुखी आदमी से लोग ईर्ष्या करते हैं, प्रेम नहीं करते। इस भय से कि दूसरे ईर्ष्या करेंगे, इस भय से कि कोई सहानुभूति न देगा, आदमी दुख की चर्चा करता है। आदमी सहानुभूति का प्यासा है, प्रेम का प्यासा है।

लेकिन ध्यान रहे, दुख सुन कर जो सहानुभूति की जाती है, वह प्रेम नहीं है। और दुख सुन कर जो दया प्रकट की जाती है, वह आपकी दीनता की स्वीकृति है। लेकिन इस भांति आप और दीन होते चले जाएंगे। और अगर आपने एक ही रस बना लिया है अपने जीवन का, सहानुभूति पाना, तो फिर आप झूठे दुखों की भी कल्पना कर लेंगे, जो कभी नहीं घटे। और धीरे-धीरे उनके घटने का रास्ता बना देंगे।

ध्यान रहे, अपने दुख की चर्चा मत करो। उससे क्या प्रयोजन है?

सुख की चर्चा के लिए नहीं कह रहा हूं, लेकिन अपने सुख को प्रकट करो। दुख को एकांत में विसर्जित कर दो। द्वार-दरवाजे बंद कर लो, हृदयपूर्वक रो लो, चीख लो, चिल्ला लो; लेकिन दूसरे के पास जा कर दुख की चर्चा मत करो। क्योंकि न तो तुम दूसरे के सुख में सहयोगी हो रहे हो, तुम उसे भी दुखी कर रहे हो। इसलिए दुख की चर्चा करने वाले पर हम सहानुभूति कितनी ही बताएं, लेकिन उस आदमी से हम बचना चाहते हैं। वह न मिले तो अच्छा है। क्योंकि वह अपने दुख की तरंगें हम तक भी पहुंचा देता है। और अगर हम उसकी दुख की चर्चा सुनते भी हैं, तो इसी आशय में कि वह चुप हो जाए, तो हम अपने दुख की चर्चा उसको सुनाएं। ऐसा दुख का लेन-देन चलता रहता है।

दुख की बात ही बंद कर दो। दुख तुम्हारा निजी है, उसे तुम निज में ही भोग लो। दबाने को नहीं कह रहा हूं, उसे प्रकट तो जरूर करो; लेकिन शून्य-आकाश में, जहां वह किसी की भी छाती पर बोझ नहीं बनेगा। और दुख बता कर सहानुभूति मत मांगो। यह भिखमंगापन है। अकेले में छोड़ दो, दुख को विसर्जित कर दो।

और जब भी कोई तुम्हारे पास हो, तो तुम्हारे भीतर जो सुख की स्मृति है, उसको ऊपर ले आओ। जब भी तुम किसी के पास हो, तो तुम्हारे सुख को प्रकट करो, अपने सुख को नाचो और हंसो, और अपने सुख को जीओ, ताकि तुम दूसरे के दुख को थोड़ा कम कर पाओ। और तुम जितना इस सुख को जीने लगोगे, उतना ही सुख बढ़ता जाएगा। और जितना तुम इस सुख की स्मृति करोगे, उतनी ही ज्यादा गहन सुख में तुम्हारी गति होने लगेगी।

हम जिस पर ध्यान देते हैं, वह बढ़ता जाता है। ध्यान बढ़ोत्तरी का मार्ग है।

यह जो ध्यान की तलाश है, यह आप दुख के साथ मत जोड़ना, नहीं तो आप और दुखी होते चले जाएंगे। या दूसरे को दुख दे कर भी ध्यान मत मांगना आप, क्योंकि तब आप और दुखी होते चले जाएंगे।

आप अपने जीवन के सुख-क्षणों को इकट्ठा करना, उनकी स्मृति संजोना। ध्यान के प्रयोग में जब भी आपको कोई अनुभव मिले—कोई ताजी हवा आपके भीतर से गुजर जाए, कोई सूरज की किरण कौंध जाए, कोई फूल खिल जाएं भीतर, कोई सुगंध भर जाए, कोई संगीत का एक टुकड़ा आपको सुनाई पड़ जाए—उसे इकट्ठा करते जाना, हृदय के गहन में उसे संजोते जाना। और उसको ज्यादा से ज्यादा जीने की कोशिश करना। उसे ज्यादा से ज्यादा पुकारना। उसे ज्यादा से ज्यादा अनुभव में उतारना। जब भी मौका मिले, एकांत क्षण मिले, आंख बंद कर लेना, उसी क्षण में लौट जाना, उसे पुनः जीना। तो आप उसको

बढ़ा रहे हैं, और आप उसको जीवन और ध्यान दे रहे हैं। आप धीरे-धीरे पाएंगे, और बड़े खंड आने लगे, और बड़े टुकड़े उतरने लगे, और चीजें साफ होने लगीं, संगीत का बोध और प्रगाढ़ होने लगा।

46

'मैं—तू' ध्यान

कभी एक छोटा प्रयोग करें...चौबीस घंटे के लिए 'मैं' को केंद्र से हटा दें, सिर्फ चौबीस घंटे के लिए; 'तू' को केंद्र पर रख लें। सिर्फ चौबीस घंटे के लिए सतत स्मरण रखें कि तू। जब पैर में पत्थर लग जाए, तब भी; जब कोई गाली दे जाए, तब भी; जब कोई अंगारा फेंक दे ऊपर, तब भी; जब कोई फूल की माला डाले, तब भी; जब कोई चरणों में सिर रख दे, तब भी—चौबीस घंटे के लिए स्मरण रख लें कि मैं नहीं हूं केंद्र पर, तू है। तो आपकी जिंदगी में एक नये अध्याय का प्रारंभ हो जाएगा। अगर चौबीस घंटे यह स्मरण संभव हो सका, अगर पूरा न भी हुआ, चौबीस घंटे में चौबीस मिनट भी पूरा हो गया, तो आप वही आदमी दुबारा नहीं हो सकेंगे; क्योंकि एक बार तू के साथ जीने की निश्चिंतता मिल जाए तो फिर आप मैं के साथ कभी जीना न चाहेंगे।

मैं से भार तू पर चला जाए तो शुद्ध चेतना को खोजना आसान हो जाता है; या शुद्ध चेतना मिल जाए तो मैं से तत्काल तू की तरफ भाव चला जाता है। इसलिए उसे 'त्वम्' कहा है।

47

इंद्रियों को थका डालें

सारे ध्यान के प्रयोग, अलग-अलग विधियों वाले प्रयोग, एक चीज को मौलिक रूप से स्वीकार करते हैं कि आपकी सारी इंद्रियां शांत हो जाएं। किस ढंग से शांत हों, इसमें भेद है। लेकिन शांत हो जाएं, इसमें कोई विवाद नहीं है। सब इंद्रियां शांत हो जाएं और आप भीतर रह जाएं। जगत बाहर रह जाए, आप भीतर रह जाएं और बीच में कोई सेतु न रहे, कोई जोड़ न रहे। उस क्षण में अंतरात्मा आविर्भूत होती है, प्रकट हो जाती है।

यहां हम जो (सक्रिय ध्यान का) प्रयोग कर रहे हैं, (प्रथम) तीन चरणों में आपकी पूरी इंद्रियों का उपयोग किया जाता है। जितनी ज्यादा तेजी से आप कर सकें, उपयोग कर लें; थका दें। ताकि दस मिनट के लिए इंद्रियां थक कर भी शांत हो जाएं, तो भी भीतर की झलक आ जाए।

सूफी फकीर एक नृत्य करते हैं, दरवेश-नृत्य। बड़ा कीमती है। जरा आपकी हिम्मत थोड़ी बढ़ती जाएगी तो जल्दी हम दरवेश-नृत्य में प्रवेश करने लगेंगे। लेकिन दरवेश-नृत्य काफी लंबा चलता है, कोई पांच घंटे। धीरे-धीरे आप कर लेंगे। पांच घंटे फकीर नाचता ही रहता है। सब थक जाता है। जब तक अपने आप शरीर गिर नहीं जाता, तब तक नृत्य जारी रहता है। अपनी तरफ से नहीं रोकना है, अपनी तरफ से कुछ करना ही नहीं है। नाचते ही जाना है, नाचते ही जाना है। जब तक आखिरी बूंद भी शेष रह जाए शक्ति की, तब तक नाचते ही जाना है।

बेईमानी जरा भी नहीं चलेगी कि आदमी सोचे कि अब थक गए, बैठ जाएं। नहीं, जब तक आपको लग रहा है कि आप बैठ सकते हैं, अभी कम से कम बैठने की ताकत बची है, इसको भी नाचने में लगा देना है। जब तक कि शरीर को आप देखें न कि गिर रहा है...।

बड़ा अनूठा अनुभव है। जब आपकी सारी शक्ति शरीर की चुक जाती है और आप देखते हैं कि शरीर गिर रहा है—आप कुछ भी नहीं कर सकते, न रोक सकते, न नाच सकते, न आप सम्हाल सकते—बस शरीर गिर रहा है। उस क्षण साक्षी का भाव अचानक जग जाता है। और जब शरीर बिलकुल थक जाता है, तो कोई भी इंद्रिय सक्रिय नहीं रह जाती, द्वार बंद हो जाते हैं, सेतु टूट जाते हैं। सूफी भीतर प्रवेश कर जाता है।

हम जो कीर्तन का प्रयोग कर रहे हैं, वह सूफी-नृत्य का ही हिस्सा है। बहुत लोग मुझसे आकर पूछते हैं कि भारत में ऐसा तो कीर्तन होता नहीं! इसका भारतीय कीर्तन से कोई सीधा संबंध है भी नहीं। यह कोई पूजा-पाठ नहीं है। इसका कोई संबंध कृष्ण, गोपाल से नहीं है। वह तो केवल बहाना है। वह तो केवल खूंटी है। उस बहाने आपको थकाने की चेष्टा है। इसलिए जो अपने को बचाएगा, वह मूल मुद्दा ही चूक गया। थका डालना है। इतने जोर से शक्ति का उपयोग करना है कि आप बिलकुल थक जाएं, शरीर मुर्दा हो जाए। जैसे सारा प्राण सूख गया। उस क्षण में इंद्रियां बंद हो जाती हैं। अंतरात्मा की झलक...।

और एक बार झलक मिलने लगे, फिर कठिनाई नहीं है। एक दफे रास्ता साफ हो जाए, फिर जरूरत नहीं है कि आप थकाएं। फिर तो आंख भी बंद करें, आप भीतर जा सकते हैं। एक दफे वह रास्ता साफ हो जाए, पहचान में आ जाए, पगडंडी कौन सी है। जैसे अंधेरी रात में बिजली चमक जाए और रास्ता दिख जाए एक क्षण को। फिर बिजली खो भी जाए तो भी फिर आप अंधेरे में आश्वस्त चल सकते हैं। आप जानते हैं, रास्ता है। एक दफे देखा है। अब आप खोज सकते हैं।

ये सारे ध्यान के प्रयोग मौलिक रूप से थकाने के प्रयोग हैं, ताकि इंद्रियां थक कर बैठ जाएं। एक रास्ता है जबरदस्ती बिठाने का। मैं उसके पक्ष में नहीं हूं, क्योंकि जबरदस्ती कोई भी इंद्रियों को बैठा नहीं सकता। हालत वैसी हो जाती है, जैसे छोटे बच्चे को कह दो कि बैठो शांति से। तो वह बैठ जाता है, लेकिन उसकी सारी ताकत शांति से बैठने में लग रही है। एक-एक चीज को खींचे हुए है। तना हुआ है। शिथिल भी नहीं हो पाता। विश्राम भी नहीं कर पाता। तनावग्रस्त है।

न, उस बच्चे को कहो कि दौड़ो, एक पच्चीस चक्कर लगाओ। फिर कहने की जरूरत नहीं कि शांत बैठ जाओ। पच्चीस चक्कर के बाद वह खुद ही शांत बैठ जाएगा। वह शांति बड़ी अलग होगी। उस

शांति में कोई तनाव नहीं होगा, कोई बेचैनी नहीं होगी। बल्कि शांति में एक सुख होगा, एक राहत होगी, एक झलक होगी विश्राम की।

इंद्रियों को थका डालें, इतना थका डालें कि क्षण भर को भी अगर वे विश्राम में पहुंच जाएं, तो उतने क्षण भर को आपका प्रवेश भीतर हो जाए।

दोपहर के समय करने वाली ध्यान विधियां

48
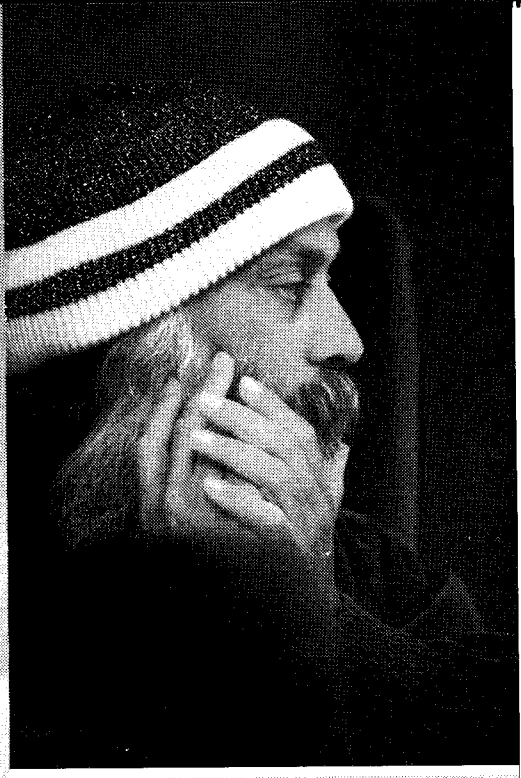
श्वास : सबसे गहरा मंत्र

श्वास भीतर जाती है, इसका आपके प्राणों में पूरा बोध हो कि श्वास भीतर जा रही है। श्वास बाहर जाती है, इसका भी आपके प्राणों में पूरा बोध हो कि श्वास बाहर जा रही है। और आप पाएंगे कि एक गहन शांति उतर आई है। यदि आप श्वास को भीतर जाते हुए और बाहर जाते हुए, भीतर जाते हुए और बाहर जाते हुए देख सकें, तो यह अभी तक खोजे गए मंत्रों में से सबसे गहरा मंत्र है।

श्वास हमेशा वर्तमान में है। हम अतीत में श्वास नहीं ले सकते और न ही हम भविष्य में श्वास ले सकते हैं। श्वास लेना हमेशा इसी क्षण में है। लेकिन हम अतीत के बारे में सोच सकते हैं और हम भविष्य के बारे में सोच सकते हैं। शरीर तो वर्तमान में रहता है, लेकिन मन अतीत और भविष्य के बीच झूलता रहता है। और शरीर और मन के बीच में एक विभाजन हो जाता है। शरीर वर्तमान में रहता है और मन कभी भी वर्तमान में नहीं रहता। और वे कभी मिलते नहीं, वे कभी एक-दूसरे के सामने नहीं आते। और उसी विभाजन के कारण विषाद, चिंता और तनाव पैदा होते हैं। हर एक तनावग्रस्त है, वह तनाव ही चिंता है। मन को वर्तमान में लाना है, क्योंकि वर्तमान के अतिरिक्त दूसरा कोई समय है ही नहीं।

49

भीतरी आकाश का अंतरिक्ष-यात्री

कई बार गहरे ध्यान में आपको अचानक लगेगा कि जैसे गुरुत्वाकर्षण खो गया है; जैसे कि अब कोई चीज आपको नीचे नहीं खींचती; जैसे कि उड़ना है या नहीं उड़ना, यह निर्णय लेना अब आपके ऊपर है। यह अब आप पर निर्भर है, यदि आप चाहें तो आसानी से आकाश में उड़ सकते हैं। पूरा आकाश आपका है। लेकिन जब आप आंखें खोलते हैं तो अचानक देखते हैं कि शरीर भी है, पृथ्वी भी है, गुरुत्वाकर्षण भी है।

जब आप आंख बंद करके ध्यान कर रहे थे, जब आप अपने शरीर को भूल गए थे, आप दूसरे ही आयाम में प्रवेश कर गए थे—प्रभु की गरिमा के आयाम में, उसके प्रसाद के आयाम में।

उसका आनंद लें, उसे होने दें। क्योंकि अगर आप सोचने लगे कि यह तो पागलपन है तो आप

उसे रोक देंगे और वह रोकना आपके ध्यान में बाधक होगा। उसका वैसे ही आनंद लें जैसे सपने में आप उड़ते हैं। अपनी आंखें बंद कर लें। ध्यान में जहां भी आप जाना चाहें, जाएं। आकाश में ऊंचे से ऊंचे उड़ें। और जल्दी ही और बहुत सी बातें अनुभव होने लगेंगी। और डरें नहीं। यह सबसे बड़ी साहसिक यात्रा है, चांद पर जाने से भी ज्यादा; अंतराकाश का अंतरिक्ष-यात्री होना सबसे बड़ा साहस है।

50

आकाश सा विराट एवं अणु सा छोटा

जो शारीरिक असंतुलन और उड़ने की संवेदनाओं से व्याकुल हो जाते हैं, उनके लिए ओशो ने यह सुंदर विधि दी है।

पांच-दस मिनट अपने बिस्तर पर बैठ जाएं और आंखें बंद रखे हुए कल्पना करें कि आपका शरीर बड़ा, बड़ा, बड़ा, बड़ा होता जा रहा है। उसे जितना बड़ा बना सकें, बना लें—इतना बड़ा बना लें कि वह कमरे की दीवारों को करीब-करीब छूने लगे।

आपको लगेगा कि अब आप अपने हाथ भी नहीं हिला सकते—बहुत कठिन है—आपका सिर छत को छू रहा है। पहले दो-तीन दिन सिर्फ इतना ही भाव करें; फिर कमरे के बाहर फैलना शुरू कर दें। पूरे घर को भर दें और आपको बिलकुल अनुभव होगा कि कमरा आपके भीतर है। फिर घर के बाहर फैलना शुरू कर दें—पूरे पड़ोस को भर दें और महसूस करें कि पूरा पड़ोस आपके भीतर है। और फिर पूरे आकाश को भर दें और महसूस करें कि सूरज और चांद-तारे आपके भीतर घूम रहे हैं।

ऐसा दस-बारह दिन तक रोज करते रहें। धीरे-धीरे पूरे आकाश को भर दें। जिस दिन आप पूरे आकाश को भर दें, उस दिन उलटी प्रक्रिया शुरू करें। उलटी प्रक्रिया में, बैठ जाएं और कल्पना करें कि आप छोटे हो रहे हैं। उलटी दिशा में चलना शुरू करें। आपका शरीर इतना बड़ा नहीं है जितना कि लगता है, वह एक फुट जितना ऊंचा हो गया है। आप एक छोटे खिलौने जैसे हैं—और आप इसे बराबर महसूस करेंगे। यदि आप विशाल होने की कल्पना कर सकते हैं तो छोटे होने की कल्पना भी कर सकते हैं। फिर और छोटे हो जाएं—इतने छोटे कि अपनी मुट्ठी में आ सकें। फिर और छोटे...फिर और छोटे...और बारह दिन में इतने छोटे हो जाएं कि खुद को ढूंढ़ ही न सकें। अणु की तरह इतने सूक्ष्म हो जाएं कि आपको ढूंढ़ना ही मुश्किल हो कि आप कहां हैं।

पहले अपने आपको आकाश जितना विशाल कर लें और फिर अपने आपको एक अदृश्य अणु जितना छोटा कर लें—बारह दिन तक एक दिशा में और फिर बारह दिन तक दूसरी दिशा में। आप इतना स्वस्थ, इतना आनंदित और इतना केंद्रित महसूस करेंगे जिसकी कि आप कल्पना भी नहीं कर सकते।

51

एक का अनुभव

पहला चरण :
कुर्सी में आराम से बैठ जाएं, शरीर को आरामदायक स्थिति में कर लें।

दूसरा चरण :
आंखें बंद कर लें।

तीसरा चरण :
श्वास को शिथिल कर लें। श्वास जितनी सहज हो सके, कर लें। हर बाहर जाती श्वास के साथ कहें : 'एक।' जैसे ही श्वास बाहर जाने लगे, कहें : 'एक।' श्वास भीतर आते समय कुछ मत कहें। सिर्फ हर बाहर जाती श्वास के साथ कहें : 'एक...एक...एक।' और सिर्फ कहें ही नहीं, महसूस भी करें कि पूरा अस्तित्व एक है, अखंड है। ऐसा दोहराएं नहीं, ऐसा महसूस करें। और 'एक' कहना मदद करेगा। इसे रोज बीस मिनट तक करें।

निश्चित कर लें कि जब आप यह प्रयोग कर रहे हों तो कोई आपको बाधा न दे। आप अपनी आंखें खोल कर घड़ी देख सकते हैं, लेकिन अलार्म न लगाएं। ऐसी कोई भी चीज जो आपको चौंकाए, ठीक नहीं होगी। तो जहां आप यह प्रयोग कर रहे हैं उस कमरे में फोन भी मत रखें। और कोई द्वार भी न खटखटाए। उन बीस मिनटों के लिए आपको पूर्ण विश्राम में रहना है। यदि आसपास बहुत शोर हो तो कान में रुई या इयर-प्लग का उपयोग करें।

हर बाहर जाती श्वास के साथ 'एक' कहना आपको इतना शांत, इतना मौन और इतना समग्र कर देगा कि जिसकी आप कल्पना भी नहीं कर सकते। इसे दिन के समय ही करें, रात में कभी न करें। नहीं तो आपकी नींद खराब हो जाएगी। क्योंकि यह इतना विश्रामदायी होगा कि फिर आपको नींद नहीं आएगी, आप इतने तरोताजा महसूस करेंगे। तो सुबह करना सबसे अच्छा है, या फिर दोपहर में। लेकिन रात के समय में कभी न करें।

52

आंतरिक मुस्कान

जब भी आप खाली बैठे हों और कुछ करने को न हो, तो अपने नीचे के जबड़े को शिथिल कर लें और मुंह को हलका सा खोल लें। मुंह से श्वास लेना शुरू करें, लेकिन बहुत गहरी नहीं। शरीर को ही श्वास लेने दें ताकि श्वास उथली ही रहे। और वह और-और उथली हो जाएगी। और जब आप देखेंगे कि श्वास काफी उथली हो गई है और मुंह खुला हुआ है और आपका जबड़ा शिथिल है, तो आपका पूरा शरीर बहुत विश्रामपूर्ण अनुभव करेगा।

उस क्षण में एक मुस्कान उठती महसूस करें—चेहरे पर ही नहीं बल्कि अपने पूरे प्राणों पर। और आपको बराबर अनुभव होगा। यह ऐसी मुस्कान नहीं है जो ओंठों पर आती है—यह अस्तित्वगत मुस्कान है जो भीतर-भीतर फैलती है।

इसको करने से ही खयाल आएगा कि यह क्या है, क्योंकि इसे समझाया नहीं जा सकता। चेहरे पर ओंठों से मुस्कुराने की कोई जरूरत नहीं है, बल्कि ऐसे जैसे कि आप पेट से मुस्कुरा रहे हों; जैसे पेट से मुस्कान उठ रही हो। और यह एक मुस्कान है, हंसी नहीं; इसलिए यह बहुत ही कोमल और नाजुक है—जैसे कि एक गुलाब का फूल पेट में खिल रहा हो और उसकी सुगंध पूरे शरीर पर फैल रही हो।

एक बार आपको खयाल आ जाए कि यह मुस्कान क्या है, तो आप चौबीस घंटे आनंदित रह सकते हैं। और जब भी आपको लगे कि वह आनंद खो रहा है, बस आंखें बंद करें और उस मुस्कान को फिर से अनुभव में ले लें। और वह वहां होगी। और दिन में जितनी बार भी आप चाहें उस मुस्कान का आनंद ले सकते हैं। वह सदा ही वहां मौजूद है।

53

ओशो

हर बाहर जाती श्वास के साथ भीतर कहें: 'ओशो।' बहुत जोर से नहीं, केवल फुसफुसाहट की तरह, लेकिन भीतर, ताकि आप सुन सकें। जब श्वास भीतर आए तो सिर्फ प्रतीक्षा करें। जब श्वास बाहर जाए तो आप बुलाएं और जब श्वास वापस आए तो मुझे भीतर आने दें। कुछ करें मत—सिर्फ प्रतीक्षा करें। तो आपका काम केवल श्वास बाहर जाते समय है।

बाहर जाती श्वास के साथ अस्तित्व में चले जाएं। बाहर जाती श्वास लगभग ऐसी ही है जैसे कि बाल्टी को कुएं में डालना। और भीतर आती श्वास ऐसी है जैसे कि बाल्टी कुएं से बाहर खींची जा रही हो। यह केवल बीस मिनट की विधि है। पहले चार-पांच मिनट इसकी लय में आने के लिए और फिर बीस मिनट इसमें रहने के लिए, तो ज्यादा से ज्यादा पच्चीस मिनट लग सकते हैं।

आप इसे किसी भी समय कर सकते हैं। दिन में, रात में, किसी भी समय कर सकते हैं।

54

देखना ही ध्यान है

ध्यान कुछ और नहीं बल्कि अपनी आंखें खोलने की कला है, अपनी आंखों को स्वच्छ करने की कला है; चेतना के दर्पण पर जो धूल जमी है, उसे झाड़ने की कला है। धूल जम जाती है—यह स्वाभाविक है। मनुष्य हजारों-हजारों जन्मों से यात्रा पर है—धूल जम जाती है। हम सभी यात्री हैं, बहुत धूल जम चुकी है—इतनी ज्यादा धूल जम चुकी है कि दर्पण बिलकुल खो ही गया है। केवल धूल ही धूल है, पर्त-दर-पर्त धूल है और दर्पण का पता भी नहीं चलता। लेकिन दर्पण अब भी वहां है—वह खो नहीं सकता, क्योंकि वह आपका स्वभाव है। जो खो जाए वह स्वभाव नहीं हो सकता। ऐसा नहीं है कि आपके पास दर्पण है, आप ही वह दर्पण हैं। यात्री ही दर्पण है। वह उसे खो नहीं सकता, वह केवल उसे भूल सकता है—ज्यादा से ज्यादा, विस्मरण हो सकता है।

यह क्षण सब कुछ है। बस एक दृष्टि डालनी है, और वही ध्यान है—वह देखना ही ध्यान है। किसी भी चीज की, किसी भी स्थिति की सत्यता को देख लेना ही ध्यान है। ध्यान का कोई लक्ष्य नहीं है, इसलिए उसका कोई केंद्र भी नहीं है। चूंकि वहां कोई लक्ष्य नहीं है और कोई केंद्र नहीं है, इसलिए उसमें कोई अहंकार भी नहीं है। ध्यान में आप किसी केंद्र से नहीं बल्कि एक शून्य उपस्थिति से कार्य करते हैं। शून्यता से निकला प्रतिसंवेदन ही ध्यान है।

मन अतीत के अनुभवों के आधार पर कार्य करता है। ध्यान वर्तमान में, वर्तमान के आधार पर कार्य करता है। वह वर्तमान के प्रति शुद्ध प्रतिसंवेदन है, वह प्रतिक्रिया नहीं है। वह पूर्व-निष्कर्षों से कार्य नहीं करता, बल्कि जो अभी है, उसे देखते हुए कार्य करता है।

55

शब्दों के बिना देखना

छोटी-छोटी चीजों में प्रयोग करें कि मन बीच में न आए। आप एक फूल को देखते हैं—तब आप सिर्फ देखें। मत कहें 'सुंदर', 'असुंदर'। कुछ मत कहें। शब्दों को बीच में मत लाएं, कोई शब्द उपयोग न करें। सिर्फ देखें। मन बड़ा व्याकुल, बड़ा बेचैन हो जाएगा। मन चाहेगा कुछ कहना। आप मन को कह दें: 'शांत रहो, मुझे देखने दो, मैं सिर्फ देखूंगा।'

शुरुआत में कठिनाई आएगी, लेकिन ऐसी चीजों से शुरू करें जिनसे आप ज्यादा जुड़े नहीं हैं। बिना शब्दों को बीच में लाए पत्नी को देखना कठिन होगा। आप पत्नी से बहुत जुड़े हुए हैं, बहुत ही भावनात्मक रूप से जुड़े हुए हैं। क्रोध में या प्रेम में—लेकिन आप बहुत जुड़े हुए हैं।

तो ऐसी चीजों को देखें जो तटस्थ हैं—चट्टान, फूल, वृक्ष, सूर्योदय, उड़ता हुआ पक्षी, आकाश में घूमता हुआ बादल। सिर्फ ऐसी चीजों को देखें जिनसे आप ज्यादा जुड़े हुए नहीं हैं, जिनके प्रति आप अनासक्त रह सकें, जिनके प्रति आप तटस्थ रह सकें। तटस्थ चीजों से शुरू करें और फिर भावुक स्थितियों की ओर बढ़ें।

56

मौन का रंग

जब भी आपको नीले रंग का कोई दृश्य दिखे—आकाश का नीलापन या नदी का नीलापन—तो बस शांत बैठ जाएं और उसकी नीलिमा में देखते रहें। और आपको एक गहन शांति अनुभव होगी। जब भी आप नीले रंग पर ध्यान करेंगे, एक गहन शांति आप पर उतर आएगी।

नीला रंग सबसे अधिक आध्यात्मिक रंगों में से एक है, क्योंकि वह शांति का, मौन का रंग है। वह थिरता का, विश्राम का, लीनता का रंग है। तो जब भी आप गहन शांति में होते हैं, अचानक आप भीतर एक नीली ज्योति महसूस करेंगे। और यदि आप अपने भीतर नीली ज्योति का भाव करें तो आप एकदम शांत महसूस करेंगे। यह दोनों तरफ से काम करता है।

57

सिरदर्द को देखना

अब जब भी कभी आपको सिरदर्द हो तो एक छोटी सी ध्यान विधि का प्रयोग करें—सिर्फ प्रयोगात्मक रूप से—बाद में आप बड़ी बीमारियों में और बड़े लक्षणों में भी इसका प्रयोग कर सकते हैं।

जब भी आपको सिरदर्द हो, एक छोटा सा प्रयोग करें। शांत बैठ जाएं और उसे देखें, अच्छी तरह से देखें—दुश्मन की तरह नहीं। यदि आप उसे अपने दुश्मन की तरह देखेंगे, तो अच्छे से नहीं देख पाएंगे। आप देखने से बचेंगे। कौन अपने दुश्मन को देखना चाहता है? हर कोई बचता है, हर कोई टालता है, हर कोई टालने की कोशिश करता है। तो उसे अपने मित्र की तरह देखें। वह आपका मित्र है, वह आपकी सेवा में है। वह कह रहा है, 'कुछ गड़बड़ है, वहां ध्यान दो।'

तो बस शांत बैठ जाएं और सिरदर्द को देखें—बिना किसी भाव के कि वह रुक जाए, बिना किसी इच्छा के कि वह न हो। नहीं, कोई संघर्ष नहीं, कोई लड़ाई नहीं, कोई प्रतिरोध नहीं। बस उसे देखें; देखें कि वह क्या है। शांति से देखते रहें, ताकि यदि वह आपको कुछ कहना चाहे तो कह सके। उसमें कोई सांकेतिक संदेश है। और यदि आप शांति से देखेंगे तो आप चकित हो जाएंगे। यदि आप शांति से देखेंगे तो तीन बातें होंगी। पहली—जितना ज्यादा आप देखोगे, उतना ज्यादा वह तेज होगा। और तब आप थोड़े उलझन में पड़ेंगे—'यदि सिरदर्द तेज हो रहा है तो यह विधि कैसे मदद करेगी?'

यह तेज हो रहा है, क्योंकि पहले आप उसे टाल रहे थे। सिरदर्द तो उतना ही था, लेकिन आप उसे टाल रहे थे, दबा रहे थे—एस्प्रो के बिना भी उसे दबा रहे थे। जब आप उसे देखते हैं तो दमन हट जाता है और सिरदर्द अपनी सहज तीव्रता में प्रकट होता है। अब आप उसे खुले कानों से, कानों में रुई डाले बिना सुन रहे हैं।

तो पहली बात: वह तेज हो जाएगा। यदि वह तेज हो रहा है तो आप संतुष्ट हो सकते हैं कि आप ठीक से देख रहे हैं। यदि तेज नहीं हो रहा है तो अभी भी आप देख नहीं रहे हैं; अभी भी आप टाल रहे हैं।

उसे देखें—वह और तेज हो जाएगा। यह पहला लक्षण है कि हां, आपकी नजर उस पर है।

दूसरी बात यह होगी कि वह एक बिंदु पर सिमट आएगा; वह बड़ी जगह पर फैला हुआ नहीं रहेगा। पहले आपको लगता था कि मेरा पूरा सिर दुख रहा है। अब आप देखेंगे कि पूरा सिर नहीं, केवल थोड़ी सी जगह पर दर्द है। यह भी एक संकेत है कि आप और भी गहराई से उसे देख रहे हैं। दर्द की फैली हुई अनुभूति एक चालाकी है—यह भी उसे टालने का एक ढंग है। दर्द यदि एक ही बिंदु पर हो तो वह और भी तीव्र होगा। तो हम एक भ्रम पैदा करते हैं कि पूरा सिर ही दुख रहा है। पूरे सिर में फैला हुआ दर्द, फिर किसी एक बिंदु पर उतना तीव्र नहीं होता। ये चालाकियां हैं जो हम खेलते रहते हैं।

उसे देखें—और वह छोटी से छोटी जगह में सिमटता जाएगा। और एक क्षण आएगा जब वह सुई की नोक जितनी जगह पर सिमट आएगा—अत्यंत घनीभूत, अत्यधिक पैना, बहुत तेज। आपने ऐसा सिरदर्द कभी न जाना होगा। लेकिन बहुत ही छोटी जगह पर सीमित। उसे देखते रहें।

और तब तीसरी और सबसे महत्वपूर्ण घटना घटेगी। यदि आप तब भी देखते ही रहे जब दर्द बहुत तीव्र और सीमित और एक ही बिंदु पर केंद्रित है, तो आप कई बार देखेंगे कि वह खो गया है। जब आपका देखना पूर्ण होगा तो वह खो जाएगा। और जब वह खो जाएगा तब उसकी झलक मिलेगी कि वह कहां से आ रहा है—क्या कारण है। जब प्रभाव खो जाएगा तो आप कारण को देख सकेंगे। ऐसा कई बार होगा। फिर सिरदर्द वापस आ जाएगा। जब आपका देखना उतना सजग, उतना एकाग्र, उतना ध्यानपूर्ण नहीं होगा, तब वह फिर आ जाएगा। जब भी आपकी दृष्टि समग्र होगी, वह खो जाएगा। और जब वह खोता है तो उसके पीछे छिपा हुआ ही उसका कारण होता है। और आप हैरान हो जाएंगे—आपका मन कारण बताने के लिए तैयार है।

और एक हजार एक कारण हो सकते हैं। सबमें वही अलार्म दिया जाता है, क्योंकि अलार्म देने की प्रणाली सरल है। आपके शरीर में बहुत अलार्म नहीं हैं। अलग-अलग कारणों के लिए वही अलार्म, वही चेतावनी दी जाती है। हो सकता है हाल ही में आपको क्रोध आया हो और आपने उसे अभिव्यक्त न किया हो। अचानक वह क्रोध प्रकट होगा। आप देखेंगे अपना सारा क्रोध जो आप मवाद की तरह भीतर ढो रहे हैं, ढो रहे हैं। अब यह भारी हो गया है और वह क्रोध निकलना चाहता है। उसे रेचन की आवश्यकता है। तो उसे निकाल दें, उसका रेचन कर दें! और तत्क्षण आप देखेंगे कि सिरदर्द गायब हो गया है। और न एस्प्रो की कोई जरूरत है, न किसी चिकित्सा की।

58

ऊर्जा का स्तंभ

यदि आप मौन खड़े रहें तो तुरंत एक तरह की शांति आपको घेरने लगेगी। इसे अपने कमरे के कोने में करके देखें। कमरे के कोने में, कुछ न करते हुए, बस चुपचाप खड़े हो जाएं। अचानक ऊर्जा भी आपके भीतर थिर खड़ी हो जाएगी। बैठे हुए आप कई तरह के उपद्रव मन में महसूस करेंगे, क्योंकि बैठने की मुद्रा एक विचारक की मुद्रा है। खड़े होने में ऊर्जा एक स्तंभ के समान प्रवाहित होती है और समान रूप से पूरे शरीर में बहती है। खड़ा होना सुंदर अनुभव है।

इसका प्रयोग करके देखें, क्योंकि आपमें से बहुतों को यह बहुत अच्छा लगेगा। यदि आप एक घंटा खड़े रह सकें तो बहुत अच्छा होगा। बिना कुछ किए, बिना हिले-डुले खड़े भर रहने से ही आप पाएंगे कि आपके भीतर कोई चीज ठहर गई है, शांत हो गई है और आप स्वयं को एक ऊर्जा का स्तंभ जैसा महसूस करेंगे। शरीर का पता नहीं चलेगा।

59

गर्भ की शांति

मौन को अपना ध्यान बनने दें। जब भी आपको समय मिले, मौन में सिमट कर बैठ जाएं—और सच में यही मेरा मतलब है : सिमट जाएं—जैसे कि आप अपनी मां के गर्भ में एक छोटे से बच्चे हैं। ऐसे बैठे रहें। फिर धीरे-धीरे आपको लगेगा कि अपना सिर जमीन पर टिका दें। तब सिर को जमीन पर टिक जाने दें। गर्भ की मुद्रा में आ जाएं, जैसे कि बच्चा गर्भ में सिकुड़ा रहता है। और तत्क्षण आप अनुभव करेंगे कि शांति उतर रही है, वही शांति जो मां के गर्भ में थी।

तो अपने बिस्तर में, कंबल के नीचे, गर्भ में बच्चे की तरह गुड़ीमुड़ी हो जाएं और शांत-मौन, बिना कुछ किए स्थिर पड़े रहें। कुछ विचार कभी-कभी आएंगे, उन्हें आने दें, आप उदासीन बने रहें, उनमें कोई दिलचस्पी न लें। यदि वे आएं तो ठीक; न आएं तो ठीक। उनसे लड़ें नहीं, उन्हें धक्का देकर भगाएं नहीं। यदि आप लड़ेंगे, तो आप विचलित हो जाएंगे। अगर आप उन्हें धक्का देकर भगाएंगे, तो वे और-और आएंगे। अगर आप चाहेंगे कि वे न आएं, तो वे भी जिद्द में आ जाएंगे। आप तो बस उनके प्रति उदासीन रहें। उन्हें वहां परिधि पर चलने दें, जैसे कि ट्रैफिक का शोर हो रहा हो। और सच में वह ट्रैफिक का शोर ही है—मस्तिष्क की लाखों कोशिकाओं का ट्रैफिक जो एक-दूसरे के साथ संपर्क कर रही हैं और ऊर्जा घूम रही है, विद्युत एक कोशिका से दूसरी कोशिका में छलांग लगा रही है। वह एक बड़ी मशीन की गूंज जैसा ही है।

तो उसे चलने दें। आप उसके प्रति बिलकुल तटस्थ रहें। आपको उससे कुछ लेना-देना नहीं है, वह आपकी समस्या नहीं है। दूसरे की समस्या हो सकती है, लेकिन आपकी नहीं है। आपको उससे क्या लेना-देना? और आप हैरान हो जाएंगे—ऐसे क्षण आएंगे जब वह शोर खो जाएगा, बिलकुल खो जाएगा और आप स्वयं में स्थिर अकेले बच रहेंगे।

संध्या के समय करने वाली ध्यान विधियां

60
कुंडलिनी
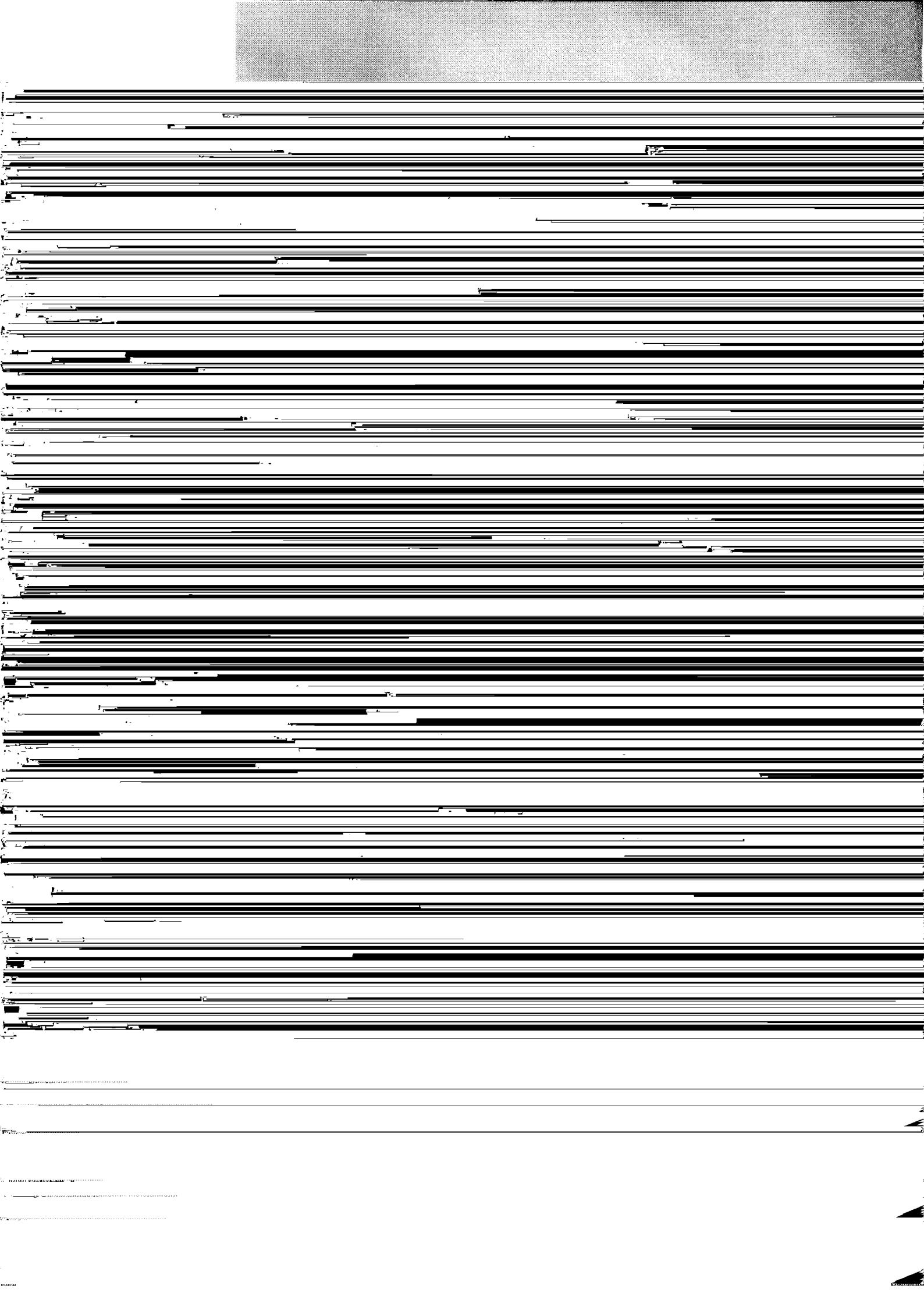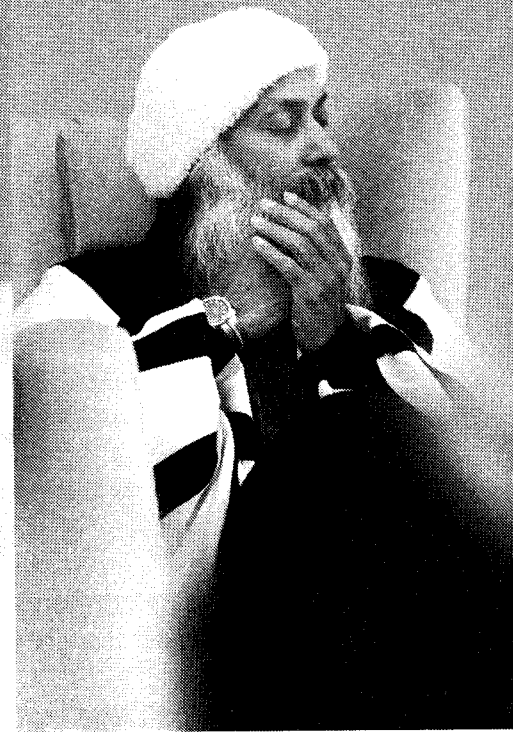
यह अति लोकप्रिय ध्यान, सक्रिय ध्यान का सहयोगी ध्यान है। इसमें पंद्रह-पंद्रह मिनट के चार चरण हैं।

प्रथम चरण : पंद्रह मिनट

शरीर को ढीला छोड़ दें और पूरे शरीर को कंपने दें। अनुभव करें कि ऊर्जा पांव से उठकर ऊपर की ओर बढ़ रही है। सब ओर से नियंत्रण छोड़ दें और कंपन ही हो जाएं। आपकी आंखें खुली भी रह सकती हैं और बंद भी।

दूसरा चरण : पंद्रह मिनट

नाचें—जैसा आपको भाए, और शरीर को, जैसा वह चाहे, गति करने दें।

तीसरा चरण : पंद्रह मिनट

आंखें बंद कर लें और निश्चल बैठ जाएं या खड़े रहें...भीतर या बाहर जो भी हो, उसके साक्षी बने रहें।

चौथा चरण : पंद्रह मिनट

आंखें बंद रखे हुए ही, लेट जाएं और निश्चल हो रहें।

जब आप कुंडलिनी ध्यान करें, तो कंपन को होने दें, उसे करें मत। शांत खड़े हो जाएं, कंपन को उठता महसूस करें और जब आपका शरीर थोड़ा कंपने लगे, तो उसको सहयोग करें, लेकिन उसे स्वयं से मत करें। उसका मजा लें, उसका आनंद लें, उसे उठने दें, उसे सहयोग करें, उसका स्वागत करें, लेकिन अपनी तरफ से प्रयासपूर्वक उसे न करें। यदि आप इसे प्रयासपूर्वक करेंगे तो यह एक व्यायाम बन जाएगा, एक शारीरिक व्यायाम बन जाएगा। फिर कंपन तो होगा, लेकिन बस ऊपर-ऊपर, वह आपके भीतर प्रवेश नहीं करेगा। भीतर आप पत्थर की तरह, चट्टान की तरह ठोस बने रहेंगे। नियंत्रक और कर्ता तो आप ही रहेंगे, शरीर बस अनुसरण करेगा। प्रश्न शरीर का नहीं है—प्रश्न आपका है।

तो जब मैं कहता हूं कि कंपन को उठने दें, तो मेरा मतलब है कि आपका ठोसपन और आपका पत्थर जैसा अस्तित्व जड़ों तक कंप जाए, ताकि वह पिघले, तरल हो और बह सके। और जब आपका पत्थर जैसा अस्तित्व तरल होगा तो आपका शरीर अनुसरण करेगा। फिर कंपाना नहीं पड़ता, बस कंपन रह जाता है। फिर कोई उसे करता नहीं, वह बस होता है। फिर कोई कर्ता नहीं रह जाता।

61

झूमना

पहला चरण : बीस मिनट

पालथी मार कर, आंखें बंद करके बैठ जाएं और हलके-हलके झूमना शुरू करें। पहले बाएं तरफ, फिर दाएं तरफ। पूरा शरीर न झुके तो कोई बात नहीं, लेकिन आराम से जितना झुक सकें उतना झुकें। जब आप अंतिम छोर पर पहुंच जाएं, तो 'हू' की आवाज करें—पूरी ताकत से, झटके के साथ। झूमने के अंतिम छोर पर दोनों तरफ आवाज करें।

दूसरा चरण : बीस मिनट

शांति से बैठ जाएं, बिलकुल हिलें-डुलें नहीं।

तीसरा चरण : बीस मिनट

एक कोने में खड़े हो जाएं, बिलकुल निश्चल।

62

सामूहिक नृत्य

आप मित्रों का एक छोटा सा समूह तैयार कर सकते हैं, जो साथ-साथ नृत्य करें। वह ज्यादा अच्छा होगा और ज्यादा सहयोगी होगा। आदमी इतना कमजोर है कि अकेले किसी चीज को जारी रखना कठिन होता है। इसीलिए विद्यालयों की आवश्यकता पड़ती है। यदि किसी दिन आपको नृत्य करने की इच्छा नहीं है और दूसरे कर रहे हैं, तो उनकी ऊर्जा आपको प्रेरित करती है। किसी दिन किसी और की इच्छा नहीं है, लेकिन आपकी है, तो आपकी ऊर्जा उसे खींचती है।

अकेला छोड़ दिया जाए तो आदमी बहुत ही कमजोर और संकल्पहीन है। एक दिन आप करते हैं और दूसरे दिन आपको लगता है कि आप थक गए हैं, और दूसरे बहुत से काम हैं।

ध्यान-विधियां केवल तभी परिणाम लाती हैं जब वे सतत की जाएं। तब आप गहरे उतरते हैं। यह ऐसा ही है जैसे कि आप एक कुआं खोदें। अगर एक दिन आप एक जगह खोदें, दूसरे दिन दूसरी जगह, तो आप अपनी पूरी जिंदगी भर खोदते रहें तो भी कुआं कभी तैयार नहीं होगा। आपको एक ही जगह पर सतत खोदना पड़ेगा।

तो एक बार तय कर लें, एक ही समय पर और प्रतिदिन। और यदि एक ही जगह पर संभव हो तो बहुत अच्छा है—वही कमरा, वही वातावरण, वही सुगंध जलाएं। तो शरीर थोड़े समय में सीख जाता है और मन थोड़े समय में तैयार हो जाता है, आप कमरे में प्रवेश करते हैं और तत्क्षण आप नृत्य की भाव-दशा में आ जाते हैं। कमरा चार्ज्ड है, कमरा ऊर्जा-तरंगों से भरा है; वह समय भी चार्ज्ड है।

63

वृक्ष के समान नृत्य

अपने हाथों को ऊपर उठा लें और इस तरह झूमें जैसे तेज हवा में कोई वृक्ष झूमता हो। जैसे वर्षा में और हवाओं में कोई वृक्ष नृत्य करता हो, इस भांति नृत्य करें। अपनी संपूर्ण ऊर्जा को नृत्य में बहने दें। झूमें और हवा के साथ नाचें, हवा को अपने में से गुजरता हुआ महसूस करें। भूल जाएं कि आपके पास मानव-शरीर है—आप एक वृक्ष हैं, वृक्ष ही हो जाएं। यदि संभव हो तो खुले में चले जाएं, वृक्षों के बीच में खड़े हो जाएं, वृक्ष हो जाएं और हवाओं को अपने में से गुजरने दें।

वृक्ष जैसा अनुभव करना बहुत ही शक्तिदायक और प्राणवर्द्धक अनुभव है। इससे व्यक्ति बहुत ही आसानी से नैसर्गिक चेतना में चला जाता है। वृक्ष अभी भी वहीं हैं। वृक्षों से बातें करें, वृक्षों को गले लगाएं और अचानक आप महसूस करेंगे कि सब कुछ वापस आ गया है। यदि बाहर बगीचे में या खुले में जाना संभव न हो तो अपने कमरे के बीच में खड़े हो जाएं और भाव करें कि आप एक वृक्ष हैं और वृक्ष की भांति नृत्य शुरू कर दें।

64

हाथों से नृत्य

शांत बैठ जाएं और अंगुलियों को सहज ढंग से गति करने दें। गति को भीतर से महसूस करें। बाहर से उसे देखने की कोशिश न करें। इसलिए अपनी आंखें बंद ही रखें। जितना हो सके ऊर्जा को ज्यादा से ज्यादा हाथों में बहने दें।

हाथ मस्तिष्क से गहरे में जुड़े हैं—दायां हाथ मस्तिष्क के बाएं हिस्से के साथ और बायां हाथ मस्तिष्क के दाएं हिस्से के साथ। अगर हमारी अंगुलियों को अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता मिले तो

मस्तिष्क में एकत्रित तनावों की निर्जरा होती है। मस्तिष्क को, उसके तनावों को, उसकी अप्रयुक्त ऊर्जा को निर्मुक्त करने का यह सबसे आसान तरीका है। हाथों से यह काम बखूबी हो सकता है।

कभी आप पाएंगे कि बायां हाथ ऊपर उठा है, कभी पाएंगे कि दायां हाथ ऊपर उठा है। अपनी तरफ से कुछ भी न करें, ऊर्जा जैसे-जैसे गति करेगी, वैसी मुद्राएं बनेंगी। जब मस्तिष्क का बायां हिस्सा ऊर्जा निकालना चाहता है, तो एक मुद्रा बनेगी। जब मस्तिष्क का दायां हिस्सा ऊर्जा से बोझिल होगा, तो दूसरी ही मुद्रा बनेगी।

केवल हाथ की मुद्राओं द्वारा ही आप ध्यान में गहरे उतर सकते हैं। तो शांत बैठे हुए, खेलपूर्ण ढंग से, हाथों को गति करने दें। और आप चकित हो जाएंगे; यह अदभुत है। आपको ज्यादा उछलकूद वाले ध्यान करने की जरूरत नहीं है। बस आपके हाथ ही काफी हैं।

65

सूक्ष्म पर्तों को जगाना

यदि आप निरंतर शारीरिक गतिविधियों में लगे रहें और कभी शांत न बैठें, तब भी आप कुछ चूक जाएंगे। जब ऊर्जा जाग जाए तो हमें बिलकुल शांत हो जाना चाहिए, नहीं तो गति स्थूल ही रह जाती है। शारीरिक गतिविधि अच्छी है, लेकिन वह स्थूल गतिविधि है। और यदि सारी ऊर्जा स्थूल गतिविधि में ही अटकी रहे तो सूक्ष्म गतिविधि कभी प्रारंभ नहीं होगी।

हमें उस स्थिति में आना है जहां शरीर बिलकुल मूर्तिवत स्थिर हो जाए, जिससे कि सभी स्थूल गतियां रुक जाएं, लेकिन ऊर्जा गति करने के लिए तैयार है—और शरीर में इसके लिए कोई द्वार उपलब्ध नहीं है। तब वह भीतर एक नया द्वार खोजती है जो शारीरिक नहीं है। वह सूक्ष्म पर्तों में गतिमान हो जाती है।

लेकिन पहले तो शारीरिक गतिविधियों की आवश्यकता है। अगर ऊर्जा नहीं जागी है तो आप पत्थर की तरह निश्चल बैठ सकते हैं, और कुछ भी नहीं होगा। तो पहली तो बात यह है कि ऊर्जा को जागने में मदद करें और दूसरी बात यह है कि जब वह जाग जाए तो शरीर को रोक लें। जब ऊर्जा पूरी तरह जाग जाए और कहीं भी बहने के लिए उमड़ पड़े, तब उसे सूक्ष्म पर्तों में ही गति करना पड़ेगा, क्योंकि स्थूल अब उपलब्ध नहीं है।

तो पहले ऊर्जा को सक्रिय करें और फिर शरीर को निश्चल कर दें ताकि सक्रियता गहरे में प्रवेश कर सके—ठीक जड़ों तक, ठीक आपके अस्तित्व की गहराई तक। एक समन्वय बनाएं—बीस मिनट शारीरिक गतिविधि करें और बीस मिनट के बाद अचानक बिलकुल रुक जाएं। आप अलार्म लगा ले सकते हैं, और जब अलार्म बजे तो बिलकुल ठहर जाएं। शरीर ऊर्जा से भरा है, लेकिन अब जब कि शरीर बर्फ की तरह जम गया है तो ऊर्जा नये रास्ते खोजने लगेगी। यह आंतरिक रूप से काम करने वाली विधि है।

66

गीत गाओ

गीत गाना दिव्य है, दिव्यतम घटनाओं में से एक है। केवल नृत्य ही इससे ऊपर है। नृत्य के बाद गायन ही आता है। और नृत्य करना और गीत गाना दिव्य घटनाएं क्यों हैं? क्योंकि यही वे घटनाएं हैं जिनमें आप पूरी तरह से खो सकते हैं। आप गायन में इतना डूब सकते हैं कि गायक खो जाए और केवल गीत ही बचे, या नर्तक खो जाए और केवल नृत्य ही बचे। और वही क्षण रूपांतरण का, बदलाहट का क्षण होता है जब गायक नहीं बचता और केवल गीत ही रह जाता है। जब आपका पूरा अस्तित्व एक गीत या एक नृत्य बन जाता है, तो वही प्रार्थना है।

आप क्या गा रहे हैं, यह अप्रासंगिक है। चाहे वह कोई धार्मिक गीत न भी हो, लेकिन यदि आप उसे पूरे प्राणों से गा रहे हैं, तो वह पवित्र है। और इससे उलटा भी हो सकता है—सदियों से श्रद्धापूर्वक चला आ रहा कोई धार्मिक गीत भी यदि आप पूरे प्राणों से नहीं गा रहे हैं तो वह अपवित्र है। गीत के बोलों का महत्व नहीं है, उसमें आप जो भाव लाते हैं—समग्रता, प्रगाढ़ता लाते हैं—वही महत्वपूर्ण है।

किसी और का गीत मत दोहराएं, क्योंकि वह आपके हृदय से नहीं उठा है। और यह ढंग नहीं है उस दिव्य के चरणों में अपने हृदय को उंडेलने का। अपने गीत को उठने दें। छंद और व्याकरण को भूल जाएं। परमात्मा कोई बहुत बड़ा व्याकरण का जानकार नहीं है। और उसे इसकी चिंता नहीं है कि आप किन शब्दों का प्रयोग करते हैं। उसकी उत्सुकता आपके हृदय में है।

67

गुंजन

गुंजन करना बहुत सहयोगी हो सकता है और इसे आप कभी भी कर सकते हैं। कम से कम दिन में एक बार इसे करें। अगर आप दिन में दो बार कर सकें तो अच्छा होगा। यह इतना अदभुत अंतर-संगीत है कि यह आपके पूरे प्राणों में शांति ला देता है। तब आपके संघर्षरत अंग एक लय में आने लगते हैं और धीरे-धीरे एक सूक्ष्म संगीत आपके शरीर में उठता है जिसे आप सुन सकते हैं। तीन-चार महीने के भीतर आप बस शांत बैठेंगे और आप एक सूक्ष्म संगीत को, एक भीतरी नाद को, एक प्रकार की गुंजन को सुन सकेंगे। सब कुछ इतने अच्छे ढंग से चल रहा है, जैसे कि एक बिलकुल ठीक ढंग से कार्य करती कार का इंजन एक खास लय में गुंजन करता हो।

एक अच्छे ड्राइवर को तुरंत पता चल जाता है अगर जरा सी भी गड़बड़ हो। यात्रियों को चाहे इस बारे में पता न लगे, लेकिन अच्छा ड्राइवर तुरंत जान लेता है जैसे ही इंजन की आवाज बदलती है। तब इंजन की आवाज लयबद्ध नहीं रहती। कुछ नई आवाज आ रही है। किसी दूसरे को चाहे इसका पता न चले लेकिन जिसे ड्राइविंग से प्यार है, वह तुरंत जान लेता है कि कुछ गड़बड़ हो रही है। इंजन वैसे काम नहीं कर रहा जैसे करना चाहिए।

वैसे ही अपने अंतर-नाद से अच्छी तरह परिचित व्यक्ति धीरे-धीरे अनुभव करने लगता है कि कब चीजें गलत जा रही हैं। यदि आपने ज्यादा भोजन ले लिया है तो आप देखेंगे कि आपका भीतरी छंद चूक रहा है। और धीरे-धीरे आपको चुनना पड़ेगा—या तो ज्यादा भोजन लें या भीतरी छंद को सम्हालें। और भीतरी छंद इतना अनमोल, इतना दिव्य, एक ऐसा आनंद है कि ज्यादा खाने की कौन चिंता करता है?

और बिना किसी डाइटिंग के प्रयास के आप पाएंगे कि आप बहुत ही संतुलित ढंग से भोजन ले रहे हैं। तब भीतर का छंद और भी समस्वर हो जाता है। और आप स्पष्ट देख सकेंगे कि कौन से आहार आपके छंद में बाधा डालते हैं। आप कुछ भारी भोजन लेते हैं और वह बहुत देर तक पाचन तंत्र में पड़ा रहता है, तब भीतर का छंद उतना लयबद्ध नहीं रहता।

एक बार भीतर का छंद अनुभव में आ जाए तो आप जान सकेंगे कि कब कामवासना उठ रही है, कब नहीं उठ रही है। और अगर पति-पत्नी दोनों ही भीतर के छंद से जी रहे हों तो आप चकित हो जाएंगे कि दो व्यक्तियों के बीच कितनी गहराई, कितनी लीनता घट सकती है! और कैसे वे धीरे-धीरे एक-दूसरे के प्रति संवेदनशील हो जाते हैं, कैसे वे महसूस करने लगते हैं कि कब दूसरा उदास है, कहने की भी कोई आवश्यकता नहीं होती। जब पति थका होता है तो पत्नी सहज ही जान लेती है, क्योंकि दोनों एक ही 'वेवलेंथ' पर जी रहे हैं, एक ही तरंग उन्हें आंदोलित करती है।

68

नादब्रह्म

नादब्रह्म एक प्राचीन तिब्बती विधि है जिसे सुबह ब्रह्ममुहूर्त में किया जाता रहा है। अब इसे दिन में किसी भी समय अकेले या अन्य लोगों के साथ किया जा सकता है, लेकिन पेट खाली होना चाहिए और इस ध्यान के बाद पंद्रह मिनट तक विश्राम करना जरूरी है। यह ध्यान एक घंटे का है और इसके तीन चरण हैं।

पहला चरण : तीस मिनट

एक विश्रामपूर्ण मुद्रा में आंख और मुंह बंद करके बैठ जाएं। अब भौंरे की तरह गुंजार की ध्वनि निकालना शुरू करें। गुंजार इतना तीव्र हो कि आपके आसपास बैठे लोगों को यह सुनाई पड़ सके और

गुंजार की ध्वनि के कंपन आपके पूरे शरीर में फैल सकें। स्वयं को एक खाली पात्र या खोखले टयूब की तरह कल्पना करें जो गुंजार की ध्वनि से भर गई हो। एक स्थिति ऐसी आती है जब गुंजार अपने आप जारी रहता है और आप एक श्रोता मात्र रह जाते हैं। इस विधि में किसी विशेष ढंग से श्वास लेने की जरूरत नहीं है और आप गुंजार की लय को बदल सकते हैं तथा लगे तो शरीर को धीरे-धीरे झूमने दे सकते हैं।

दूसरा चरण : पंद्रह मिनट

दूसरा चरण साढ़े सात-सात मिनट के दो भागों में बंटा हुआ है। पहले साढ़े सात मिनट में दोनों हथेलियां आकाशोन्मुखी फैला कर नाभि के पास से आगे की ओर बढ़ाते हुए चक्राकार घुमाएं। दायां हाथ दायीं ओर और बायां हाथ बायीं ओर चक्राकार घुमाएं। और तब वर्तुल पूरा करते हुए दोनों हथेलियों को पूर्ववत नाभि के सामने वापस ले आएं। यह गति साढ़े सात मिनट तक जारी रखें। गति इतनी धीमी हो कि कई बार तो ऐसा लगेगा कि कोई गति ही नहीं हो रही है। भाव करें कि आप अपनी ऊर्जा बाहर ब्रह्मांड में फैलने दे रहे हैं।

साढ़े सात मिनट के बाद हथेलियों को उलटा, भूमिउन्मुख कर लें और उन्हें विपरीत दिशा में वृत्ताकार घुमाना शुरू करें। अब फैले हुए हाथ नाभि की ओर वापस आएंगे फिर पेट के किनारे से बाहर वृत्त बनाते हुए बाजुओं में फैल कर फिर वृत्त को पूरा करते हुए नाभि की ओर वापस लौटेंगे। अनुभव करें कि आप ऊर्जा भीतर ग्रहण कर रहे हैं। पहले चरण की तरह शरीर में यदि कोई धीमी गति हो तो उसे रोकें नहीं, होने दें।

तीसरा चरण : पंद्रह मिनट

शांत और थिर हो कर बैठे रहें या लेट जाएं।

69

स्त्री-पुरुष जोड़ों के लिए नादब्रह्म

ओशो ने इस विधि का एक भिन्न रूप जोड़ों के लिए दिया है। स्त्री और पुरुष आमने-सामने बैठ कर अपने हाथ क्रॉस करके एक-दूसरे के हाथ पकड़ लेते हैं और फिर पूरा शरीर एक बड़े कपड़े से ढंक लेते हैं। यदि वे निर्वस्त्र हों तो अच्छा होगा। कमरे में मंद प्रकाश हो, जैसे छोटी-छोटी चार मोमबत्तियां जल रही हों। केवल इस ध्यान के लिए अलग रखी एक अगरबत्ती का उपयोग कर सकते हैं।

आंखें बंद कर लें और तीस मिनट तक, एक साथ, भौंरे की तरह गुंजार करें। कुछ ही समय में अनुभव होगा कि ऊर्जाएं आपस में मिल रही हैं, डूब रही हैं और एक हो रही हैं।

70
कीर्तन

कीर्तन अवसर है—परमात्मा के प्रति अपने आनंद और अहोभाव को निवेदित करने का। उसकी कृपा से जो जीवन मिला, जो आनंद और चैतन्य मिला, उसके लिए परमात्मा के प्रति हमारे हृदय में जो प्रेम और धन्यवाद का भाव है, उसे हम कीर्तन में नाच कर, गा कर, उसके नाम-स्मरण की धुन में मस्ती में थिरक कर अभिव्यक्त करते हैं। कीर्तन उत्सव है—भक्ति-भाव से भरे हुए हृदय का। व्यक्ति की भाव-ऊर्जा का, समूह की भाव-ऊर्जा में विसर्जित होने का अवसर है कीर्तन।

इस प्रयोग में शरीर पर कम और ढीले वस्त्रों का होना तथा पेट का खाली होना बहुत सहयोगी है।

कीर्तन ध्यान एक घंटे का उत्सव है, जिसके पंद्रह-पंद्रह मिनट के चार चरण हैं।
संध्या का समय इसके लिए सर्वोत्तम है।

पहला चरण :

पहले चरण में कीर्तन-मंडली संगीत के साथ एक धुन गाती है—जैसे 'गोविंद बोलो, हरि गोपाल बोलो, राधा रमण हरि गोपाल बोलो।'

इस धुन को पुनः-पुनः गाते हुए आप नृत्यमग्न हो जाएं। धुन और संगीत में पूरे भाव से डूबें और अपने शरीर और भावों को बिना किसी सचेतन व्यवस्था के थिरकने तथा नाचने दें। नृत्य और धुन की लयबद्धता में अपनी भाव-ऊर्जा को सघनता और गहराई की ओर विकसित करें।

दूसरा चरण :

दूसरे चरण में धुन का गायन बंद हो जाता है, लेकिन संगीत और नृत्य जारी रहता है।

अब संगीत की तरंगों से एकरस होकर नृत्य जारी रखें। भावावेगों एवं आंतरिक प्रेरणाओं को बच्चों की तरह निस्संकोच होकर पूरी तरह से अभिव्यक्त होने दें।

तीसरा चरण :

तीसरा चरण पूर्ण मौन और निष्क्रियता का है।

संगीत के बंद होते ही आप अचानक रुक जाएं। समस्त क्रियाएं बंद कर दें और विश्राम में डूब जाएं। जाग्रत हुई भाव-ऊर्जा को भीतर ही भीतर काम करने दें।

चौथा चरण :
चौथा चरण पूरे उत्सव की पूर्णाहुति का है।
पुनः शुरू हो गए मधुर संगीत के साथ आप अपने आनंद, अहोभाव और धन्यवाद के भाव को नाच कर पूरी तरह से अभिव्यक्त करें।

उपरोक्त विधि 'ध्यान के कमल' के दूसरे प्रवचन में ओशो द्वारा कराए गए कीर्तन ध्यान पर आधारित है।

71

सामूहिक प्रार्थना

सामूहिक प्रार्थना ध्यान के लिए कम से कम तीन व्यक्ति होने चाहिए। ज्यादा व्यक्तियों के साथ करना अधिक श्रेयस्कर है। और संध्या का समय इसके लिए सर्वाधिक योग्य है।

पहला चरण :
एक घेरे में खड़े हो जाएं, आंखें बंद कर लें और अगल-बगल के मित्रों के हाथ अपने हाथ में ले लें। फिर धीरे-धीरे, लेकिन आनंदपूर्वक और तेज स्वर में 'ओम्'—ऐसा उच्चार शुरू करें। बीच-बीच में, उच्चार के अंतराल के बीच में मौन की गहराई को अनुभव करें। अपनी और अपने परिवेश की दिव्यता और पूर्णता को अनुभव करें और अपने अहंकार को उच्चार में विलीन हो जाने दें।
जिनके पास आंखें हैं, वे देखेंगे कि समूह के बीच से ऊर्जा का एक स्तंभ ऊपर उठ रहा है। अकेला आदमी बहुत कुछ नहीं कर सकता है, लेकिन यदि पांच सौ व्यक्ति सम्मिलित होकर प्रार्थना में डूबें, तो उसकी बात ही कुछ और है।

दूसरा चरण :
दस मिनट के बाद, समूह के संचालक के इशारे पर, सब लोग एक-दूसरे का हाथ छोड़ दें और जमीन पर झुक जाएं, पृथ्वी माता को प्रणाम करें, और ऊर्जा को पृथ्वी में प्रविष्ट हो जाने दें।

72

मुर्दे की भांति हो जाएं

इसलिए ध्यान के आखिरी चरण में मैं आपसे कहता हूं कि आप जैसे हैं, मुर्दे की भांति हो जाएं। कुछ भी हो रहा हो, मुर्दे की भांति हो जाएं। नहीं तो ध्यान की जो शक्ति जगती है, उसको भी आप बाहर ले जाएंगे, वह तत्क्षण बाहर चली जाएगी। अगर आपको आंखें खुली रखने का मौका दिया जाए तो वह ध्यान की जो शक्ति जगी है, आपकी आंखों से तत्क्षण बाहर घूमने लगेगी। आप किसी व्यर्थ चीज पर उसको नष्ट कर देंगे। पास में खड़ी कोई स्त्री दिखाई पड़ जाएगी, कोई आदमी नाचता हुआ दिखाई पड़ जाएगा, कोई व्यक्ति पागल सा मालूम पड़ेगा। आपको पता नहीं कि आप क्या कर रहे हैं! लेकिन आपकी आंखें अभी ताजी हैं, भीतर ध्यान पैदा हुआ है। आप उस ध्यान को नष्ट किए दे रहे हैं एक क्षण में। घंटों में जो पैदा होता है, वह एक क्षण में खोया जा सकता है।

इसलिए कहता हूं, आंखें बांध कर रखें। ताकि वह जो ध्यान पैदा हुआ है, आंख से बाहर न बहे। इसलिए कहता हूं, शरीर को मुर्दे की भांति छोड़ दें, जरा भी हिलाएं-डुलाएं न। क्योंकि आपको अपनी ही बेइमानियों का कोई पता नहीं है। कहीं लगेगा कि पैर में दर्द हो रहा है, कहीं लगेगा कि हाथ जरा ठीक कर लें, कहीं लगेगा सिर में खुजलाहट आ रही है। अगर आ भी रही है सिर में खुजलाहट, तो दस मिनट में क्या बिगड़ने वाला है? जिंदगी पड़ी है, खुजला लेना। और अगर दस मिनट पैर में थोड़ी तकलीफ भी हो रही है, तो क्या बिगड़ा जा रहा है? कोई मौत नहीं आ जाएगी। और अगर एक चींटी पैर पर चढ़नी शुरू हो गई, तो क्या बिगाड़ लेगी? काट ही सकती है। कोई सांप भी नहीं चढ़ गया है, चींटी ही चढ़ रही है! मगर एक चींटी आपको बेचैन कर देती है। चींटी बेचैन नहीं कर रही, चींटी बहाना है। आपके भीतर जो ध्यान की शक्ति पैदा हुई है, वह कोई भी बहाने बाहर बहना चाहती है। आप हाथ से चींटी को हटा लेंगे—आपको पता नहीं कि उस हाथ की उस छोटी सी हरकत में आपने ध्यान बाहर भेज दिया।

इसलिए कहता हूं कि जब ध्यान की ऊर्जा जगती है, तो सब तरफ से रुक जाएं। बस पत्थर की तरह हो जाएं। इस दस मिनट में बाहर की दुनिया रही ही नहीं। तो ही किसी दिन, किसी क्षण, मौका आएगा कि ध्यान धक्का मारेगा—बाहर जाने का उपाय नहीं होगा—तो धक्का मारेगा और भीतर की एक झलक मिल जाएगी। एक झलक मिल जाए तो फिर आपको रस और स्वाद आ गया। तो फिर आप भीतर की तरफ जा सकते हैं।

लेकिन आप छोटी चीजों में खोने को तैयार हैं, बहुत क्षुद्र चीजों में। अगर सोचेंगे तो आपको भी लगेगा कि क्या क्षुद्र बात थी! इसमें खोने जैसा क्या था? खड़े थे, थक गए थे, तो इसमें क्या अड़चन आ रही थी? लेकिन मैं देखता हूं कि आप अपने को कैसा धोखा दे लेते हैं! जल्दी से बैठ जाते हैं। मैं कहता हूं, रुक जाएं। आप जल्दी से बैठ जाते हैं! मैं कह रहा हूं, रुक जाएं, जैसे हैं वैसे ही। आप जल्दी से बैठ कर ठीक आसन लगा लेते हैं!

आपको पता नहीं कि आप कर क्या रहे हैं। किसको धोखा दे रहे हैं? कोई मुझे धोखा दे रहे हैं?

मुझे धोखा देने का क्या सार है? आपने ही तीस मिनट इतना श्रम लिया और आप एक सेकेंड में उसको खो रहे हैं, क्योंकि आप ध्यान बाहर दे रहे हैं।

शक्तियां जरा से छिद्र से बह जाती हैं। और आप यह मत सोचना कि नाव में केवल एक छेद है, इसलिए क्या हर्ज है? पार हो जाएंगे। एक छेद का सवाल नहीं है। छेद है, इतना काफी है। एक छेद नाव को डुबा देगा। और ये बेईमानियां छेद बन जाती हैं।

73
अग्निशिखा

अच्छा हो कि शाम के समय अग्निशिखा ध्यान किया जाए। और यदि मौसम गर्म हो तो कपड़े उतार कर। इस ध्यान-विधि में पांच-पांच मिनट के तीन चरण हैं।

पहला चरण :

कल्पना करें कि आपके हाथ में एक ऊर्जा का गोला है—गेंद है। थोड़ी देर में यह गोला कल्पना से यथार्थ सा हो जाएगा। आपको अपने हाथ पर उसका वजन महसूस होगा।

दूसरा चरण :

ऊर्जा की इस गेंद के साथ खेलना शुरू करें। इसके वजन को, इसके द्रव्यमान को अनुभव करें। जैसे-जैसे यह ठोस होता जाए, इसे एक हाथ से दूसरे हाथ में फेंकना शुरू करें। यदि आप राइटिस्ट हैं तो दाएं हाथ से शुरू करें और बाएं से अंत; और यदि लेफ्टिस्ट हैं तो यह प्रक्रिया उलटी होगी। गेंद को हवा में उछालें, अपने चारों ओर उछालें, अपने पैरों के बीच से उछालें—लेकिन ध्यान रखें कि गेंद जमीन पर न गिरे। अन्यथा खेल फिर से शुरू करना पड़ेगा।

इस चरण के अंत में गेंद को बाएं हाथ में लिए हुए दोनों हाथ सिर के ऊपर उठा लें और फिर गेंद को दोनों हथेलियों के बीच में पकड़ लें। अब गेंद को नीचे लाएं और अपने सिर पर आकर उसे फूट जाने दें, ताकि उसकी ऊर्जा से आपका शरीर नहा जाए। भाव करें कि आप पर ऊर्जा की वर्षा हो रही है—और आपके शरीर के चारों ओर ऊर्जा का आवरण बन गया है।

अब आपके चारों तरफ से ऊर्जा आपकी तरफ बहने लगेगी; उसकी पर्त दर पर्त आप पर जमा होने लगेगी। यहां तक कि दूसरे चरण के अंत में आप ऊर्जा की सात पर्तों में समा जाएंगे।

भाव के साथ नाचें, इसका मजा लें, इसमें स्नान करें—और अपने शरीर को भी इस उत्सव में भाग लेने दें।

तीसरा चरण :

जमीन पर झुक जाएं और दोनों हाथों को प्रार्थना की मुद्रा में सामने फैला दें—और फिर कल्पना करें कि आप ऊर्जा की अग्निशिखा हैं—आपसे होकर ऊर्जा भूमि से ऊपर उठ रही है। धीरे-धीरे आपके हाथ आपके सिर के ऊपर उठ जाएंगे और आप का शरीर अग्निशिखा का आकार ले लेगा।

रात के समय करने वाली ध्यान विधियां

74
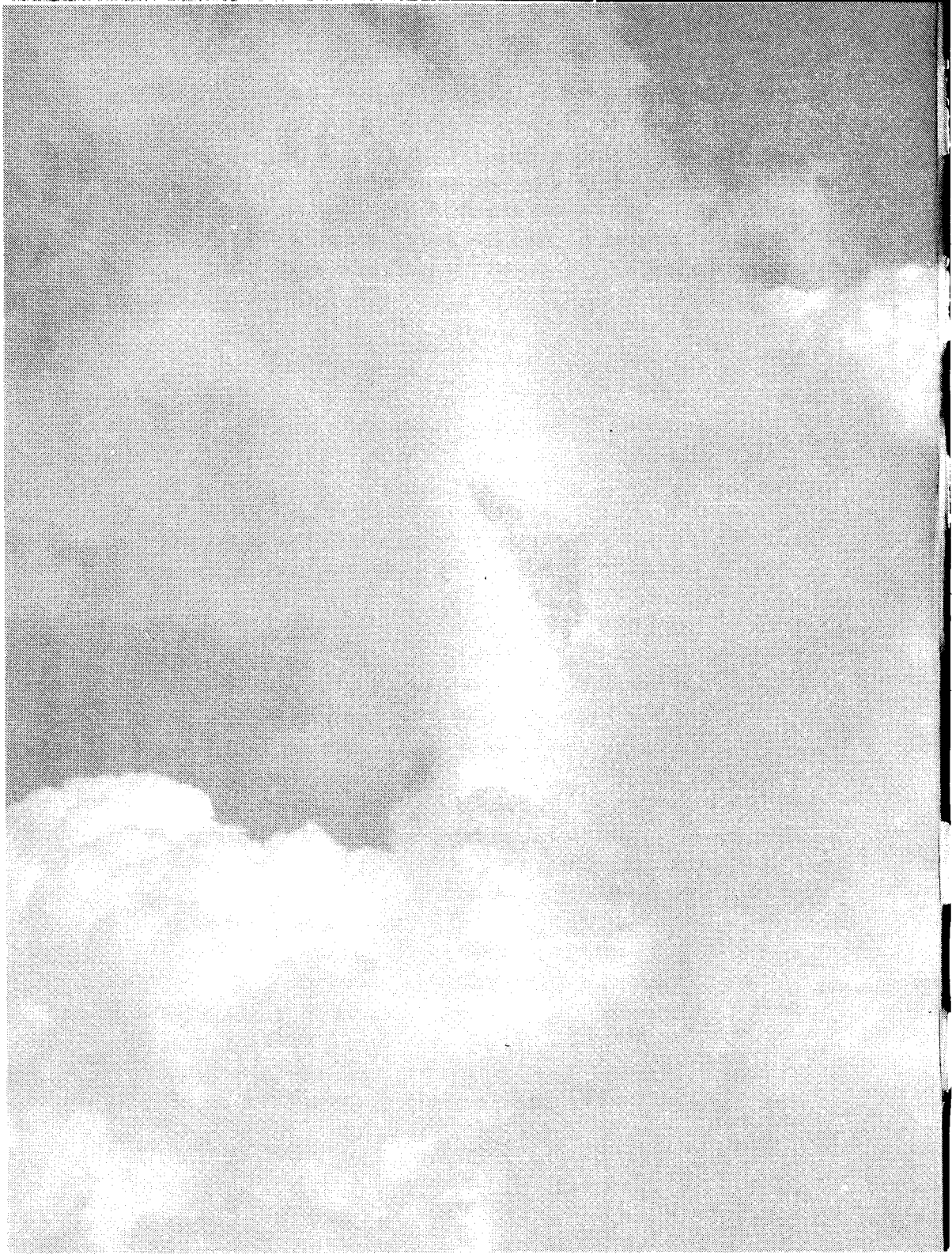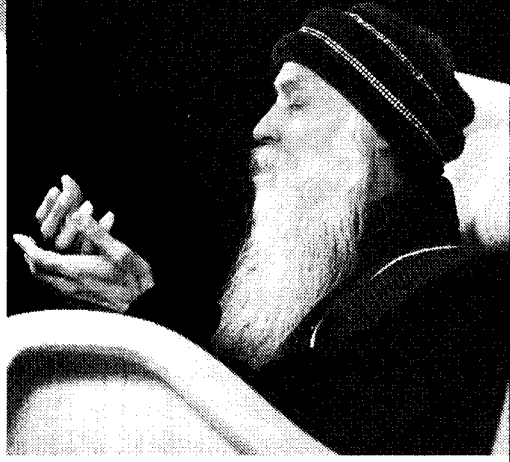
प्रकाश पर ध्यान

जितना अधिक आप प्रकाश पर ध्यान करेंगे, उतना अधिक आप चकित होंगे कि भीतर कोई चीज खुलने लगी है, जैसे कि कोई कली खिलने लगी हो और फूल बनने लगी हो।

प्रकाश पर ध्यान करना बहुत ही प्राचीनतम विधियों में से एक है। सभी युगों में, सभी देशों में, सभी धर्मों में, एक विशेष कारण से इसे महत्व दिया गया है। क्योंकि जिस क्षण आप प्रकाश पर ध्यान करते हैं, कुछ जो आपके भीतर एक कली की तरह रुका हुआ था, अपनी पंखुड़ियां खोलने लगता है। प्रकाश पर ध्यान करना ही उसके खुलने के लिए एक परिवेश निर्मित करता है।

तो इसे ही अपना ध्यान बना लें। जब भी आपको समय मिले, अपनी आंखें बंद कर लें और प्रकाश का भाव करें। जहां भी आपको प्रकाश दिखे, उसमें डूबें। उसके प्रति उपेक्षापूर्ण रुख न रखें। उसके प्रति भक्तिभाव रखें। चाहे वह सूर्योदय हो, या कमरे में जलती एक साधारण सी मोमबत्ती हो, लेकिन आप उसके प्रति प्रार्थनापूर्ण भाव रखें। और आपको बहुत लाभ होगा।

यदि कोई प्रकाश के साथ निरंतर अनुकूलता अनुभव करता रहे तो बहुत आशीर्वाद बरसते हैं।

75

बुद्धत्व का अवलोकन

अपने कमरे में बुद्ध की एक छोटी सी मूर्ति रख लें और जब भी आपको समय मिले, उस मूर्ति को बस देखें।

बुद्ध की मूर्ति एक छवि के रूप में ही नहीं बनाई गई थी, वह ध्यान के लिए एक विषय की भांति बनाई गई थी। वह वास्तविक बुद्ध का प्रतिरूप नहीं है—बुद्ध ऐसे नहीं थे। वह एक प्रतीक मात्र है। बुद्ध के शारीरिक आकार की बजाय वह उनकी आंतरिक गरिमा को ज्यादा दर्शाती है। ऐसा नहीं कि बुद्ध बिलकुल वैसे ही थे—वही चेहरा, वही नाक और आंखें। मूर्ति का यह प्रयोजन नहीं है। वह यथार्थवादी नहीं है—वह अतियथार्थवादी है। वह उस वास्तविकता के बारे में कुछ कहती है जो तथाकथित वास्तविकता के परे है। इसलिए वह एक यंत्र है। उसे देखते-देखते व्यक्ति को ध्यान घट सकता है। इसीलिए हजारों

बुद्ध-प्रतिमाओं का निर्माण हुआ। किसी और व्यक्ति की इतनी मूर्तियां नहीं बनीं जितनी बुद्ध की। ऐसे मंदिर भी हैं, जहां एक-एक मंदिर में दस-दस हजार बुद्ध की मूर्तियां हैं, सिर्फ एक ध्यान का वातावरण बनाने के लिए। सब तरफ, जहां भी आपकी नजर जाए, आपको बुद्ध दिखें—बुद्ध का निष्कंप स्वरूप, बुद्ध का शांत बैठना, वह शांति, वह आभा, वे बंद आंखें, वह थिर मुद्रा, वह संतुलन, वह अनुपात। बुद्ध की वे मूर्तियां संगमरमर में अंकित संगीत हैं, पत्थरों में ढली देशनाएं हैं।

76

तारे का भीतर प्रवेश

तारों के साथ अधिक से अधिक मेल-जोल बढ़ाएं। जब भी रात में तारे हों और आकाश साफ हो, तो जमीन पर लेट जाएं और तारों को देखें। यदि किसी विशेष तारे के प्रति आपको खिंचाव महसूस हो तो उस पर एकाग्रता करें। उस पर एकाग्रता करें और भाव करें कि आप एक छोटी सी झील हैं और वह तारा आपके भीतर गहराई में प्रतिबिंबित हो रहा है। तो बाहर तारे को देखें और भीतर उसके प्रतिबिंब को देखें। यह आपका ध्यान बन जाएगा और एक गहन आनंद इससे उठेगा। एक बार आपको इसका रस आ जाए, तो आप जब चाहे अपनी आंखें बंद कर सकते हैं और उस तारे को देख सकते हैं—अपने तारे को। लेकिन पहले तो आपको उसे ढूंढ़ना पड़ेगा।

पूर्व में यह धारणा है कि हर व्यक्ति का एक विशेष तारा है। सभी तारे हर किसी के लिए नहीं हैं, हर व्यक्ति के लिए एक विशेष तारा है।

यह धारणा सुंदर है। जहां तक ध्यान का संबंध है, आप एक तारा खोज ले सकते हैं जो आपका तारा हो और जिस तारे के आप हों। आपके और उस तारे के बीच एक लगाव पैदा हो जाएगा, क्योंकि हम भी प्रकाश से बने हैं, जैसे कि तारे। हम भी प्रकाश की तरह कंपित होते हैं, जैसे कि तारे होते हैं। आप हमेशा ऐसा तारा खोज ले सकते हैं जिसके साथ आपको सहज ही तालमेल अनुभव हो, जो उसी वेवलेंथ पर हो। वही आपका तारा है, उस पर ध्यान करें। धीरे-धीरे उसे भीतर उतरने दें। उसे देखें, फिर आंखें बंद कर लें और उसे भीतर देखें। आंखें खोलें, उसे देखें। फिर आंखें बंद कर लें और उसे भीतर देखें। शीघ्र ही आप पाएंगे कि वह आपके भीतर है। फिर जब भी आप अपनी आंखें बंद करेंगे, उसे वहां पाएंगे।

और जब आप उसे भीतर अनुभव करना शुरू कर दें तब उसे नाभि के पास अनुभव करें, नाभि से दो इंच नीचे। उसे वहां घनीभूत करते जाएं, घनीभूत करते जाएं, और शीघ्र ही आप पाएंगे कि तेज प्रकाश आपके भीतर उठ रहा है जैसे कि सच में ही कोई तारा भीतर उग आया हो। और ऐसा नहीं कि केवल आप ही उसे अनुभव करेंगे, दूसरे भी उसे अनुभव करने लगेंगे कि एक विशेष तरह का आलोक आपके शरीर को घेरे हुए है, आपका चेहरा आलोकित हो गया है।

बस कुछ रात देखते रहें और आप अपना तारा खोजने में समर्थ हो जाएंगे।

77

चंद्र ध्यान

अगली बार जब पूर्णिमा आने वाली हो, तो तीन दिन पहले से यह ध्यान शुरू कर दें। बाहर खुले में चले जाएं, चांद को देखें और झूमना शुरू कर दें। भाव करें कि आपने सब कुछ चांद पर छोड़ दिया है—चांद के नशे में हो जाएं। चांद को देखें, अपने को ढीला छोड़ दें और उसे कह दें कि आप राजी हैं, और उसे जो करना हो वह करे।

फिर जो भी होता हो, होने दें। यदि आपको झूमने जैसा लगे तो झूमें। यदि आपको नाचने का या गाने का भाव हो तो नाचें-गाएं। लेकिन सब कुछ ऐसे होना चाहिए जैसे कि आप करने वाले नहीं हैं—आप कर्ता नहीं हैं—यह सब बस हो रहा है। आप एक बांसुरी हैं, जिसे कोई बजा रहा है।

पूर्णिमा से पहले तीन दिन इसे करें। और जैसे-जैसे चांद पूरा होता जाएगा, आप और-और ऊर्जा अनुभव करेंगे, आप और-और मदहोश अनुभव करेंगे। पूर्णिमा की रात तक तो आप पूरे पागल हो जाएंगे। एक घंटे के नृत्य और मदहोशी से ही आप इतना हलका महसूस करेंगे जितना कि पहले आपने कभी महसूस नहीं किया होगा।

78

ब्रह्मांड के भाव में सोने जाएं

शांत बैठे हुए भाव करें कि आप असीम हैं, कि जहां तक जगत का विस्तार है वहां तक आप भी फैले हुए हैं। अपने को विस्तृत अनुभव करें, उस विस्तार में सब समा लें—सूरज आपके भीतर उगता है, तारे आपके भीतर घूमते हैं, वृक्ष उगते हैं, संसार बनते हैं और मिट जाते हैं। और चेतना की उस विस्तीर्ण स्थिति का गहरा आनंद लें। और वह आपका ध्यान बन जाएगा। तो जब भी आपके पास समय हो और आप कुछ न कर रहे हों, तो शांत बैठ जाएं और विस्तार को अनुभव करें। सब सीमाएं गिरा दें। सीमाओं के बाहर छलांग लगा दें। शुरू में कुछ दिन यह पागलपन जैसा लगेगा, क्योंकि हम सीमाओं के बहुत आदी हो गए हैं। असल में कहीं कोई सीमाएं नहीं हैं। सब सीमाएं मन की ही सीमाएं हैं। क्योंकि हम विश्वास करते हैं कि सीमा है, इसलिए वह है।

इस सागर जैसे विस्तार को जितनी बार अनुभव कर सकें, करें। और शीघ्र ही आप उसके साथ लयबद्ध हो जाएंगे। फिर तो बस जरा सा भाव और वह मौजूद है। हर रात जब आप सोने जाएं तो उस विस्तृत चेतना के साथ नींद में प्रवेश करें। ऐसे भाव के साथ सोएं जैसे कि चांद-तारे आपके भीतर घूम रहे हों; आपके भीतर संसार बन रहा हो, विलीन हो रहा हो। ब्रह्मांड के रूप में सोने जाएं। सुबह जैसे ही आपको खयाल आए कि नींद जा चुकी है, फिर से उस विस्तार का स्मरण करें और ब्रह्मांड की तरह बिस्तर से उठें। और दिन में भी जितनी बार आप उसका स्मरण कर सकें, करें।

79

सब काल्पनिक है

कभी सिनेमाघर में इसका प्रयोग करें। यह एक अच्छा ध्यान है। बस इतना स्मरण रखने की चेष्टा करें कि यह काल्पनिक है, यह काल्पनिक है...स्मरण रखें कि यह काल्पनिक है और पर्दा खाली है। और आप चकित हो जाएंगे—केवल कुछ सेकेंड के लिए आप स्मरण रख पाते हैं और फिर भूल जाते हैं, फिर यह यथार्थ लगने लगता है। जब भी आप स्वयं को भूल जाते हैं, सपना असली हो जाता है। जब भी आप स्वयं को स्मरण रखते हैं—कि मैं असली हूं, आप अपने को झकझोरते हैं—तब पर्दा पर्दा रह जाता है और जो भी उस पर चल रहा है सब काल्पनिक हो जाता है।

80

ध्यान के भीतर ध्यान

रात में प्रकाश बुझा कर बिस्तर पर बैठ जाएं और अपनी आंखें बंद कर लें। कल्पना करें कि आप एक जंगल में हैं—हरे-भरे वृक्षों के बीच, बड़े-बड़े जंगली वृक्षों के बीच। कल्पना करें कि आप वहां खड़े हैं। फिर चलना शुरू करें। सहज भाव से चलें, कुछ प्रयास न करें। ऐसा न कहें, 'मैं उस वृक्ष के पास जाना चाहता हूं।' नहीं, बस सहज भाव से चलें। पांच-सात मिनट जंगल में चलने के बाद आप एक गुफा के निकट पहुंच जाएंगे।

हर चीज को होशपूर्वक महसूस करें—नीचे की जमीन, गुफा की पत्थर की दीवारों को अपने हाथों से छुएं; उसकी सतह को, उसकी ठंडक को महसूस करें। गुफा के पास ही एक झरना है। वह आपको मिल जाएगा। एक छोटा सा झरना...और पानी गिरने की आवाज। उसे सुनें और जंगल की शांति को और पक्षियों की आवाज को भी सुनें। पूरे वातावरण को अच्छे से अनुभव करें। फिर गुफा में बैठ जाएं और ध्यान करने लगें। यह ध्यान के भीतर ध्यान है। आपने कभी चीनी डिब्बे देखे हैं? एक डिब्बे के भीतर दूसरा डिब्बा, उसके भीतर फिर डिब्बा...

81

पशु हो जाएं

रात में एक ध्यान करना शुरू करें। भाव करें कि आप मनुष्य हैं ही नहीं। आप कोई भी पशु चुन सकते हैं जो आपको अच्छा लगे। यदि आपको बिल्ली अच्छी लगती है, ठीक है। यदि आपको कुत्ता अच्छा लगता है, ठीक है। या बाघ; नर, मादा, जो भी आपको अच्छा लगे। कुछ भी चुन लें, पर फिर वह बने रहें। फिर वही पशु हो जाएं। चारों हाथों-पैरों से कमरे में घूमें और बिलकुल वह पशु हो जाएं।

पंद्रह मिनट तक इस कल्पना का जितना आनंद ले सकें, लें। यदि आप एक कुत्ते हैं तो भौंकें और वह सब करें जो कि एक कुत्ता कर सकता है—और सच में करें! उसका आनंद लें। और रोकें नहीं, क्योंकि कुत्ता कुछ भी रोक नहीं सकता। कुत्ते का मतलब है पूर्ण स्वतंत्रता। तो उस क्षण जो भी हो, करें। उस क्षण मनुष्य के नियंत्रण करने के स्वभाव को बीच में मत लाएं। सच में पूरी तरह से कुत्ता ही हो जाएं। पंद्रह मिनट तक कमरे में घूमते रहें—भौंकें, उछलें, झपटें।

इससे मदद मिलेगी। हमें थोड़ी पशु-ऊर्जा की जरूरत है। हम बहुत सभ्य और बहुत सुसंस्कृत हो गए हैं और वही हमें पंगु कर रहा है। अत्यधिक सभ्यता पैरालिसिस जैसी हो जाती है। थोड़ी मात्रा में वह ठीक है, लेकिन अधिक हो जाए तो बहुत खतरनाक है। व्यक्ति में पशु हो जाने की क्षमता हमेशा रहनी चाहिए। आपकी पशुता को स्वतंत्र करना है। यदि आप थोड़ा जंगली होना सीख जाएं तो आपकी काफी समस्याएं विलीन हो जाएंगी।

तो आज रात से ही शुरू कर दें और उसका आनंद लें!

82

नकारात्मक हो जाएं

हर रात साठ मिनट के लिए इस विधि का प्रयोग करें।

चालीस मिनट के लिए पूरी तरह नकारात्मक हो जाएं—जितने भी निगेटिव हो सकें, नकारात्मक हो सकें, हो जाएं। दरवाजे-खिड़कियां बंद कर लें, कमरे के चारों ओर तकिए रख लें। फोन निकाल दें और सबसे कह दें कि एक घंटे के लिए आपको कोई परेशान न करे। दरवाजे पर एक नोटिस लगा दें कि एक घंटे के लिए आपको बिलकुल अकेला छोड़ दिया जाए। चीजों को जितना संभव हो धूमिल कर लें। कोई उदास संगीत लगा लें और मुर्दे की भांति महसूस करें। मुंह लटका कर बैठ जाएं और नकारात्मक महसूस करें। 'नहीं' का मंत्र की भांति जाप करें।

अतीत के उन दृश्यों की कल्पना करें, जब आप बहुत ही उदास और मुर्दे से थे, और आप अपने को खतम कर देना चाहते थे, और जीवन में कोई रस न था—और उन दृश्यों को बढ़ा-चढ़ा कर देखें। अपने आसपास पूरी परिस्थिति निर्मित कर लें।

आपका मन आपको भटकाएगा। वह कहेगा, 'तुम क्या कर रहे हो? रात इतनी सुंदर है और चंद्रमा पूरा खिला है!'

मन की न सुनें। उससे कह दें कि उसे जो कहना हो बाद में कहे, लेकिन इस समय आप पूरी तरह से 'नकारात्मकता' को समर्पित हैं। पूरे प्राणों से नकारात्मक हो जाएं। रोएं, चीखें, चिल्लाएं, गालियां बकें—जो भी आप करना चाहें, करें। बस एक बात स्मरण रखें : खुश न हों, कोई खुशी जाहिर न करें। अगर आप खुशी जाहिर करते हुए पकड़ें तो तुरंत स्वयं को एक चपत लगाएं और वापस नकारात्मकता पर लौट आएं और तकियों को पीटना शुरू कर दें, उनसे लड़ें, कूदें। पूरे झगड़ालू हो जाएं!

और आप पाएंगे कि पूरे चालीस मिनटों के लिए नकारात्मक होना बहुत ही कठिन है। यह मन के बुनियादी नियमों में से एक है—कि जो भी आप होशपूर्वक करेंगे, नहीं कर सकेंगे। लेकिन उसे करें—और जब आप उसे होशपूर्वक करते हैं तो आप एक पृथकता अनुभव करेंगे। आप उसे कर रहे हैं, लेकिन फिर भी आप साक्षी हैं, आप उसमें खो नहीं गए हैं। तब एक दूरी पैदा होती है और वह दूरी बहुत सुंदर है। लेकिन मैं वह दूरी पैदा करने को नहीं कह रहा हूं। वह एक बाइ-प्रॉडक्ट है, आपको उसकी चिंता करने की जरूरत नहीं है।

चालीस मिनट के बाद अचानक नकारात्मकता के बाहर छलांग लगा दें। तकिए दूर फेंक दें, लाइट जला लें, कोई सुंदर संगीत लगा लें और बीस मिनट के लिए नृत्य करें। सिर्फ कहें : 'हां! हां! हां!' इसे अपना मंत्र बना लें। और फिर अच्छी तरह से स्नान कर लें।

यह आपकी पूरी नकारात्मकता को उखाड़ फेंकेगा और आपको 'हां' कहने की एक नई झलक दे जाएगा। और हां कहने तक पहुंचना ही धर्म का एकमात्र लक्ष्य है। हमें 'नहीं' कहने के लिए प्रशिक्षित किया गया है—और इसी कारण हमारा पूरा समाज कुरूप हो गया है।

तो यह विधि आपको पूरी तरह से शुद्ध कर देगी। आपके पास ऊर्जा है, लेकिन उस ऊर्जा के चारों तरफ नकारात्मकता की चट्टानें हैं जो उसे बाहर नहीं आने देतीं। एक बार वे चट्टानें हट जाएं तो ऊर्जा बहने लगेगी। ऊर्जा मौजूद है, बहने के लिए तत्पर है, लेकिन पहले आपको नकारात्मकता से गुजरना होगा। 'नहीं' की गहराइयों में जाए बिना कोई भी 'हां' की ऊंचाइयों को नहीं छू सकता। पहले आपको नहीं कहना होगा, फिर हां कहना उसी से निकलता है।

83

'हां, हां, हां'

'हां' को एक मंत्र बना लें। हर रात सोने से पहले दोहराएं : 'हां, हां, हां।' और इसे लय में दोहराएं, इसके साथ झूमें। सिर से लेकर पैर तक पूरे अस्तित्व से इसे उठने दें। अपने प्राणों में इसे उतर जाने दें। दोहराएं : 'हां, हां, हां।' रात में दस मिनट के लिए इसी को अपनी प्रार्थना बना लें और फिर सो जाएं। और सुबह उठते ही फिर कम से कम तीन मिनट के लिए अपने बिस्तर पर बैठ जाएं और पहला काम यह करें कि 'हां' को दोहराएं, और पूरे भाव से दोहराएं। दिन में भी जब भी आप कभी नकारात्मक अनुभव करें, बीच रास्ते पर रुक जाएं, अगर जोर से 'हां, हां' कह सकें तो बहुत अच्छा, नहीं तो कम से कम अपने भीतर ही कहें : 'हां, हां।'

84

एक छोटा, तीव्र कंपन

प्रकाश बुझा लें और अंधेरे में खड़े हो जाएं। और फिर सिर से कंपन शुरू करें, पहले सिर्फ सिर को कंपाएं। कंपन का आनंद लें और देखें कि भीतर से कैसा लगता है। फिर शरीर के ऊपरी भाग को कंपाएं—सिर, हाथ और धड़; नीचे के भाग को मत कंपाएं। जब आप उसका अनुभव और आनंद ले लें, तब निचले भाग को कंपाएं। जब आप उसका भी अनुभव और आनंद ले लें, तब पूरे शरीर को कंपाएं। तो तीन भाग हुए—पहले केवल सिर; दूसरा धड़; तीसरा पूरा शरीर।

सिर से शुरू करें, क्योंकि शुरुआत में वहां महसूस करना आसान है क्योंकि चेतना बहुत नजदीक है और साक्षी होना आसान है—और उसका आनंद लें।

जब आपका पूरा शरीर कंप रहा हो तो देखें कि कौन सी मुद्रा सबसे ज्यादा सहज लगती है, गरिमापूर्ण लगती है और कहां आपको ज्यादा से ज्यादा सुंदर मालूम पड़ता है। तीन मिनट के बाद उस मुद्रा में आ जाएं—कोई भी मुद्रा...हाथ ऊपर उठे हुए, शरीर सामने झुका हुआ या बगल में झुका हुआ या जो भी—और उस मुद्रा में चार मिनट के लिए एकदम थिर हो जाएं।

यह कुल दस मिनट का ध्यान है: एक मिनट सिर का कंपन, दो मिनट धड़ का कंपन, तीन मिनट पूरे शरीर का कंपन और चार मिनट के लिए एकदम थिर हो जाना जैसे कि आप एक मूर्ति हों।

पूरे चारों चरणों में देखते रहें। कंपन में आप ऊर्जा को उठता हुआ महसूस करेंगे...फिर पूरा शरीर ऊर्जा का एक बवंडर हो जाएगा। महसूस करें—जैसे कि आप बवंडर में हों। और फिर अचानक रुक जाएं और मूर्तिवत हो जाएं—और तब आप अपने भीतरी केंद्र को अनुभव करेंगे। इस तरह बवंडर से गुजर कर हम अपने केंद्र तक पहुंचते हैं।

85
अपने कवच उतार दो

रात में जब आप सोने जाएं तो अपने कपड़े उतारें और कपड़े उतारते समय भाव करें कि आप केवल कपड़े ही नहीं उतार रहे बल्कि अपने कवच भी उतार रहे हैं। सच में ऐसा करें। अपने कवच उतार दें और एक गहरी श्वास लें—और फिर बिना कवच के ही सो जाएं, शरीर पर कुछ न हो, कोई नियंत्रण न हो।

86
जीवन और मृत्यु ध्यान

रात्रि, सोने से पूर्व, पंद्रह मिनट का यह ध्यान करें। यह एक मृत्यु ध्यान है। लेट जाएं और शरीर को ढीला छोड़ दें। भाव करें कि आप मर रहे हैं। और आप अपना शरीर नहीं हिला सकते, क्योंकि आप मर गए हैं। बस भाव करें कि आप शरीर से हट रहे हैं। दस-पंद्रह मिनट तक यह भाव करते रहें और एक

सप्ताह के भीतर आप इसे बिलकुल अनुभव करेंगे। यह ध्यान करते-करते ही सो जाएं। ध्यान जारी रखें, ध्यान करते-करते ही नींद में चले जाएं। जब आपको नींद आने लगे तो सो जाएं।

सुबह जिस क्षण आपको लगे कि आप जाग गए हैं—अभी अपनी आंखें मत खोलें—पहले जीवन ध्यान करें। भाव करें कि आप पूर्णरूप से जीवंत हो रहे हैं, कि जीवन वापस आ रहा है और पूरा शरीर शक्ति और ऊर्जा से भर रहा है। बिस्तर पर ही, आंखें बंद रखे हुए, हिलना और झूमना शुरू कर दें। अनुभव करें कि आपमें प्रगाढ़ जीवन प्रवाहित हो रहा है। अनुभव करें कि शरीर में ऊर्जा की बाढ़ आई हुई है—मृत्यु ध्यान से बिलकुल विपरीत।

तो मृत्यु ध्यान रात में सोने से पहले करें और जीवन ध्यान सुबह उठने से ठीक पहले करें।

जीवन ध्यान करते समय आप गहरी श्वासें ले सकते हैं। प्राण ऊर्जा को, जीवन को श्वास के साथ भीतर आता हुआ अनुभव करें। स्वयं को ऊर्जा से लबालब, बहुत आनंदित और जीवंत अनुभव करें। फिर पंद्रह मिनट के बाद बिस्तर से उठें।

87

बच्चे की दूध की बोतल

हर रात सोने से पहले बच्चों की दूध पीने की बोतल अपने मुंह में ले लें। छोटे बच्चे की तरह हो जाएं और उसे स्तन की भांति चूसने लगें। आपको एक गहन तृप्ति का अनुभव होगा।

88

भय में प्रवेश

रोज रात चालीस मिनट अपने भय को जीएं। कमरे में बैठ जाएं, प्रकाश बुझा लें और भयभीत होना शुरू कर दें। सब भयानक चीजों की कल्पना करें—भूत-प्रेतों के बारे में सोचें। और भी जो आप कल्पना कर सकें करें। कल्पना करें कि वे आपके आसपास नाच रहे हैं और सभी दुष्ट शक्तियां आपको

पकड़ रही हैं। अपनी कल्पना द्वारा ही बिलकुल भयभीत हो जाएं और अपनी कल्पना को चरम सीमा पर ले जाएं—वे मार-पीट कर रहे हैं, बलात्कार कर रहे हैं, गला घोंट रहे हैं। और एक-दो नहीं—कई, सब तरफ से वे आपको सता रहे हैं। भय में जितना संभव हो उतने गहरे उतर जाएं और जो कुछ भी होता हो उसे होने दें।

और दूसरी बात, दिन में, या किसी भी समय, जब भी भय उठे, उसे स्वीकार कर लें। उसे अस्वीकार न करें। ऐसा मत सोचें कि वह कुछ गलत है जिसके कि पार जाना है। वह नैसर्गिक है।

भय के सहज स्वीकार से और रात में उसे अभिव्यक्त कर देने से, चीजें बदलनी शुरू हो जाएंगी।

89

अपनी शून्यता में प्रवेश

नियमित रूप से रोज रात सोने से पहले अपनी आंखें बंद कर लें और बीस मिनट के लिए अपनी शून्यता में चले जाएं। उसे स्वीकार कर लें। भय उठता है—उसे भी उठने दें। भय उठे तो भय से कंपें, लेकिन उस स्थिति से भागें नहीं। दो-तीन सप्ताह के भीतर ही आपको उसके सौंदर्य का बोध होने लगेगा, आपको उसके आनंद का बोध होने लगेगा। और एक बार आप उस आनंद का अनुभव कर लें, तो भय अपने आप विलीन हो जाएगा। आपको उससे लड़ना नहीं है। तीन सप्ताह के भीतर एक दिन अचानक आप देखेंगे कि ऐसे आशीष बरस रहे हैं, ऐसी ऊर्जा उमड़ रही है, प्राणों में ऐसा आनंद उमग रहा है, जैसे कि रात समाप्त हो गई हो और सूरज क्षितिज पर आ गया हो।

90

गर्भ में वापस लौटना

सोने से पहले बिस्तर पर बैठ जाएं—आराम से बैठ जाएं—और अपनी आंखें बंद कर लें। भाव करें कि शरीर शिथिल हो रहा है...यदि शरीर आगे की ओर झुकने लगे तो झुक जाने दें; वह आगे झुक सकता है। शरीर गर्भ जैसी मुद्रा में आ सकता है—ठीक वैसी जब बच्चा मां के गर्भ में होता है। यदि वैसा हो तो बस गर्भ की मुद्रा में चले जाएं; मां के गर्भ में छोटा बच्चा बन जाएं।

और फिर केवल अपनी श्वास को सुनें, और कुछ भी न सुनें। बस श्वास को सुनें—श्वास भीतर आ रही है, श्वास बाहर जा रही है; श्वास भीतर आ रही है, श्वास बाहर जा रही है। मैं इसे दोहराने के लिए नहीं कह रहा हूं—बस उसे भीतर आता हुआ अनुभव करें; जब वह बाहर जा रही हो तो उसे बाहर जाता हुआ अनुभव करें।

केवल उसे अनुभव करें, और उस अनुभव करने में ही आप एक गहन शांति और बोध का आविर्भाव अनुभव करेंगे।

यह ध्यान केवल दस से बीस मिनट के लिए है—कम से कम दस मिनट, अधिक से अधिक बीस मिनट—और फिर सो जाएं।

91

आवाजें निकालना

जब ध्यान आपके भीतर ऊर्जा को निर्मुक्त करता है, तो ऊर्जा अभिव्यक्ति के सभी प्रकार के मार्ग खोज लेगी। यह निर्भर करता है कि किस तरह की प्रतिभा आपके पास है। यदि आप एक चित्रकार हैं, तो जब ध्यान से ऊर्जा जगेगी तो आप चित्र बनाने में लग जाएंगे, आप पागलों की तरह चित्र बनाएंगे। आप और सब कुछ भूल जाएंगे, पूरी दुनिया को भूल जाएंगे, आपकी पूरी ऊर्जा चित्र बनाने में लग जाएगी। यदि आप एक नर्तक हैं तो आपका ध्यान आपको बहुत ही कुशल नर्तक बना देगा। यह आपकी प्रतिभा पर, आपकी क्षमता पर, आपके व्यक्तित्व पर, आपकी निजता पर निर्भर करता है।

तो कोई नहीं जानता कि क्या होगा। कभी-कभी अचानक परिवर्तन घटेगा। कोई व्यक्ति जो बहुत शांत था, जो बिलकुल बातूनी नहीं था, अचानक बातूनी हो जाएगा। हो सकता है उसने दबाया हो, हो सकता है उसे कभी बोलने का मौका ही न मिला हो। तो जब ऊर्जा उठती है और बहने लगती है, तो वह खूब बोलने लग सकता है।

तो हर रात सोने से पहले, चालीस मिनट के लिए दीवार की तरफ मुंह करके बैठ जाएं और बोलना शुरू कर दें—जोर से बोलें। उसका आनंद लें, उसके साथ बहें। यदि आपको लगे कि दो तरह की आवाजें आ रही हैं, तो दोनों तरफ से बोलें। पहले एक तरफ से बोलें, फिर दूसरी तरफ से जवाब दें, और देखें कि कैसे आप एक सुंदर संवाद निर्मित कर सकते हैं।

इसमें कुछ भी काट-छांट न करें, क्योंकि आप किसी और से यह नहीं कह रहे हैं। यदि यह पागलपन जैसा लगे तो लगने दें। कुछ भी काट-छांट करने का या बदलने का प्रयास न करें, क्योंकि फिर तो कोई मतलब ही नहीं रह जाएगा।

इसे कम से कम दस दिन करें। अपनी पूरी ऊर्जा इसमें लगा दें।

92

प्रार्थना

अच्छा हो कि यह प्रार्थना ध्यान रात में करें। कमरे में अंधेरा कर लें और इस ध्यान के बाद तुरंत सो जाएं। या सुबह भी इसे किया जा सकता है, लेकिन इसके बाद पंद्रह मिनट विश्राम जरूर करना चाहिए। वह विश्राम अनिवार्य है, नहीं तो आपको दिन भर लगेगा कि आप नशे में हैं, तंद्रा में हैं।

अस्तित्व की ऊर्जा में लीन हो जाना ही प्रार्थना है। यह प्रार्थना आपको बदलती है। और जब आप बदलते हैं तो पूरा अस्तित्व भी बदल जाता है।

दोनों हाथ आकाश की तरफ उठा लें, हथेलियां ऊपर की तरफ हों और सिर सीधा उठा हुआ रहे, भाव करें कि अस्तित्व आपमें होकर प्रवाहित हो रहा है।

जैसे ही ऊर्जा आपकी बांहों से होकर नीचे बहेगी, आपको हलके-हलके कंपन का अनुभव होगा—हवा के झोंके में हिलते पत्ते जैसा अनुभव करें। उस कंपन को होने दें, उसके साथ सहयोग करें। फिर पूरे शरीर को ऊर्जा से स्पंदित हो जाने दें, और जो होता हो उसे होने दें।

फिर पृथ्वी के साथ ऊर्जा के प्रवाह को अनुभव करें। पृथ्वी और आकाश, ऊपर और नीचे, यिन और यांग, पुरुष और स्त्री—आप बहें, घुलें, स्वयं को पूरी तरह छोड़ दें। अब आप नहीं हैं। आप अस्तित्व के साथ एक हो जाएं, लीन हो जाएं।

दो-तीन मिनट बाद, या जब भी आप पूरी तरह भरा हुआ अनुभव करें, तब धरती पर झुक जाएं और हथेलियों और माथे से उसे स्पर्श करें। आप तो बस माध्यम बन जाएं कि आकाश की ऊर्जा पृथ्वी की ऊर्जा से मिल सके।

इन दोनों चरणों को छह बार और दोहराएं ताकि सभी चक्र खुल सकें। अधिक बार किया जा सकता है, लेकिन छह बार से कम करने पर बेचैनी अनुभव होगी और नींद ठीक से नहीं आएगी।

प्रार्थना की इस भाव-दशा में ही सो जाएं। प्रार्थना करते-करते ही सो जाएं और वह ऊर्जा बनी रहेगी। नींद में भी वह ऊर्जा आपके साथ रहेगी। इससे बहुत मदद मिलेगी, क्योंकि फिर ऊर्जा सारी रात आपको घेरे रहेगी और कार्य करती रहेगी। सुबह होते-होते आप इतना ताजा, इतना प्राणवान अनुभव करेंगे, जितना आपने पहले कभी अनुभव नहीं किया होगा। एक नये प्राण, एक नये जीवन का आपको अनुभव होगा, और पूरे दिन आप एक नई ऊर्जा से भरा हुआ अनुभव करेंगे; मन में एक नई तरंग होगी, हृदय में एक नया गीत होगा और पैरों में एक नया नृत्य होगा।

93

लातिहान

सहज मुद्रा में खड़े हो जाएं और परमात्मा की, उस पूर्ण की प्रतीक्षा करें, कि वह आप पर काम कर सके। फिर आप जो कुछ भी करना चाहें, अंतस में इस गहन प्रार्थना के भाव से करें—मैंने तुम्हारी मर्जी पर छोड़ दिया है। और फिर जो हो उसे होने दें।

यह वैसा ही है जैसे लोग स्वचालित लेखन करते हैं। वे सिर्फ पेन अपने हाथ में रख लेते हैं और प्रतीक्षा करते हैं। एकाएक कोई ऊर्जा हाथ को पकड़ लेती है और हाथ चलने लगता है। वे भी चकित होते हैं—उनका अपना हाथ चल रहा है और वे उसे नहीं चला रहे हैं!

बिलकुल वैसे से प्रतीक्षा करें! और तीन-चार मिनट के भीतर ही आप अनुभव करेंगे कि अचानक कुछ झटके शरीर को लगे और एक ऊर्जा उतरने लगी। भयभीत न हों, क्योंकि भय पकड़ सकता है, आप इसे कर नहीं रहे हैं। असल में आप तो केवल साक्षी हैं, यह अपने से घटित हो रहा है।

इसके साथ सहयोग करें। शरीर कई तरह की मुद्राएं लेने लगेगा—चलेगा, नाचेगा, झूमेगा, थरथराएगा, कंपेगा—बहुत कुछ होगा। होने दें; न सिर्फ होने दें, बल्कि सहयोग भी करें। तब आप ठीक उस जगह पहुंच जाएंगे जिसे हम सहज योग कहते हैं।

लातिहान कोई नया नहीं है। शब्द ही नया है। सुबुद कुछ नया नहीं है। यह सहज योग का ही नया नाम है। आप सब कुछ परमात्मा पर छोड़ देते हैं, क्योंकि मन चालाक है।

शीघ्र ही आपको अंतर दिखाई पड़ने लगेगा, क्योंकि आप केवल एक द्रष्टा होंगे। आप चकित होंगे, क्योंकि आपका हाथ हिल रहा होगा और आप उसे बिलकुल नहीं हिला रहे। कुछ दिन के बाद यदि आप रोकना भी चाहेंगे तो आप रोक नहीं पाएंगे, आप देखेंगे कि आपके वश में नहीं है।

तो शुरू में तो व्यक्ति को प्रार्थना करनी है और कहना है, 'प्रभु, बीस मिनट के लिए मुझमें उतरो और जो तुम्हें करना हो, करो—तेरी मर्जी पूरी हो, तेरा राज्य आए।' इसी भाव-दशा में रहना है और शरीर को शिथिल छोड़ देना है। परमात्मा आपमें नृत्य करने लगेगा और कई तरह की मुद्राएं लेगा। शरीर की आवश्यकताएं पूरी हो जाएंगी। लेकिन केवल इतना ही नहीं—कुछ शरीर से भी श्रेष्ठतर, शरीर से भी वृहत्तर, कुछ चेतना की गहरी आवश्यकताएं पूरी हो जाएंगी।

94
गौरीशंकर

इस विधि में पंद्रह-पंद्रह मिनट के चार चरण हैं। पहले दो चरण साधक को तीसरे चरण में सहज लातिहान के लिए तैयार कर देते हैं। ओशो ने बताया है कि यदि पहले चरण में श्वास-प्रश्वास को ठीक से कर लिया जाए तो रक्त प्रवाह में निर्मित कार्बन डाइआक्साइड के कारण आप स्वयं को गौरीशंकर जितना ऊंचा अनुभव करेंगे।

पहला चरण : पंद्रह मिनट

आंखें बंद करके बैठ जाएं। नाक से गहरी श्वास लेकर फेफड़ों को भर लें। श्वास को जितनी देर बन पड़े रोके रखें, फिर धीमे-धीमे मुंह के द्वारा श्वास को बाहर छोड़ दें और जितनी देर संभव हो फेफड़ों को खाली रखें। फिर नाक से श्वास भीतर लें और पूरी प्रक्रिया को दोहराएं। पहले चरण में पूरे समय इस श्वास की प्रक्रिया को जारी रखें।

दूसरा चरण : पंद्रह मिनट

सामान्य श्वास प्रक्रिया पर लौट आएं और किसी मोमबत्ती की लौ अथवा जलते-बुझते नीले प्रकाश को सौम्यता से देखते रहें। अपने शरीर को स्थिर रखें।

तीसरा चरण : पंद्रह मिनट

आंखें बंद रखे हुए ही खड़े हो जाएं और अपने शरीर को शिथिल एवं ग्रहणशील हो जाने दें। आपके सामान्य नियंत्रण के पार शरीर को गतिशील करती हुई सूक्ष्म ऊर्जाओं की अनुभूति होगी। इस लातिहान को होने दें। आप गति न करें, गति को सौम्यता से और प्रसादपूर्वक स्वयं ही होने दें।

चौथा चरण : पंद्रह मिनट

आंखें बंद किए हुए ही, शांत और स्थिर होकर लेट जाएं।

पहले तीन चरणों में पीछे सतत एक लयबद्ध ताल की ध्वनि चलती रहनी चाहिए, और अच्छा हो यदि उसकी पृष्ठभूमि में कोई सुखकर संगीत भी चल रहा हो। ताल सामान्य हृदय गति से सात गुना अधिक होनी चाहिए और यदि संभव हो तो जलता-बुझता प्रकाश भी 'सिन्क्रोनाइज़्ड स्ट्रोब' में हो अर्थात् प्रकाश का अनुनादित कंपन हृदय गति से सात गुना होना चाहिए।

95

देववाणी

हर रात को सोने के पहले तुम एक छोटा सा प्रयोग कर सकते हो जो बहुत ही सहायक होगा। प्रकाश बुझा लो, सोने के लिए तैयार हो कर अपने बिस्तर पर बैठ जाओ—पंद्रह मिनट के लिए। आंखें बंद कर लो और फिर कोई निरर्थक एकसुरी आवाज निकालना शुरू करो। उदाहरण के लिए ल ल ल ल—और प्रतीक्षा करो कि मन तुम्हें नई ध्वनियां देता जाए। एक ही बात याद रखनी है कि वे आवाजें या शब्द उस किसी भाषा के न हों जो तुम जानते हो। यदि तुम हिंदी, अंग्रेजी और बंगाली भाषा जानते हो तो उच्चारित शब्द इन भाषाओं के न हों। कोई भी भाषा जो तुम नहीं जानते हो—जैसे मान लो तिब्बती, चीनी, जापानी—उनकी ध्वनियां तुम उच्चारित कर सकते हो। लेकिन यदि तुम जापानी भाषा जानते हो, तो उसका उपयोग तुम नहीं कर सकते; तब इटालियन भाषा अच्छी होगी। वह कोई भाषा बोलो जिससे तुम अपरिचित हो।

पहले दिन कुछ क्षणों के लिए तुम अड़चन में पड़ोगे, क्योंकि वह भाषा तुम कैसे बोल सकते हो जो तुम जानते ही नहीं? एक बार प्रारंभ भर हो जाए, फिर वह बोली जा सकती है। कोई भी आवाज, अर्थहीन शब्द—ताकि सतही चेतन मन को शिथिल करके, अचेतन मन को बोलने दिया जा सके। जब मन का अचेतन हिस्सा बोलता है, तो वह तो कोई भाषा नहीं जानता।...

यह एक बहुत ही प्राचीन विधि है। यह ओल्ड टेस्टामेंट में, पुरानी बाइबिल में उल्लिखित है। उन दिनों इस विधि को 'ग्लोसोलालिया' कहा जाता था और अमेरिका के कुछ चर्च अभी भी इसका उपयोग करते हैं। वे इसे 'जीभ की बोली' कहते हैं। और यह एक अदभुत विधि है—अचेतन का भेदन करने वाली गहनतम विधियों में से यह एक विधि है।

तुम 'ल, ल, ल,' के उच्चार से शुरू कर सकते हो, फिर बाद में जो कुछ ध्वनि आए उसके साथ बहो। केवल पहले दिन तुम थोड़ी कठिनाई अनुभव करोगे। एक बार यह चल पड़े फिर तुम इसका राज़, इसका गुर जान गए। फिर पंद्रह मिनट तक तुममें उतर रही इस अज्ञात भाषा का उपयोग करो; और इसका उपयोग एक बोलचाल की भाषा की तरह ही करो; वास्तव में तुम इस भाषा में बातचीत ही कर रहे हो।

इस विधि का पंद्रह मिनट का अभ्यास तुम्हारे चेतन मन को गहरा विश्राम दे देगा और तब तुम बस लेट जाओ और निद्रा में डूब जाओ। तुम्हारी नींद गहरी हो जाएगी। कुछ ही सप्ताह में तुम अपनी नींद में एक गहराई का अनुभव करोगे और सुबह तुम बिलकुल ताजा अनुभव करोगे।

देववाणी का अर्थ है परमात्मा की वाणी। इसमें साधक के माध्यम से परमात्मा की वाणी ही बोलती है; साधक एक रिक्त पात्र और ऊर्जा के बहने के लिए एक मार्ग बन जाता है। यह ध्यान जीभ का लातिहान है। यह विधि चेतन मन को इतने गहन विश्राम में ले जाती है कि अगर इसका प्रयोग रात सोने के पहले किया जाए तो खूब गहरी नींद आती है।

इस विधि में पंद्रह-पंद्रह मिनट के चार चरण हैं। सभी चरणों में आंखें बंद रखनी हैं।

पहला चरण : पंद्रह मिनट

शांत बैठ जाएं और मधुर संगीत को सुनें।

दूसरा चरण : पंद्रह मिनट

निरर्थक आवाजें निकालना शुरू करें, उदाहरण के लिए 'लऽऽ लऽऽ लऽऽ' से प्रारंभ करें और इसे उस समय तक जारी रखें जब तक कि अनजान-अज्ञात भाषा के शब्दों जैसी ध्वनियां न आने लगें। ये ध्वनियां मस्तिष्क के उस अपरिचित हिस्से से आनी चाहिए जिसका उपयोग बचपने में शब्द सीखने के पहले आप करते थे। बातचीत की शैली में इस अनर्गल शब्द-प्रवाह को आने दें। न रोएं, न हंसें, न चीखें, न चिल्लाएं।

तीसरा चरण : पंद्रह मिनट

खड़े हो जाएं, अनजानी भाषा में बोलना जारी रखें और अब बोलने के साथ-साथ एक लय में शरीर को झूमने दें, डोलने दें, मुद्राएं बनाने दें। यदि आप शरीर को बिलकुल शिथिल छोड़ दें तो सूक्ष्म ऊर्जाएं एक प्रकार का लातिहान पैदा करेंगी, जो आपके बिना किसी प्रयास के होता रहेगा।

चौथा चरण : पंद्रह मिनट

लेट जाएं, शांत और निश्चल रहें।

96

प्रेम

ध्यान है हृदय में डूबना और जब आप हृदय में डूबते हैं तो प्रेम उत्पन्न होता है। प्रेम हमेशा ध्यान का अनुसरण करता है। और इसके विपरीत भी सच है—यदि आप प्रेम में गहरे डूबें तो ध्यान अनुसरण करता है। वे साथ-साथ चलते हैं। वे एक ही ऊर्जा के रूप हैं, वे दो नहीं हैं। या तो ध्यान करें और आपके जीवन में प्रेम उठने लगेगा, आपके चारों ओर एक विराट प्रेम बहने लगेगा, आप प्रेम से छलकने लगेंगे। या फिर प्रेम करें और आप पाएंगे चेतना का वह गुण जिसे ध्यान कहते हैं, जहां विचार खो जाते हैं, जहां विचारों के बादल आपको अब और नहीं घेरते, जहां नींद का कोहरा जो आपको घेरे रहता था, अब नहीं है—सुबह आ गई है, आप जाग गए हैं, आप बुद्ध हो गए हैं।

97

झूठे प्रेम खो जाएंगे

जब आप भीतर की तीर्थयात्रा पर निकलते हैं, तो वही ऊर्जाएं जो बाहर जा रही थीं, भीतर मुड़ जाती हैं और अचानक आप स्वयं को एक द्वीप की भांति अकेला पाते हैं। कठिनाई आती है, क्योंकि आप सच में किसी से जुड़ने में उत्सुक नहीं रहते। आप स्वयं होने में ही ज्यादा उत्सुक होते हैं, और सभी संबंध एक निर्भरता, एक बंधन जैसे दिखाई पड़ते हैं। लेकिन यह एक अस्थायी अवस्था है, इसे स्थायी मनोदशा न बना लें। आज नहीं तो कल जब आप भीतर थिर हो जाएंगे, तब इतनी अतिरेक ऊर्जा होगी कि आपसे बाढ़ की तरह बहेगी और फिर से आप संबंध निर्मित करना चाहेंगे।

इसलिए व्यक्ति जब पहली बार ध्यान में उतरता है तो प्रेम बंधन जैसा लगता है। और एक प्रकार से यह सच भी है, क्योंकि जिसने ध्यान नहीं जाना वह प्रेम भी नहीं कर सकता। वह प्रेम झूठा है, भ्रामक है; एक सम्मोहन अधिक है, प्रेम जैसा कम है। लेकिन हमारे पास तुलना करने के लिए भी कुछ नहीं है, जब तक कि सच्चे प्रेम का आविर्भाव न हो। इसलिए जब ध्यान की शुरुआत होती है तो झूठा प्रेम धीरे-धीरे बिखर जाता है, खो जाता है। पहली बात, इससे हताश मत हों। और दूसरी बात, इसे एक स्थायी मनोदशा न बना लें। यही दो संभावनाएं हैं।

यदि आप हताश हो गए, क्योंकि आपका प्रेम-जीवन बिखर रहा है और आप उससे चिपके हुए हैं, तो वह आपकी अंतर्यात्रा में एक बाधा बन जाएगा। स्वीकार कर लें कि अब ऊर्जा नये मार्ग खोज रही है और कुछ दिन बाहरी गतिविधियों के लिए ऊर्जा उपलब्ध नहीं होगी।

यदि सृजनात्मक विधाओं में संलग्न कोई व्यक्ति ध्यान करता है तो कुछ समय के लिए उसकी सारी सृजनात्मकता खो जाएगी। यदि आप एक पेंटर हैं तो अचानक आप पाएंगे कि अब पेंटिंग में आपका मन नहीं है। आप फिर भी पेंटिंग कर सकते हैं, लेकिन थोड़ी ही देर में आपके अंदर कोई ऊर्जा और कोई उत्साह नहीं रह जाएगा। यदि आप कवि हैं तो कविता रुक जाएगी। यदि आप बहुत प्रेमपूर्ण व्यक्ति हैं, वह सब प्रेम एकदम विलीन हो जाएगा। यदि आप जबरदस्ती बाहरी संबंध बनाए रखने की चेष्टा करते हैं, अपने पुराने व्यक्तित्व को बनाए रखने की कोशिश करते हैं, तो वह जबरदस्ती बहुत ही खतरनाक सिद्ध होगी। तब आप विरोधी चीजें एक साथ कर रहे हैं—एक तरफ आप भीतर जाने का प्रयास कर रहे हैं और दूसरी तरफ आप बाहर जाने का भी प्रयास कर रहे हैं। यह ऐसे ही है जैसे आप कार का एक्सलरेटर भी दबा रहे हैं और ब्रेक भी दबा रहे हैं। कोई भी दुर्घटना हो सकती है, क्योंकि आप दो विपरीत चीजें एक साथ कर रहे हैं।

ध्यान केवल झूठे प्रेम के विरोध में है। झूठा प्रेम खो जाएगा। और सच्चे प्रेम के प्रकट होने की यह एक बुनियादी शर्त है। झूठ को तो जाना ही होगा, झूठ को आपके भीतर से जगह खाली करनी होगी, केवल तभी आप सच के लिए उपलब्ध हो पाएंगे।

दूसरी चीज, जो कि और भी बड़ा खतरा है कि कहीं आप इसे जीवन का ढंग ही न बना लें। कई

व्यक्तियों के साथ ऐसा हो चुका है। वे आश्रमों में हैं—बूढ़े साधु, रूढ़िवादी धार्मिक लोग, जिन्होंने प्रेम-संबंध से बचने को ही जीवन-शैली बना लिया है। वे सोचते हैं कि प्रेम ध्यान के विपरीत है और ध्यान प्रेम के विपरीत है।

यह सच नहीं है। ध्यान झूठे प्रेम के विपरीत है, लेकिन सच्चे प्रेम के पूरे समर्थन में है।

एक बार आप अंतरतम केंद्र में थिर हो गए, जहां से और भीतर जाने को जगह न रही; आपने अपने प्राणों के अंतरतम केंद्र को छू लिया; तब आप अस्तित्व के केंद्र में स्थिर हो जाते हैं। अचानक प्रगाढ़ ऊर्जा उपलब्ध होती है, लेकिन अब जाने को कोई जगह न रही। जब आपने ध्यान करना शुरू किया था, बाहरी यात्रा तो तभी रुक गई थी और अब अंतर्यात्रा भी पूरी हो गई। अब आप कहीं जा नहीं रहे, आप अपने घर पहुंच गए, लेकिन ऊर्जा भरपूर है जैसे कोई बांध लबालब पानी से भरा हो—अब आप क्या करेंगे?

यह ऊर्जा उमड़ कर बहना शुरू कर देगी। यह बिलकुल अलग बात है, इसका गुणधर्म ही अलग है, क्योंकि इसका कोई प्रयोजन नहीं है। पहले आप किसी स्वार्थ से दूसरों के पास जाते थे, अब आपका कोई स्वार्थ नहीं होगा। अब आप दूसरों के पास इसलिए जाएंगे, क्योंकि आपके पास बांटने को बहुत कुछ है। पहले आप एक भिखारी की तरह जीते थे, अब आप एक सम्राट की तरह जीएंगे। ऐसा नहीं है कि आप किसी से कुछ आनंद तलाश रहे हैं—वह तो आपके पास पहले से ही है। अब तो आनंद ही आनंद है। बादल इतना भरा हुआ है कि वह बरसना चाहता है। फूल इतना भरपूर है कि वह सुगंध के रूप में हवाओं पर सवार होकर दुनिया के कोने-कोने में पहुंच जाना चाहता है। यह बांटना है। एक नये प्रकार का संबंध आपके जीवन में आया है। इसे संबंध कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि अब यह कोई संबंध न रहा, बल्कि अब यह आपकी सहज भाव-दशा है। ऐसा नहीं है कि आप प्रेम करते हैं, बल्कि ऐसा है कि आप प्रेम हैं।

98
प्रेम को फैलाएं

प्रेम को फैलाएं। अपने कमरे में अकेले बैठे हुए प्रेम से भर जाएं। प्रेम के प्रकाश को फैलाएं। पूरे कमरे को अपनी प्रेम-ऊर्जा से भर दें। एक नई तरंग में डोलता हुआ अनुभव करें, झूमता हुए अनुभव करें, जैसे कि आप प्रेम के सागर में हों। अपने आसपास प्रेम-ऊर्जा की तरंगें पैदा करें। और आप तुरंत अनुभव करेंगे कि कुछ घट रहा है—आपके आभामंडल में कुछ बदल रहा है, आपके शरीर के आसपास कुछ बदल रहा है; एक ऊष्मा आपके शरीर के आसपास पैदा हो रही है...एक गहन आर्गाज्म जैसी ऊष्मा। आप अधिक जीवंत हो रहे हैं। नींद जैसी कोई चीज खो रही है। जागरण जैसा कुछ आ रहा है। इस सागर में आनंद से झूमें, नाचें, गाएं और पूरे कमरे को प्रेम से भर दें।

शुरू में यह बहुत अजीब सा लगेगा। जब आप पहली बार अपने कमरे को प्रेम-ऊर्जा से, आपकी अपनी ही ऊर्जा से भरेंगे—जो वापस लौट कर आपके ऊपर बरसती रहती है और आपको इतना आनंद से

भर देती है—तो ऐसा लगने लगता है: 'कहीं मैं स्वयं को सम्मोहित तो नहीं कर रहा हूं? कहीं मैं धोखे में तो नहीं हूं? यह क्या हो रहा है?' क्योंकि आपने हमेशा यही सोचा है कि प्रेम किसी दूसरे से आता है। प्रेम के लिए मां चाहिए, पिता चाहिए, भाई चाहिए, पति चाहिए, पत्नी चाहिए, बच्चे चाहिए—लेकिन कोई दूसरा व्यक्ति चाहिए।

जो प्रेम किसी दूसरे व्यक्ति पर निर्भर है, वह क्षुद्र प्रेम है। जो प्रेम आपके भीतर से आता है, जो प्रेम आप अपने प्राणों से जन्माते हैं, वही असली ऊर्जा है। फिर आप उस सागर को साथ लिए कहीं भी जाएं और आप अनुभव करेंगे कि जो आपके पास आता है, अनायास ही एक भिन्न प्रकार की ऊर्जा से तरंगायित हो उठता है।

लोग आपको और भी खुली आंखों से देखेंगे। आप उनके पास से गुजरेंगे और वे अनुभव करेंगे कि किसी अज्ञात ऊर्जा का झोंका उनके पास से गुजर गया है। वे और भी तरोताजा अनुभव करेंगे। आप किसी का हाथ अपने हाथ में लेंगे और उसका पूरा शरीर स्पंदित होने लगेगा। आप किसी के निकट जाएंगे और वह व्यक्ति बिना किसी कारण के ही बहुत खुश होने लगेगा। यह आप स्पष्ट देख सकते हैं। तब आप बांटने के लिए तैयार हो रहे हैं। तब एक प्रेमी खोजें, तब एक ग्रहणशील पात्र खोजें जो लेने को राजी हो।

99

प्रेमी-युगल एक-दूसरे में घुलें-मिलें

ओशो ने यह विधि उन जोड़ों के लिए दी है जो अपने संबंधों में अटका हुआ अनुभव करते हैं—जिनकी ऊर्जाओं को मुक्त होने की और एक-दूसरे में लीन होने की जरूरत है।

रात में एक-दूसरे के सामने बैठ जाएं और एक-दूसरे के तिरछे हाथ पकड़ लें—बाएं हाथ से सामने वाले का दायां हाथ और दाएं हाथ से सामने वाले का बायां हाथ। दस मिनट तक एक-दूसरे की आंखों में झांकते रहें और यदि शरीर हिलने-डुलने लगे और झूमने लगे तो उसे हिलने-डुलने दें और झूमने दें। आप पलकें झपका सकते हैं, लेकिन एक-दूसरे की आंखों में झांकते रहें। यदि शरीर झूमने लगे—और वह झूमेगा—तो उसे झूमने दें। यह स्मरण रहे कि एक-दूसरे का हाथ नहीं छोड़ना है, चाहे कुछ भी हो।

दस मिनट के बाद दोनों अपनी आंखें बंद कर लें और दस मिनट तक आंखें बंद किए हुए झूमते रहें। फिर खड़े हो जाएं और हाथ पकड़े हुए दस मिनट तक खड़े-खड़े एक साथ झूमें। इससे आपकी ऊर्जाएं गहन रूप से घुल-मिल जाएंगी।

थोड़ा सा पिघलने की आवश्यकता है...एक-दूसरे में पिघलने की।

100

प्रेम के प्रति समर्पण

प्रेम-संबंध में आपको खो जाना चाहिए—मालकियत करने का प्रयास नहीं करना चाहिए। प्रेम-संबंध में आपको समर्पित हो जाना चाहिए, और यह नहीं देखते रहना चाहिए कि किसका हाथ ऊपर है। इसलिए सोच-विचार बंद कर दें। और जब भी आप स्वयं को सोचता हुआ पाएं तो सिर को एक अच्छा झटका दें—एक जोरदार झटका ताकि भीतर सब कुछ उलट-पुलट हो जाए। इसका हमेशा खयाल रखें। और कुछ ही सप्ताह में आप देखेंगे कि ऐसा झटका देना सहयोगी होता है। अचानक आप अधिक सजग हो जाते हैं।

झेन मठों में गुरु एक डंडा लेकर चारों ओर घूमता रहता है, और जब भी वह किसी शिष्य को झपकी खाते हुए देखता है, विचारों में खोया हुआ देखता है, सपनों को उसके चेहरे पर तैरता हुआ देखता है तो तुरंत उसके सिर पर जोर से डंडा मारता है। यह अचानक डंडे का पड़ना एक शॉक, एक झटके की तरह रीढ़ से होकर गुजरता है, और एक क्षण के लिए विचार रुक जाते हैं, और अनायास ही सजगता का प्रादुर्भाव होता है।

मैं डंडा लेकर आपके पीछे नहीं घूम सकता। आप स्वयं को ही एक झटका दें, एक जोरदार झटका। और लोग अगर आपको पागल भी समझें तो फिक्र न करें। केवल एक ही पागलपन है और वह है मन का पागलपन। ज्यादा सोच-विचार करना ही एकमात्र पागलपन है। बाकी सब कुछ सुंदर है। मन ही रोग है।

101

प्रेम-कृत्य को अपने आप होने दो

प्रेम-कृत्य में उतरने से पहले, पंद्रह मिनट तक एक-दूसरे के तिरछे हाथ पकड़ कर साथ-साथ बैठे रहें। अंधेरे में या बहुत ही मंद प्रकाश में बैठें और एक-दूसरे को महसूस करें। एक लयबद्धता में आ जाएं। और एक लयबद्धता में आने का आसान तरीका यह है कि साथ-साथ श्वास लें। एक साथ श्वास बाहर छोड़ें, एक साथ श्वास भीतर लें। दो-तीन मिनट में ही आप एक लय में आ जाएंगे। ऐसे श्वास लें जैसे कि आप एक ही शरीर हों—दो शरीर नहीं बल्कि एक। और एक-दूसरे की आंखों में देखें, आक्रामक दृष्टि से नहीं बल्कि बहुत कोमल दृष्टि से। एक-दूसरे का आनंद लें। एक-दूसरे के शरीर के साथ खेलें।

जब तक वह क्षण अपने आप न आ जाए, प्रेम-कृत्य में न उतरें। ऐसा नहीं कि आप प्रेम करते हैं, बल्कि आप स्वयं को प्रेम करता हुआ पाते हैं। उस क्षण की प्रतीक्षा करें। यदि वह न आए तो उसे जबरदस्ती लाने की जरूरत नहीं है। ठीक है। सो जाएं, प्रेम करने की जरूरत नहीं है। उस क्षण की एक, दो, तीन दिन प्रतीक्षा करें। एक दिन वह आएगा। और जब वह क्षण अपने आप आएगा तो प्रेम बहुत ही गहरा जाएगा और जो पागलपन वह अभी पैदा कर रहा है तब पैदा नहीं करेगा। तब वह एक बहुत ही शांत, गहन, सागर जैसी अनुभूति होगी। लेकिन उस क्षण की प्रतीक्षा करें, उसे जबरदस्ती मत करें।

प्रेम को ध्यान की तरह करें। आहिस्ता-आहिस्ता इसके आनंद में डूबें, आहिस्ता-आहिस्ता इसका स्वाद लें, ताकि यह आपके प्राणों में समा जाए और यह आपको इतना अभिभूत कर ले कि आप रहें ही नहीं, प्रेम ही रहे। ऐसा नहीं कि आप प्रेम कर रहे हैं—आप प्रेम हैं। प्रेम आपको आच्छादित कर लेता है। वह आप दोनों को अपने में समाहित कर लेता है...आप दोनों उसमें खो जाते हैं। लेकिन उसके लिए आपको प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

तो उस क्षण की प्रतीक्षा करें। और शीघ्र ही आपको उसका बोध होने लगेगा। ऊर्जा को संगृहीत होने दें और उसे सहज अपने से घटित होने दें। धीरे-धीरे आपको बोध होने लगेगा कि कब वह क्षण आता है। आपको उसका पूर्वाभास होने लगेगा और कोई कठिनाई नहीं होगी।

प्रेम परमात्मा जैसा है—आप उसे अपनी मर्जी से चला नहीं सकते। जब वह होता है तब होता है। यदि वह नहीं हो रहा है तो कोई चिंता करने की बात नहीं है।

102

कृत्यों में साक्षी-भाव

साक्षी आधारभूत स्रोत है।

लेकिन यौन-कृत्य में साक्षी होना कठिन होगा, यदि आप जीवन के दूसरे कृत्यों में साक्षी होने का अभ्यास नहीं कर रहे हैं। इसलिए दिन भर साक्षी-भाव रखने की कोशिश करें, नहीं तो आप आत्मवंचना में पड़ जाएंगे। यदि आप रास्ते पर चलते हुए साक्षी नहीं हो सकते तो स्वयं को धोखा देने की कोशिश न करें, आप प्रेम करते समय भी साक्षी नहीं हो सकते। क्योंकि रास्ते पर चलना, ऐसी सरल सी प्रक्रिया और आप साक्षी नहीं हो सकते—आप उसमें भी बेहोश हो जाते हैं—तो प्रेम करते समय आप कैसे साक्षी हो सकते हैं? वह प्रक्रिया इतनी गहरी है...आप बेहोश हो जाएंगे।

रास्ते पर चलते हुए आप बेहोश हो जाते हैं। प्रयोग करके देखें, कुछ सेकेंड के लिए भी आप स्मरण नहीं रख सकेंगे। प्रयोग करके देखें, रास्ते पर चलते हुए एक प्रयोग करें: 'मैं स्मरण रखूंगा कि मैं

चल रहा हूं, मैं चल रहा हूं, मैं चल रहा हूं।' कुछ सेकेंड के बाद ही आप भूल गए, मन में कुछ और चलने लगा। आप किसी दूसरी ही दिशा में चलने लगे। आप बिलकुल भूल ही गए। और अचानक आपको स्मरण आता है: 'मैं तो भूल गया।'

तो यदि चलने जैसे छोटे से कृत्य को भी होशपूर्वक न किया जा सके तो प्रेम करने को पूरे होश के साथ ध्यान बनाना कठिन होगा। इसलिए सरल चीजों से, सरल क्रियाओं से शुरू करें। भोजन करते समय सजग रहने की कोशिश करें। चलते समय सजग रहने की कोशिश करें। बोलते समय, सुनते समय सजग रहने की कोशिश करें। सब तरफ से सजगता साधें। इसकी एक सतत चोट भीतर पड़ने दें। अपने पूरे शरीर और मन को बोध होने दें कि आप सजग होने का प्रयास कर रहे हैं। केवल तभी किसी दिन प्रेम में साक्षी होना घटेगा। और जब प्रेम में साक्षी होना घटता है, परम आनंद की अनुभूति होती है, दिव्यता की पहली झलक आपको मिलती है।

ओशो ने प्रेम-कृत्य के समय प्रयोग में लाई जाने वाली ध्यान और साक्षित्व की बहुत सी तांत्रिक विधियां 'तंत्र-सूत्र' के पांच भागों में वर्णित की हैं।

103

बहना, मिटना, तथाता

ध्यान का अर्थ है, समर्पण, टोटल लेट गो।

ध्यान का अर्थ है, अपने को पूरी तरह छोड़ देना।

और जैसे ही कोई व्यक्ति अपने को पूरी तरह छोड़ देता है, वह परमात्मा के हाथों में गिर जाता है। जब तक हम अपने को पकड़े हुए हैं, तब तक परम शक्ति से हमारा मिलन नहीं हो सकता। हमें अपने को छोड़ना ही पड़ेगा। हमें अपने को खो ही देना होगा। हमें मिटना ही होगा, तभी हम उसके साथ एक हो सकते हैं, जो सच में है। जैसे कोई लहर अपने को जोर से पकड़ ले तो फिर सागर नहीं हो सकती है, और लहर अपने को छोड़ दे, बिखर जाए, खो जाए, तो वह सागर है ही।

ध्यान कोई क्रिया नहीं है, जो आपको करनी है। ध्यान है सब क्रियाओं का छोड़ देना। ध्यान कोई अभ्यास नहीं है जो आप कर सकते हैं। ध्यान है सब अभ्यास का छोड़ देना। ध्यान है बस रह जाना जैसे हम हैं, जो हम हैं। और कुछ भी न करना। तो इस ध्यान की स्थिति को समझने के लिए पहले दो-तीन छोटे प्रयोग हम करेंगे, ताकि आपको भीतर से खयाल में आ सके कि ध्यान क्या है। फिर उसके बाद हम ध्यान के लिए बैठेंगे।

चल रहा हूं, मैं चल रहा हूं, मैं चल रहा हूं।' कुछ सेकेंड के बाद ही आप भूल गए, मन में कुछ और चलने लगा। आप किसी दूसरी ही दिशा में चलने लगे। आप बिलकुल भूल ही गए। और अचानक आपको स्मरण आता है : 'मैं तो भूल गया।'

तो यदि चलने जैसे छोटे से कृत्य को भी होशपूर्वक न किया जा सके तो प्रेम करने को पूरे होश के साथ ध्यान बनाना कठिन होगा। इसलिए सरल चीजों से, सरल क्रियाओं से शुरू करें। भोजन करते समय सजग रहने की कोशिश करें। चलते समय सजग रहने की कोशिश करें। बोलते समय, सुनते समय सजग रहने की कोशिश करें। सब तरफ से सजगता साधें। इसकी एक सतत चोट भीतर पड़ने दें। अपने पूरे शरीर और मन को बोध होने दें कि आप सजग होने का प्रयास कर रहे हैं। केवल तभी किसी दिन प्रेम में साक्षी होना घटेगा। और जब प्रेम में साक्षी होना घटता है, परम आनंद की अनुभूति होती है, दिव्यता की पहली झलक आपको मिलती है।

ओशो ने प्रेम-कृत्य के समय प्रयोग में लाई जाने वाली ध्यान और साक्षित्व की बहुत सी तांत्रिक विधियां 'तंत्र-सूत्र' के पांच भागों में वर्णित की हैं।

103
बहना, मिटना, तथाता

ध्यान का अर्थ है, समर्पण, टोटल लेट गो।

ध्यान का अर्थ है, अपने को पूरी तरह छोड़ देना।

और जैसे ही कोई व्यक्ति अपने को पूरी तरह छोड़ देता है, वह परमात्मा के हाथों में गिर जाता है। जब तक हम अपने को पकड़े हुए हैं, तब तक परम शक्ति से हमारा मिलन नहीं हो सकता। हमें अपने को छोड़ना ही पड़ेगा। हमें अपने को खो ही देना होगा। हमें मिटना ही होगा, तभी हम उसके साथ एक हो सकते हैं, जो सच में है। जैसे कोई लहर अपने को जोर से पकड़ ले तो फिर सागर नहीं हो सकती है, और लहर अपने को छोड़ दे, बिखर जाए, खो जाए, तो वह सागर है ही।

ध्यान कोई क्रिया नहीं है, जो आपको करनी है। ध्यान है सब क्रियाओं का छोड़ देना। ध्यान कोई अभ्यास नहीं है जो आप कर सकते हैं। ध्यान है सब अभ्यास का छोड़ देना। ध्यान है बस रह जाना जैसे हम हैं, जो हम हैं। और कुछ भी न करना। तो इस ध्यान की स्थिति को समझने के लिए पहले दो-तीन छोटे प्रयोग हम करेंगे, ताकि आपको भीतर से खयाल में आ सके कि ध्यान क्या है। फिर उसके बाद हम ध्यान के लिए बैठेंगे।

और ध्यान को शब्द से समझाना कठिन है। कोई क्रिया होती, अभ्यास होता, शब्द से बताया जा सकता था। लेकिन ध्यान का थोड़ा सा अनुभव खयाल में ले आना आसान है। तो हम तीन छोटे से प्रयोग करेंगे, जिनसे खयाल आ सके कि ध्यान का भाव क्या है। फिर उसके बाद हम ध्यान के लिए बैठेंगे।

पहला प्रयोग : बहना

पहला प्रयोग है, उसे समझना ही है भीतर प्रयोग करके। तो मैं इधर कहूंगा, आप उधर प्रयोग करेंगे। एक तो थोड़े-थोड़े फासले पर बैठें, कोई किसी को छूता हुआ न हो। किसी को भी कोई छू न रहा हो। थोड़े आगे आ जाएं या थोड़े पीछे हट जाएं, थोड़े घास पर हट जाएं, लेकिन कोई किसी को स्पर्श न करता हो। फिर आंख आहिस्ता से बंद कर लें। जोर से बंद नहीं करनी है। आंख पर भी जोर न पड़े, बहुत धीमे से आंख बंद कर लें। जैसे पलक गिरा दी है, आंख बंद हो गई है। आंख पर भी जोर नहीं होना चाहिए, और अपने को बिलकुल ढीला छोड़ दें। आंख बंद कर लें और ढीला छोड़ दें। किसी तरह की शरीर पर कोई स्ट्रेन न रह जाए।

अब भीतर सिर्फ मैं एक कल्पना करने को कहता हूं, ताकि खयाल आ सके कि ध्यान से क्या मतलब है। भीतर देखें कि एक बड़ी नदी बही जा रही है। पहाड़ों के बीच में एक बड़ी नदी बही जा रही है। जोर की लहरें हैं, जोर का बहाव है। पहाड़ी नदी है। भीतर देखें कि दो पहाड़ों के बीच में एक बड़ी नदी तेजी से बही जाती है। जोर का बहाव है, जोर की आवाज है, लहरें हैं, तेज गति है, और नदी बही जा रही है। देखें, उसे स्पष्ट देखें। नदी तेजी से बही जा रही है। वह साफ दिखाई पड़ने लगेगी।

इस नदी में आपको उतर जाना है, लेकिन तैरना नहीं है, बहना है, जस्ट फ्लोटिंग। इस नदी में आप उतर जाएं और बहना शुरू कर दें। हाथ-पैर न चलाएं, सिर्फ बहे जाएं, बहे जाएं, बहे जाएं। हाथ-पैर चलाएं ही मत। तैरना नहीं है, सिर्फ बह जाना है।

नदी में हमने अपने को छोड़ दिया है और नदी भागी चली जा रही है और हम उसमें बहे जा रहे हैं, बहे जा रहे हैं, बहे जा रहे हैं। कहीं पहुंचना नहीं है, किसी किनारे पर नहीं जाना है। कोई मंजिल नहीं है, इसलिए तैरने का कोई सवाल नहीं है। बस सिर्फ बहना है। छोड़ दें, और बहें। नदी में बहने की जो अनुभूति होगी, वह फिर ध्यान को समझने में सहयोगी होगी। एक पांच मिनट के लिए इस नदी में छोड़ दें और बहते जाएं। नदी का कोई अंत नहीं है, वह बही ही चली जा रही है। आप भी उसमें बहने लगे हैं। कुछ करना नहीं है, हाथ-पैर भी नहीं चलाना है, सिर्फ बहते जाना है, बहते जाना है। देखें, नदी बह रही है, आप भी उसके साथ बहने लगे हैं। जरा भी तैरते नहीं हैं, बस बहे जा रहे हैं...।

पांच मिनट मैं चुप हो जाता हूं—आप बहने का, फ्लोटिंग का अनुभव करें।

बहे जा रहे हैं, बहे जा रहे हैं। नदी में छोड़ दिया है। जरा भी तैरना नहीं है। हाथ-पैर भी नहीं हिलाना है। बहे जा रहे हैं। जैसे एक सूखा पत्ता नदी में बहता चला जाता हो, ऐसे ही छोड़ दें। देखें, बहते चले जा रहे हैं, बहते चले जा रहे हैं, बहते चले जा रहे हैं। और बहने के साथ ही साथ एक अनुभव होना शुरू हो जाएगा—समर्पण का, सरेंडर का। नदी के साथ छोड़ दें अपने को, लेट गो का एक अनुभव होना शुरू हो जाएगा। बहें, बहते चले जाएं। नदी तेजी से बही जा रही है, लहरें तेजी से भागी जा रही हैं, आप

भी नदी में छूट गए हैं और बहे जा रहे हैं। कुछ करना नहीं है, बहते चले जाना है। बिलकुल छोड़ दें, और बह जाएं। नदी और तेजी से बही जाती है, और हम बहे जा रहे हैं।

इसको ठीक से अनुभव कर लें—बहने की इस प्रतीति को। बहने के इस अनुभव को ठीक से समझ लें, क्या है। फिर ध्यान में वह सहयोगी होगा। ठीक से समझ लें कि यह बह जाने का अनुभव क्या है—जब हम हाथ-पैर भी नहीं चला रहे और नदी हमें लिए जा रही है, लिए जा रही है, लिए जा रही है। सब कुछ नदी कर रही है, हम कुछ भी नहीं कर रहे हैं। इसे ठीक से देख लें, ताकि यह खयाल में आ जाए। सब कुछ नदी कर रही है, हम कुछ भी नहीं कर रहे हैं, हम सिर्फ बह रहे हैं—एक सूखे पत्ते की तरह।

अब धीरे-धीरे आंख खोल लें और दूसरे प्रयोग को समझें और फिर उसे करें। धीरे-धीरे आंख खोल लें और ठीक से बैठ जाएं।

दूसरा प्रयोग : मिटना

ध्यान है, समर्पण।
ध्यान है, अपने को खो देना।
ध्यान है, मिट जाना।
ध्यान है, सब भांति विसर्जित हो जाना।

हमारा गिरना जरूरी है, हमारा मिटना जरूरी है। हमारा होना बाधा है। जैसे एक वृक्ष को कोई काट दे और वृक्ष गिर जाए, जैसे एक बीज जमीन में पड़ा हो और टूटे और मिट जाए, ठीक ऐसे ही हमें भी भीतर से बिखर जाना और मिट जाना है।

दूसरा प्रयोग इस मिटने की दिशा में समझें। आंख बंद कर लें और अपने को ढीला छोड़ दें।

पहली बात हमने समझी बहने की। अब दूसरी बात मिटने की समझें कि बिलकुल मिट गए हैं। आंख बंद करें। बहुत आहिस्ता से आंख बंद कर लें और शरीर ढीला छोड़ दें। आंख बंद कर ली है, शरीर ढीला छोड़ दिया है। देखें, सामने ही एक चिता जल रही है। लकड़ियां लगी हैं, जोर से आग की लपटें पकड़ गई हैं, चिता जोर से जल रही है। चिता को जलता हुआ देखें। लकड़ियों में आग पकड़ गई है, चिता का जलना शुरू हो गया है। ठीक से देखें चिता को। आग पकड़ गई है, लपटें जोर से ऊपर भाग रही हैं आकाश की तरफ, चिता जल रही है।

दूसरी बात खयाल से देखें कि इस चिता को आप देख नहीं रहे हैं, इस चिता पर आप चढ़े हुए हैं। आप ही इस चिता पर चढ़ा दिए गए हैं। सब मित्र, प्रियजन आपके चारों तरफ खड़े हैं। आग लगा दी गई है, इस चिता पर आप चढ़ा दिए गए हैं। लकड़ी ही नहीं जल रही है, आप भी जल रहे हैं। लकड़ियों में लपटें लगी हैं, आप भी जले जा रहे हैं।

थोड़ी देर में सब राख हो जाएगा—लकड़ियां भी और आप भी। अपने को ही अपनी चिता पर चढ़ा हुआ अनुभव करें। देखें, सामने अपना ही शरीर उस चिता पर चढ़ा है और आग में जला जा रहा है।

एक पांच मिनट इस अनुभव को करें, ताकि मिटने का बोध खयाल में आ सके। एक दिन तो

चिता जलेगी ही कभी, एक दिन आप उस पर चढ़ेंगे ही। सभी को उस पर चढ़ जाना है। तो आज अपने मन के सामने ठीक से देख लें, चिता की जलती हुई लपटें, आकाश की तरफ भागती हुई अग्नि-शिखाएं, और आप चढ़े हैं। लकड़ियां ही नहीं जल रही हैं, आप भी जले जा रहे हैं। देखें, जोर से लपटें बढ़ती चली जाती हैं। आपका शरीर भी जला जा रहा है, सब मिटा जा रहा है, सब समाप्त हुआ जा रहा है। थोड़ी देर में आग भी बुझ जाएगी, राख रह जाएगी। लोग विदा हो जाएंगे, मरघट खाली, सुनसान हो जाएगा।

अब देखें, चिता पर चढ़े हुए हैं आप, मैं चुप हो जाता हूं। लपटें जलती रहेंगी। आपको कुछ करना नहीं है। लपटें जलेंगी, जला देंगी, सब राख हो जाएगा। थोड़ी देर भीड़ खड़ी रहेगी मित्रों की, प्रियजनों की आसपास, फिर वे भी विदा हो जाएंगे। फिर राख ही पड़ी रह जाएगी। मरघट सुनसान हो जाएगा।

देखें, शुरू करें; लपटें साफ देखें, उन पर आप भी चढ़े हैं और जल रहे हैं। कुछ करना नहीं है। जलने में क्या करना है? जल जाना है। आग काम कर देगी, लपटें काम कर देंगी। आपको कुछ भी नहीं करना है, जल जाना है, मिट जाना है। पांच मिनट के लिए आग पर, चिता पर अपने को चढ़ा हुआ देखते रहें। फिर धीरे-धीरे लपटें बुझ जाएंगी, सब शांत हो जाएगा।

यह मिट जाने के अनुभव को ठीक से स्मरण रख लेना, वह ध्यान में काम पड़ सकेगा।

लपटें बढ़ती जा रही हैं, शरीर जलता जा रहा है, आप ही जलते चले जा रहे हैं। लपटें बढ़ती चली जा रही हैं, आप ही मिटते चले जा रहे हैं। सब धुआं हो जाएगा, सब राख हो जाएगी, मरघट शांत हो जाएगा। जरा भी अपने को बचाने की कोशिश मत करना, छोड़ देना लपटों में, ताकि सब जल जाए, सब मिट जाए, सब राख हो जाए।

देखें, लपटें बढ़ती चली जाती हैं, धुआं बढ़ता चला जाता है, सब जला जा रहा है। आप ही जले जा रहे हैं, मिटे जा रहे हैं।

इसे बहुत साफ देख लें, ताकि ध्यान में सहयोगी हो जाए, क्योंकि ध्यान भी एक तरह की मृत्यु है। देखें, साफ देखें—सब जल रहा है, सब मिट रहा है, सब समाप्त हो रहा है। और आपको कुछ भी नहीं करना है, बस जल जाना है, मिट जाना है। आग सब काम कर लेगी। आपको क्या करना है? आग सब काम कर रही है, जलाए दे रही है। लपटें भागी चली जा रही हैं, सब मिटता चला जा रहा है।

नदी में तो तैर भी सकते थे, यहां तो तैर भी नहीं सकते हैं। यहां तो तैरने का उपाय ही नहीं है। सब मिटा जा रहा है, लपटें सब समाप्त किए दे रही हैं! देखें, धुआं रह जाएगा, राख रह जाएगी, मरघट सुनसान हो जाएगा, लोग विदा हो जाएंगे।

हवाएं चल रही हैं, लपटें और जोर से बढ़ी जा रही हैं, हवाएं लपटों को बढ़ाए दे रही हैं। सब जला जा रहा है, सब जला जा रहा है, सब जला जा रहा है, थोड़ी देर में सब राख हो जाएगा। हवाएं लपटें और जोर से कर गईं।

देखें, सब जल गया है। लपटें बुझती जा रही हैं, राख पड़ी रह गई है, लोग विदा होने लगे हैं। मरघट पर सन्नाटा छा गया है। हवाएं फिर भी चलती रहेंगी, राख उड़ती रहेगी, मरघट पर कोई न होगा, लोग विदा होने लगे हैं। सब सन्नाटा हो गया है। आप मिट गए हैं, राख ही पड़ी रह गई है।

इसे ठीक से देख लें। यह ध्यान में देखना अत्यंत जरूरी है। ठीक से देख लें, सब पड़ा हुआ रह गया है। राख ही पड़ी रह गई है, बुझे हुए अंगारे रह गए हैं, लोग जा चुके हैं। अब मरघट पर कोई नहीं है, आग भी बुझ गई, आप भी मिट गए हैं।

अब धीरे-धीरे आंख खोल लें और तीसरे प्रयोग को समझें और फिर उसे करें। धीरे-धीरे आंख खोल लें और ठीक से बैठ जाएं।

तीसरा प्रयोग : तथाता

पहली बात है यह समझ लेना कि बहने का क्या अर्थ है। दूसरी बात है यह समझ लेना कि मिटने का क्या अर्थ है। और अब तीसरी बात समझनी है, तीसरी बात का नाम है—तथाता, सचनेस।

यह तीसरी बात इन दोनों से ज्यादा आगे ले जाने वाली है। और ये तीन सीढ़ियां ठीक से समझ लेनी हैं।

तथाता या सचनेस का मतलब है: चीजें ऐसी हैं। रास्ते पर आवाज आ रही है, क्योंकि रास्ते पर आवाज आएगी ही। पक्षी शोरगुल कर रहे हैं, क्योंकि पक्षी शोरगुल करेंगे ही। समुद्र की लहरें किनारे से टकरा रही हैं, आवाज आ रही है, क्योंकि समुद्र की लहरें और क्या कर सकती हैं। जो हो रहा है, वैसा हो रहा है, वैसा है! वैसा ही हो सकता है, अन्यथा कोई उपाय ही नहीं! तथाता का मतलब है कि कोई विरोध का कारण नहीं है। कुछ अन्य हो जाए इसकी अपेक्षा की जरूरत नहीं है। जैसा है, वैसा है। घास हरा है, आकाश नीला है, समुद्र की लहरें शोर कर रही हैं, पक्षी आवाज मचा रहे हैं, कौवे चिल्ला रहे हैं, सड़क पर लोग जा रहे हैं, कारों की आवाज हो रही है, हार्न बज रहे हैं—ऐसा है। इस होने की स्थिति में हमारा कोई विरोध नहीं है। इस होने की स्थिति से हम राजी हो गए हैं। हम पूरी तरह राजी हैं कि ऐसा है। न हम चाहते हैं कौवे आवाज बंद कर दें, न हम चाहते हैं कि सड़क पर लोग हार्न न बजाएं, न हम चाहते हैं कि समुद्र की लहरें शोरगुल न करें। ऐसा है, जगत ऐसा है!

जगत के संबंध में भी यह बात ध्यान रखनी है कि ऐसा है और हम इसके लिए पूरी तरह राजी हैं। हमारा कोई विरोध नहीं है। और अपने संबंध में भी ध्यान रखना है भीतर कि ऐसा है। पैर में चींटी काट रही है तो दर्द हो रहा है, ऐसा है। चींटी काट रही है और पैर में दर्द हो रहा है। इसमें कुछ विरोध नहीं है, ऐसा हो रहा है। ऊपर से धूप आ रही है और पसीने की बूंदें बह रही हैं। ठीक है, धूप आएगी तो पसीना बहेगा ही। इसमें कुछ विरोध नहीं है, इसमें कुछ करना नहीं है, इसे स्वीकार कर लेना है, ऐसा है!

और जैसे ही हम इसे स्वीकार करते हैं, हमारा विरोध चला जाता है, रेसिस्टेंस चला जाता है, वैसे ही भीतर कुछ शांत होना शुरू हो जाता है, जो सदा से अशांत रहा है। वह अशांत इसीलिए रहा है कि उसने चाहा है कि ऐसा न हो। उसने कभी ऐसा नहीं माना है कि ऐसा है। सूरज पड़ रहा है, किरणें आ रही हैं, तो पसीना बहेगा, धूप लगेगी, ऐसा उसने स्वीकार नहीं किया है। कभी सूरज नहीं होना चाहिए, किरणें गरम नहीं होनी चाहिए, पसीना नहीं बहना चाहिए, ऐसा मन ने चाहा है। जिसे ध्यान में जाना है, उसे ऐसी आकांक्षा बड़ी बाधा बन जाएगी।

कैसा होना चाहिए, नहीं; जैसा है, है! शांत होने का एक ही अर्थ है कि जैसा है, है! और हम उसके लिए पूरी तरह राजी हो गए हैं। यह तीसरा बिंदु है—तथाता!

तो पांच मिनट, चीजें ऐसी हैं, हमें कुछ करना नहीं है। करने का कोई उपाय भी नहीं है। हम नहीं थे, तब भी चीजें ऐसी थीं। समुद्र तब भी इसी तरह शोर करता रहा, कौवे बोलते रहे, पक्षी चिल्लाते रहे,

रास्ता चलता रहा। हम नहीं होंगे, तब भी चीजें ऐसी ही होंगी। तो जब हम हैं, तब भी चीजें ऐसी ही रहें तो अड़चन क्या है? कठिनाई क्या है? हमारे होने न होने से इस सारे होने का क्या संबंध है?

आंख बंद करें, आहिस्ता से आंखें ढीली छोड़ दें, शरीर को आराम में छोड़ दें, शरीर को ढीला, रिलैक्स छोड़ दें। आंख बंद कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें। और अब तीसरे प्रयोग में उतरें—तथाता, चीजें ऐसी हैं!

हमें कुछ करना नहीं, चीजें ऐसी हैं ही। जगत ऐसा है ही। फिर कौन सी अशांति है? फिर कौन सी तकलीफ है? चीजें ऐसी हैं। बच्चा, बच्चा है; बूढ़ा, बूढ़ा है; स्वस्थ, स्वस्थ है; बीमार, बीमार है। पक्षी आवाज कर रहे हैं, घास हरी है, आकाश नीला है, कहीं धूप पड़ रही है, कहीं छाया है—ऐसा है!

अब खयाल करें, चीजें ऐसी हैं, हमारा कोई विरोध नहीं है। अविरोध, नो रेसिस्टेंस। हमारा कोई विरोध नहीं है। हम इन चीजों के बीच में, हम भी हैं। एक पांच मिनट ऐसा खयाल करें—कोई विरोध नहीं, कोई विरोध नहीं, कोई विरोध नहीं। जो है, जैसा है, हम उससे राजी हैं।

न हम कुछ बदलना चाहते हैं, न कुछ हम मिटाना चाहते हैं, न कुछ हम बनाना चाहते हैं। जैसा है, वैसा है, हम उससे राजी हैं।

एक पांच मिनट के लिए इस राजी होने की स्थिति में अपने को छोड़ दें। देखें, यह कौवे की आवाज और तरह की सुनाई पड़ेगी। जब हम राजी हो जाएंगे, तो यह कौवे की आवाज और तरह की सुनाई पड़ेगी। इससे कोई विरोध नहीं है। तो हमारे और इसके बीच की दीवाल टूट जाएगी। सुनें!

सड़क की आवाज और तरह की सुनाई पड़ेगी। अगर हमारा कोई विरोध नहीं है तो सड़क की आवाज और तरह की सुनाई पड़ेगी। सुनें!

समुद्र का शोर अब दुश्मन की तरह मालूम नहीं पड़ता है। एक डिस्टर्बेंस नहीं मालूम पड़ता है। सुनें! हमारा कोई विरोध नहीं है। जो है, जैसा है, है।

पांच मिनट के लिए जो है, उससे राजी होकर डूब जाएं।

देखें, धूप अब वैसी नहीं मालूम पड़ती है। जो है, है। अब कुछ भी वैसा नहीं मालूम पड़ता, हम शत्रु की तरह नहीं हैं, एक मित्र की तरह हैं, जो है उससे राजी हैं।

इस तीसरे सूत्र को भी ठीक से ध्यान में रख लेना—तथाता, सचनेस, चीजें ऐसी हैं। इसे ठीक से समझ लेना कि चीजें ऐसी हैं।

चीजें ऐसी हैं, कोई विरोध नहीं, कोई शत्रुता नहीं; कुछ अन्यथा हो, इसकी आकांक्षा नहीं; चीजें ऐसी हैं। धूप गरम है, छाया सर्द है, समुद्र अपने काम में लगा है, रास्ते पर चलने वाले लोग अपने काम में लगे हैं, जरा भी विरोध न रखें—बस ऐसा हो रहा है, हो रहा है, हो रहा है और हम जान रहे हैं, कुछ बदलना नहीं, कुछ मिटाना नहीं, कुछ परिवर्तन नहीं।

इस तीसरे सूत्र को ठीक से समझ लेना, क्योंकि ध्यान की गहराई में ले जाने के लिए अत्यंत जरूरी है। चीजें ऐसी हैं।

अब धीरे-धीरे आंख खोल लें।

104
अंधकार, अकेले होने, और मिटने का बोध

समाधि उसकी खोज है जो हमें मिला ही हुआ है।

समाधि पुनर्स्मरण है, रिमेंबरिंग है। याद है उसकी, जो हमारा ही है। लेकिन यह खो देना भी जरूरी है।

क्या करें इस समाधि को लाने के लिए? बहुत कुछ नहीं किया जा सकता। इतना ही कर सकते हैं कि अपने को रिसेप्टिव बना लें, ग्राहक बना लें, अपने को खुला छोड़ दें। और अगर आता हो सत्य तो आ जाए, और परमात्मा अगर आता हो तो आ जाए। इतना ही करें।

मैंने सुना है कि एक आदमी, एक रात, एक झोपड़े में बैठ कर, छोटे से दीये को जला कर कोई शास्त्र पढ़ता रहा। फिर आधी रात गए थक गया, फूंक मार कर दीया बुझा दिया। और तब बड़ा हैरान हो गया! जब तक दीया जल रहा था, पूर्णिमा का चांद बाहर ही खड़ा रहा, भीतर न आया। जब दीया बुझ गया, उसकी धीमी सी टिमटिमाती लौ खो गई, तो चांद की किरणें भीतर भर आईं। द्वार-द्वार, खिड़की-खिड़की, रंध्र-रंध्र से चांद भीतर नाचने लगा। वह आदमी बहुत हैरान हो गया! उसने कहा कि एक छोटा सा दीया, इतने बड़े चांद को बाहर रोके रहा!

हम भी बहुत छोटे-छोटे दीये जलाए हैं अपने अहंकार के, मैं के, उनकी वजह से परमात्मा का चांद बाहर ही खड़ा रह जाता है। समाधि का अर्थ है : फूंको और बुझा दो इस दीये को, हो जाने दो अंधेरा। मिटा दो यह ज्योति जिसे समझा है मैं, और तत्काल चारों तरफ से वह आ जाता है, सब तरफ से आ जाता है, जो हमारे इस छोटे से अहंकार ने, मैं ने, रोक रखा है।

इसलिए समाधि के तीन चरण मैंने आपसे कहे—अंधकार, अकेला होना, और मिट जाना। बुझ जाए दीया, प्रकाश परमात्मा का तत्काल मिल जाता है।

पहला चरण है : अंधकार।

अगर कोई पहले चरण को ही पूरा कर ले, तो सब बात हो जाए। अगर कोई पूरे अंधकार में ही डूब जाए पूरी तरह, तो खुद भी मिट जाए, अंधेरा ही रह जाए। पहला चरण भी पूरा हो जाए, तो सब बात हो जाए। लेकिन वह पूरा नहीं हो पाता, इसलिए दूसरा करना पड़ता है। दूसरा भी पूरा हो जाए कि सच में ही मुझे ज्ञात हो जाए कि मैं बिलकुल अकेला हूं, तो वह हमें मिल जाएगा जो सदा से अकेला ही है। लेकिन वह भी नहीं हो पाता, इसलिए तीसरा चरण उठाना पड़ता है—मिट गया हूं। अगर मिट जाऊं पूरा तो अभी मिल जाए वह जिसकी तलाश है। वह खुशी जो मुझे कभी न मिली, क्योंकि मैं ही तो दुख का कारण था। मुझे खुशी मिलेगी भी नहीं। वह रोशनी जो मुझे कभी दिखाई न पड़ी, क्योंकि मैं ही तो टिमटिमाता दीया था, जिसने कि बड़े सूरज को रोक दिया। वह स्वर, वह संगीत जो मुझे कभी सुनाई न पड़ा, अभी सुनाई पड़ जाए। लेकिन मेरे मैं की धुन बहुत मजबूत है, और उसी में हम लीन हैं। वहां हम भीतर मैं और मैं और मैं कहे चले जा रहे हैं।

कबीर ने कहा है कि देखा था एक बकरा जो मैं-मैं-मैं किए जाता था। फिर मर गया वह बकरा। उसकी चमड़ी से किसी ने तानपूरे के तार बना लिए। और मैं उस रास्ते से गुजरता था। और मैंने उस तानपूरे पर ऐसा गीत सुना, जो मैंने कभी न सुना। तो मैंने रोका उस आदमी को और कहा कि कहां से पाए ये तानपूरे? उसने कहा, देखा नहीं, एक बकरा था यहां जो मैं-मैं-मैं किए जाता था। यह वही है। मर गया मैं करने वाला। अब तानपूरे का तार हो गया। अब बड़ा संगीत पैदा हो रहा है।

लेकिन जब तक मैं-मैं पैदा होती थी, तब तक वह संगीत पैदा नहीं होता था। वह मैं-मैं भीतर हम भी कहे जा रहे हैं, तो हम वीणा नहीं बन पाते परमात्मा की कि उसमें वह संगीत पैदा हो जाए। लेकिन हो सकता है।

कबीर खूब हंसने लगे कि यह तो खूब रही! जिंदा बकरा संगीत न गा सका, सिर्फ मैं-मैं करता रहा, और मरा बकरा संगीत पैदा कर रहा है!

कबीर ने लौट कर अपने साथियों से कहा, क्या अच्छा न हो कि हम भी मर जाएं! छोड़ दें मैं-मैं, मर जाएं! अभी मैं देख कर आ रहा हूं चमत्कार! एक जिंदा बकरा कभी गीत न गा सका, मर कर गीत गा रहा है। तो हम भी मर जाएं न!

वही मैं कह रहा हूं कि मिट जाएं! तो फिर रह जाए संगीत। हमारे मिटते ही रह जाता है। मिटने के तीन चरण हम उठाएंगे।

पहला चरण : अंधकार

पहले चरण में पांच मिनट तक परिपूर्ण अंधकार का भाव करेंगे।

ध्यान रखें, कोई किसी को छू न रहा हो। अगर छू रहा हो, तो थोड़ा हट कर बैठ जाएंगे। कोई भी किसी को छूता हुआ नहीं हो।

आंख बंद कर लें, शरीर ढीला छोड़ दें। शरीर ढीला छोड़ दें, आंख बंद कर लें। और देखें, अंधकार ही अंधकार है, चारों ओर अंधकार ही अंधकार है। अनंत अंधकार है...सब ओर, सब दिशाओं में अंधकार ही अंधकार है...भाव करें, देखें, अनुभव करें, अंधकार ही अंधकार है...। सब मिट गया, बस अंधकार ही अंधकार रह गया है। चारों ओर घुप्प अंधकार है। इस अंधकार को पांच मिनट तक अनुभव करते रहें, अंधकार ही अंधकार है...। न कुछ सूझता, न कुछ दिखाई पड़ता, बस अंधकार ही अंधकार है...। और जैसे-जैसे अंधकार गाढ़ा होगा, और जैसे-जैसे अंधकार घना होगा, और जैसे-जैसे अंधकार ही अंधकार रह जाएगा, वैसे-वैसे एक अपूर्व शांति सब तरफ से उतरने लगेगी। रोएं-रोएं में, हृदय की धड़कन-धड़कन में, श्वास-श्वास में शांति उतर आएगी।

देखें, अनुभव करें, अंधकार ही अंधकार है। अंधकार ही अंधकार है...एक पांच मिनट के लिए बस अंधकार को ही देखते रहें, और देखते-देखते ही मन शांत होता जाएगा। अंधकार ही अंधकार है...अंधकार ही अंधकार है...अनंत अंधकार है...सब ओर अंधकार है...अंधकार ही अंधकार है...। और मन शांत होता जा रहा है, मन शांत हो रहा है, मन शांत हो रहा है, मन शांत हो रहा है, मन बिलकुल शांत हो गया, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है...अंधकार ही अंधकार

है...अनंत अंधकार है...चारों ओर अंधकार है...अंधकार के अतिरिक्त तो कुछ भी नहीं। मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है। अंधकार ही अंधकार है...बस केवल अंधकार है...और मन शांत हो गया, मन शांत हो गया, मन शांत हो गया...मन शांत हो गया है, मन बिलकुल शांत हो गया, मन शांत हो गया, मन शांत हो गया, मन शांत हो गया, मन शांत हो गया। अंधकार ही अंधकार है...चारों ओर अंधकार है...अनंत अंधकार है। और मन, और मन बिलकुल शांत हो गया, मन शांत हो गया, मन शांत हो गया, मन शांत हो गया, मन शांत हो गया। इस अंधकार को ठीक से पहचान लें। समाधि का पहला चरण है: परिपूर्ण अंधकार। जहां कुछ देखने को नहीं, जहां कुछ खोजने को नहीं, अंधकार, केवल अंधकार है। और मन शांत हो गया।

अब धीरे-धीरे आंखें खोल लें...जैसी शांति भीतर है, वैसी ही बाहर भी दिखाई पड़ेगी। धीरे-धीरे आंख खोलें...बाहर भी सब शांत है, धीरे-धीरे आंख खोल लें...

फिर दूसरा चरण समझें, और उसके लिए तैयार हों।

दूसरा चरण : अकेला होना

समाधि का दूसरा चरण है: अकेले होने का बोध।

अकेले होने से ज्यादा सुंदर कुछ भी नहीं है। जीवन में जो भी सुंदर है वह अकेले में ही खिलता है, फूलता है, सुगंधित होता है। जीवन में जो भी श्रेष्ठ है वह सब अकेले में पैदा हुआ है। भीड़ ने कुछ भी महान को जन्म नहीं दिया—न कोई गीत, न कोई सौंदर्य, न कोई सत्य, न कोई समाधि। नहीं, भीड़ में कुछ भी पैदा नहीं हुआ है। जो भी जन्मा है, एकांत में, अकेले में जन्मा है।

लेकिन हम अकेले होते ही नहीं। हम सदा भीड़ में घिरे हैं। या तो बाहर की भीड़ से घिरे हैं या भीतर की भीड़ से घिरे हैं। भीड़ से हम छूटते ही नहीं। क्षण भर को अकेले नहीं होते। इसलिए जो भी महत्वपूर्ण है जीवन में, वह चूक जाता है।

समाधि में तो केवल वे ही जा सकते हैं, जो बाहर की ही भीड़ से नहीं, भीतर की भीड़ से भी मुक्त हो जाते हैं, बस अकेले रह जाते हैं। निपट अकेले, टोटली अलोन। कुछ है ही नहीं, बस अकेला हूं, अकेला हूं, अकेला हूं। सत्य भी यही है। अकेले ही जन्मते हैं, अकेले ही मरते हैं, अकेले ही होते हैं, लेकिन भीड़ का भ्रम पैदा कर लेते हैं कि चारों तरफ भीड़ है। उस भीड़ के बीच इस भांति खो जाते हैं कि कभी पता ही नहीं चलता कि मैं कौन हूं।

तो दूसरा चरण है: अकेले हो जाने का भाव। पांच मिनट तक हम अकेले हो जाने का भाव करेंगे।

आंख बंद कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें। आंख बंद कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें। एक मिनट तक अंधकार का भाव करें, चारों ओर अंधकार ही अंधकार है, अनंत अंधकार है, अंधकार, अंधकार, अंधकार। न कुछ दिखाई पड़ता, न कुछ सूझता, बस अंधकार ही अंधकार है। कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता—लेकिन मैं हूं, अंधकार है और मैं हूं, और मैं बिलकुल अकेला हूं। न कोई संगी है, न कोई साथी है। अकेला हूं, बिलकुल अकेला हूं। मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं। श्वास-श्वास में, शरीर के रोएं-रोएं में, मन के कोने-कोने में, बस एक ही भाव बैठ जाने दें: मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं

अकेला हूं। और जैसे-जैसे यह भाव गहरा होगा, वैसे-वैसे अपूर्व शांति जन्मने लगेगी, भीतर सब शांत हो जाएगा।

मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं। न कोई संगी, न कोई साथी, रास्ता सूना है, निर्जन है, अंधकार है और मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं...पांच मिनट के लिए बिलकुल अकेले हो जाएं...मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं...

मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं...मन बिलकुल शांत हो गया है, मन बिलकुल शीतल और शांत हो गया है...मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं...

मन शांत हो गया है, मन बिलकुल शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है। मैं अकेला हूं। डूब जाएं, बिलकुल डूब जाएं, अंधेरा है, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं। कोई नहीं, कोई नहीं, कोई संगी नहीं, साथी नहीं, मैं अकेला हूं। और अकेले होते-होते सब शांत हो जाता है...

मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन बिलकुल शांत हो गया है...मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है। मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं...मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं। और जैसे-जैसे अकेले हो जाएंगे, वैसे-वैसे ही शांत हो जाएंगे। श्वास-श्वास शांत हो गई है, रोआं-रोआं शांत हो गया है, मन शांत हो गया है। मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं। देखें, भीतर देखें, सब कैसा शांत हो गया है, सब कैसा शांत हो गया है। इस अकेले होने को ठीक से पहचान लें, समाधि का दूसरा चरण है। ठीक से पहचान लें, यह अकेला होना क्या है, यह अकेले होने की शांति क्या है। मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं। और मन शांत हो गया, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है।

अब धीरे-धीरे आंख खोलें। जैसी शांति भीतर है, वैसी ही शांति बाहर है। और जो भीतर अकेला होना पहचान ले, वह फिर बाहर की भीड़ में भी अकेला है। देखें, आंख खोलें, बाहर देखें...कितने लोग हैं चारों ओर, लेकिन फिर भी, मैं तो अकेला हूं। धीरे-धीरे आंख खोलें...देखें, कितने लोग हैं चारों ओर, फिर भी मैं तो अकेला हूं।

अब तीसरे प्रयोग को समझ लें, फिर उसे करें।

तीसरा चरण : मिट जाना

तीसरा प्रयोग है : मरने का, मिटने का, ना-कुछ हो जाने का।

समाधि का गहरा से गहरा जो चरण है, वह है मर जाने की प्रतीति—मर गया हूं मैं, समाप्त हो गया हूं मैं। और जैसे ही कोई देख ले अपने को ही मरा हुआ, पड़ा हुआ, वैसे ही उसे उसकी पहचान भी हो जाती है जो देख रहा है। खुद को ही मरा हुआ जो देख रहा है वह मैं नहीं हूं, वह वही है जो है। या ऐसा कहें कि वही मैं हूं जो असली मेरा मैं है—जो देखता है, जो जानता है, जो मरते समय यह भी देखेगा कि मैं मर रहा हूं।

ध्यान की, समाधि की गहरी प्रतीति में ऐसा ही होगा। लगेगाः यह रहा शरीर, मर गया। यह पड़ा है शरीर, यह धड़कन चल रही है—दूर हमसे, मीलों फासले पर। यह श्वास भी चल रही है, लेकिन जैसे कोई और लेता हो, और यह रहा मैं, और देखता हूं, जानता हूं, साक्षी हूं, मैं कुछ और हूं। और जिसे मैंने समझा था कि मैं हूं, वह मैं नहीं हूं।

लेकिन, तीसरा प्रयोग गहरे में उतरे बिना खयाल में नहीं आ सकता है। इसलिए अब हम तीसरा प्रयोग करें। फिर चौथे प्रयोग में तीनों प्रयोगों को इकट्ठा करेंगे।

आंख बंद कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें। आंख बंद कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें। एक मिनट देखेंः अंधकार ही अंधकार है, चारों ओर अंधकार ही अंधकार है...चारों ओर अंधकार ही अंधकार है, अनंत अंधकार है...। फिर एक मिनट जानें—मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं। और अब तीसरा प्रयोग करें, मैं मर रहा हूं। भाव करें, मर रहा हूं। यह शरीर, यह श्वास, यह प्राण, यह धड़कन, यह सब जा रही है, सब जा रही है। मैं मर रहा हूं, मैं मर रहा हूं, मैं मिटता जा रहा हूं, मैं मर रहा हूं, मैं मिट रहा हूं, मैं समाप्त हो रहा हूं। मैं मर गया हूं, मैं हूं ही नहीं। मैं मिट गया हूं, मैं हूं ही नहीं। पांच मिनट के लिए इस न होने में डूब जाएं। मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं। और जैसे-जैसे डूबेंगे, वैसे ही अपूर्व शांति सब तरफ से घेर लेगी। मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं हूं ही नहीं...। मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं। और मन बिलकुल शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है। मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं। मन शांत हो गया है, मन बिलकुल शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है...मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन बिलकुल शांत हो गया है। मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं। मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है। मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं बिलकुल नहीं हूं। मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है, मन शांत हो गया है।

मैं नहीं हूं, वही रह गया जो सदा है। मैं नहीं हूं, वही बच रहा जो सदा है। मैं नहीं हूं, लहर खो गई, सागर ही रह गया है, लहर खो गई, सागर ही रह गया है।

इस भाव को ठीक से पहचान लें, समाधि का तीसरा चरण, इसे ठीक से प्राणों में सम्हाल लें। मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, वही रह गया है, वही रह गया है जो है, जो सदा है, जो सब में है।

फिर धीरे-धीरे आंख खोलें...देखें, सदा देखा है, मैं था, ऐसे...आंख खोलें, ऐसे देखें जैसे मैं नहीं हूं। तब भीतर से वही देखता है, जो बाहर भी दिखाई पड़ रहा है। धीरे-धीरे आंख खोलें...देखें, ऐसे जैसे मैं नहीं हूं, तब वही है भीतर और वही है बाहर; वही है देखने वाला, वही है जो दिखाई पड़ रहा है। धीरे-धीरे आंख खोलें...।

ये तीन चरण हैं। समाधि इन तीनों का इकट्ठा प्रतिफलन, इकट्ठा जोड़ है। एक ही साथ—अंधेरा, अकेला होना और फिर मिट जाना—इन तीनों को इकट्ठा करेंगे। और जब तीनों को इकट्ठा करें, तो परिपूर्ण भाव से करना है। पूरे भाव से छोड़ ही देना है अपने को। कुछ बचाना ही नहीं, छोड़ ही देना, छोड़ देना, सब छोड़ देना, ताकि वही रह जाए जिसे हम छोड़ना भी चाहें तो नहीं छोड़ सकते हैं।

तीनों चरणों का इकट्ठा प्रयोग : समाधि में प्रवेश

आंख बंद कर लें, शरीर को ढीला छोड़ दें और समाधि में प्रवेश करने की तैयारी करें। शरीर को ढीला छोड़ दें, आंख बंद कर लें। शरीर गिरे तो गिर जाए, चिंता न करें; झुके तो झुक जाए, चिंता न करें; ढीला छोड़ दें, आंख बंद कर लें।

पहला चरणः अंधकार ही अंधकार है, बस अंधकार ही अंधकार है, चारों ओर अंधकार ही अंधकार है...छोड़ दें, बिलकुल अंधेरे में छोड़ दें, चारों ओर अंधकार ही अंधकार है, अंधकार ही अंधकार है...शरीर शिथिल होता जाएगा, छोड़ दें...शरीर शिथिल हो रहा है, शरीर शिथिल हो रहा है, सब शिथिल हो जाएगा। बस अंधकार ही अंधकार है...और सब शांत हो गया है। श्वास भी धीमी और शांत हो जाएगी, उसे भी छोड़ दें। श्वास भी शांत होती जा रही है। मैं अकेला हूं, मैं बिलकुल अकेला हूं, कोई संगी नहीं, कोई साथी नहीं, मैं अकेला हूं, मैं अकेला हूं...

और मैं भी खोता जा रहा हूं, जैसे बूंद सागर में गिरे और खो जाए, मैं भी खो रहा हूं, मैं भी मिट रहा हूं, मैं भी मर रहा हूं। सब समाप्त होता जा रहा है। मैं मर रहा हूं, मैं मर रहा हूं, मैं मिट रहा हूं। न यह शरीर हूं मैं, न यह श्वास हूं मैं, न यह मन हूं मैं, यह सब मिट रहा है, यह सब समाप्त हो रहा है, यह सब मर रहा है...

मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं...मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं। छोड़ दें, अपने को बिलकुल छोड़ दें, मिट जाएं। मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं। और भीतर, और भीतर, और गहरे में छोड़ दें अपने को, कहीं कोई पकड़ न रखें, मिट ही जाएं। मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं। सब शांत, सब मौन हो गया है। सब शांत, सब मौन हो गया है। सब शून्य हो गया है।

इसी शून्य में जागता है, इसी शून्य में उठता है आनंद। सब तरफ से घेर लेगा। शांति और आनंद सब तरफ बरसने लगेंगे। मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं मिट गया हूं, मैं समाप्त हो गया हूं। एक अपूर्व शांति, एक अपूर्व आनंद की लहर दौड़ने लगेगी। मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं...वही रह गया जो सदा है... वही रह गया जो मेरे पहले था और मेरे बाद भी होगा...मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं, मैं नहीं हूं...मन शांत हो गया, प्राण शांत हो गए, सब शांत हो गया है। आत्मा की झील पर कोई लहर नहीं, सब शांत हो गया है। आत्मा के सागर पर एक भी लहर नहीं, सब शांत हो गया है। और पहचानें, देखें—भीतर कैसा आनंद! पहचानें—भीतर कौन है यह जो जान रहा, देख रहा? कौन है यह साक्षी, जो स्वयं को ही मरा हुआ देख रहा? कौन है? भीतर, और भीतर, और भीतर देखें—कौन है जो जान रहा? कौन है जो ज्ञाता है? कौन है जो द्रष्टा है? यही है, यही है सत्य। आत्मा आनंद से भर गई है।

अब धीरे-धीरे दो-चार गहरी श्वास लें। प्रत्येक श्वास आनंद से, शांति से भरी हुई लगेगी। धीरे-धीरे दो-चार गहरी श्वास लें, धीरे-धीरे दो-चार गहरी श्वास लें। प्रत्येक श्वास शांति और आनंद से भर गई है। फिर धीरे-धीरे आंख खोलें। जो भीतर है वही बाहर भी है।

इस प्रयोग को रात सोते समय करें, और करते-करते ही सो जाएं। और ऐसा न समझें कि मेरे साथ दो-चार दिन कर लिया तो हो गया, उसे रोज करते रहें रात सोते वक्त। धीरे-धीरे गहरे से गहरा उतर जाएगा, और आप कब दूसरे आदमी हो गए, यह आपको पता भी नहीं चलेगा।

105

स्वेच्छा से मृत्यु में प्रवेश

ध्यान में हमें उस जगह जाना है, जहां मरने का कोई उपाय नहीं रह जाता—भीतर, भीतर और भीतर। और बाहर की वह सारी परिधि छोड़ देनी है, जो मृत्यु में छूट जाती है। मृत्यु में शरीर छूट जाता है, भाव छूट जाते हैं, विचार छूट जाते हैं, मित्रता छूट जाती है, शत्रुता छूट जाती है। सब छूट जाता है। बाहर की दुनिया का सब छूट जाता है। रह जाते हैं सिर्फ अकेले हम, सिर्फ मैं रह जाता हूं, सिर्फ चेतना रह जाती है भीतर।

तो ध्यान में भी हमें सब छोड़ कर मर जाना है। और सिर्फ उतना ही रह जाए—मैं जानता हुआ, द्रष्टा-मात्र रह जाऊं भीतर—तो मृत्यु घटित हो जाएगी।

इस ध्यान-विधि में चार चरण हैं।

पहला चरण : शरीर की शिथिलता

पहला चरण तो है शरीर की शिथिलता, शरीर का रिलैक्सेशन। शरीर को इतना शिथिल छोड़ देना है कि ऐसा लगने लगे कि वह दूर ही पड़ा रह गया है, हमारा उससे कुछ लेना-देना नहीं है। शरीर से सारी ताकत को भीतर खींच लेना है। हमने शरीर में ताकत डाली हुई है। जितनी ताकत हम शरीर में डालते हैं, उतनी पड़ती है; जितनी हम खींच लेते हैं, उतनी खिंच जाती है।

आपने कभी खयाल किया है—किसी से झगड़ा हो जाए, तो आपके शरीर में ज्यादा ताकत कहां से आ जाती है? और आप इतना बड़ा पत्थर उठा कर फेंक सकते हैं क्रोध की हालत में, जितना बड़ा पत्थर आप शांति की हालत में हिला भी न सकते थे! कभी आपने सोचा, यह ताकत कहां से आ गई? शरीर आपका है, यह ताकत कहां से आ गई? यह ताकत आप डाल रहे हैं। जरूरत पड़ गई है, खतरा है, मुसीबत है, दुश्मन सामने खड़ा है। पत्थर को हटाना है, नहीं तो जिंदगी खतरे में पड़ जाएगी! तो आप अपनी सारी ताकत डाल देते हैं शरीर में।

तो मैं आपसे यह कह रहा हूं कि शरीर में हमारी शक्ति हमारी डाली हुई है, लेकिन निकालने का हमें कोई पता नहीं कि हम वापस कैसे निकालें। रात इसीलिए हमें आराम मिल जाता है कि अपने आप शक्ति वापस चली जाती है भीतर और शरीर शिथिल होकर पड़ जाता है। सुबह हम फिर ताजे हो जाते हैं। लेकिन कुछ लोग रात को भी अपनी शक्ति बाहर नहीं निकाल पाते हैं, शरीर में शक्ति रही ही आती है। तब नींद मुश्किल हो जाती है। इनसोमेनिया या नींद का न आना सिर्फ एक ही बात का लक्षण है कि शरीर में डाली गई ताकत पीछे लौटने का रास्ता नहीं जानती है।

तो पहला तो ध्यान के लिए, पहला मृत्यु में प्रवेश का जो चरण है, वह शरीर से सारी शक्ति को

निकाल लेना है। अब यह बड़े मजे की बात है कि सिर्फ भाव करने से शक्ति अंदर वापस लौट जाती है। अगर थोड़ी देर तक कोई मन में यह भाव करता रहे कि मेरी शक्ति अंदर वापस लौट रही है और शरीर शिथिल होता जा रहा है, तो वह पाएगा कि शरीर शिथिल हो गया है, शिथिल हो गया है, शिथिल हो गया है, शिथिल हो गया है। और शरीर उस जगह पहुंच जाएगा कि खुद ही अपना हाथ उठाना चाहे तो नहीं उठा सकेगा, सब शिथिल हो जाएगा। यह हमारा भाव है, जो हम शरीर से वापस खींच सकते हैं।

तो पहली तो बात है, शरीर से सारे प्राण का भीतर वापस पहुंच जाना। तो शरीर खोल की तरह पड़ा रह जाएगा और बराबर ऐसा दिखाई पड़ेगा कि नारियल में फासला पड़ गया—हम अलग हो गए और शरीर की खोल बाहर पड़ी है—वस्त्रों की भांति।

अतः इस प्रथम चरण में पहले बैठ जाएं या लेट जाएं—जैसा आपको सुविधापूर्ण लगे। लेट जाना सरल पड़ेगा। फिर आंखें बंद कर लें। आंखें बंद करने का अर्थ पलकों पर तनाव डालना नहीं है—बस, पलकों को ढीला छोड़ दें और आंखों को स्वतः बंद हो जाने दें। शरीर को भी ढीला छोड़ दें और दो-तीन मिनट तक हृदयपूर्वक भीतर यह भाव करें कि 'शरीर शिथिल हो रहा है, शरीर शिथिल हो रहा है, शरीर शिथिल हो रहा है'...यह भाव करते हुए शरीर को भी हर ओर से ढीला छोड़ते चले जाएं।

दूसरा चरण : श्वास की शिथिलता

फिर दूसरी बात है, श्वास को शिथिल छोड़ना। श्वास और गहरे में हमारे प्राण को पकड़े हुए है। इसीलिए श्वास के टूटते ही आदमी मर जाता है। श्वास और गहरे में हमें शरीर से जोड़े हुए है। श्वास शरीर और आत्मा के बीच सेतु है, वहीं से हम बंधे हैं। इसलिए श्वास को हम प्राण कहते हैं। वह गई कि प्राण गया।

लेकिन बहुत प्रयोग इस संबंध में होते हैं। और अगर कोई व्यक्ति अपनी श्वास को पूरा शिथिल छोड़ दे, पूरा शिथिल छोड़ दे, शांत छोड़ दे, तो धीरे-धीरे, धीरे-धीरे श्वास उस जगह आ जाती है कि भीतर पता ही नहीं चलता कि श्वास चल रही है कि नहीं चल रही है। कई बार शक हो जाता है कि कहीं मैं मर तो नहीं गया। यह श्वास चल नहीं रही, हुआ क्या है! श्वास इतनी शांत हो जाती है कि पता ही नहीं चलता कि चल रही है कि नहीं चल रही है। और अगर एक क्षण के लिए भी श्वास ठहर जाती है...। ठहराना नहीं है; क्योंकि जिसने ठहराया, उसकी श्वास कभी नहीं ठहरेगी। ठहराया, तो श्वास बाहर निकलने की कोशिश करेगी। अगर बाहर रोका, तो भीतर जाने की कोशिश करेगी।

इसलिए मैं कह रहा हूं, अपनी तरफ से कुछ नहीं करना है, सिर्फ शिथिल छोड़ते जाना है, शांत, शांत, शांत। धीरे-धीरे श्वास एक बिंदु पर जाकर ठहर जाती है। और एक क्षण को भी ठहर जाए, तो उसी क्षण में आत्मा और शरीर के बीच अनंत फासला दिखाई पड़ जाता है। उसी मोमेंट में वह फासला दिखाई पड़ जाता है। जैसे बिजली चमक जाए अभी और मुझे आप सबके चेहरे दिखाई पड़ जाएं एक क्षण में। फिर बिजली खो जाए, लेकिन फिर मैंने आपके चेहरे देख लिए। ठीक एक क्षण को जब श्वास बिलकुल मध्य में ठहर जाती है, तो एक क्षण के लिए बिजली कौंध जाती है पूरे व्यक्तित्व में और दिखाई पड़ जाता है कि शरीर अलग, मैं अलग। मृत्यु घटित हो गई।

तीसरा चरण : मन की शिथिलता

तीसरे तल पर मन को शिथिल छोड़ना है। क्योंकि अगर श्वास भी शिथिल हो जाए और मन शिथिल न हो पाए, तो बिजली भी कौंध जाएगी, लेकिन आपको दिखाई नहीं पड़ पाएगा कि क्या हुआ। क्योंकि मन तो अपने विचारों में उलझा रहेगा! अगर यहां बिजली चमक जाए और मैं अपने खयालों में खोया रहूं, तो बिजली चमक जाएगी, तब मुझे पता चलेगा कि अरे! कुछ हो गया। लेकिन तब तक बिजली चमक चुकी है और मैं अपने विचारों में खोया रह गया हूं।

बिजली तो चमक जाएगी श्वास के ठहरते ही, लेकिन उस पर ध्यान तभी जाएगा जब विचार भी बंद हो गए हों। नहीं तो ध्यान नहीं जाएगा और मौका चूक जाएगा। इसलिए तीसरी चीज है विचार को शिथिल छोड़ देना। तो तीसरे चरण में मन को शिथिल छोड़ दें और भाव करें, विचार शांत होते जा रहे हैं...विचार शांत होते जा रहे हैं...विचार शांत होते जा रहे हैं।

चौथा चरण : शांत-मौन द्रष्टा-भाव

ये तीन चरण हम प्रयोग करेंगे और चौथे चरण में हम दस मिनट के लिए चुपचाप बैठे रहेंगे। कोई चाहे तो लेट जा सकता है, कोई चाहे तो बैठा रह सकता है। लेटना ही सरल पड़ेगा।

और अब दस मिनट के लिए भीतर जागते हुए देखते रहें, भीतर जाग कर देखते रहें। जैसे कोई दीये की ज्योति भीतर जल रही हो और आप देख रहे हैं। सिर्फ ज्ञान मात्र रह जाए, देखना मात्र रह जाए। शरीर दूर पड़ा हुआ मालूम पड़ेगा। श्वास शांत हो गई है, वह भी दूर मालूम पड़ेगी। विचार भी अगर कोई आएगा तो बहुत दूर चक्कर लगाता मालूम पड़ेगा; फिर धीरे-धीरे चला जाएगा। देखते रहें, भीतर द्रष्टा हो जाएं। दस मिनट के लिए सिर्फ द्रष्टा होकर रह जाएं।

मन शांत हो गया है...और छोड़ दें, बिलकुल पकड़ छोड़ दें। भीतर देखें, शरीर दूर दिखाई पड़ेगा जैसे लाश पड़ी हो। बाहर सब जैसे मर गया है, भीतर जीवन रह गया है। जीवन की ज्योति भर भीतर रह गई है। उसे देखें, उस शून्य को, उस शांति को, उस ज्योति को देखें। उसे देखते-देखते एक आनंद की धार जैसे भीतर बहने लगी और कण-कण में, रोएं-रोएं में, श्वास-श्वास में आनंद प्रवाहित होने लगा। देखें, जैसे कोई झरना फूट जाए आनंद का। भीतर देखते रहें, द्रष्टा बने रहें।

(ओशो कुछ मिनट मौन रह कर फिर सुझाव देना शुरू करते हैं।)

धीरे-धीरे दो-चार गहरी श्वास लें...धीरे-धीरे दो-चार गहरी श्वास लें। श्वास बिलकुल दूर मालूम पड़ेगी, शरीर दूर मालूम पड़ेगा, और मन और शांत हो जाएगा। धीरे-धीरे दो-चार गहरी श्वास लें। फिर धीरे-धीरे आंख खोलें। जो लोग लेटे हैं या गिर गए हैं, वे थोड़ी गहरी श्वास लेंगे, फिर आंख खोलेंगे, फिर आहिस्ता उठेंगे। बहुत धीरे आहिस्ता उठें।

106

सजग मृत्यु और शरीर से अलग होने की विधि

मनुष्य के संकल्प की बड़ी संभावनाएं हैं। लेकिन हमें कुछ खयाल में नहीं है। यह जो मृत्यु का स्वेच्छा से प्रयोग है, यह संकल्प का गहरे से गहरा प्रयोग है। क्योंकि साधारणतः जीवन के पक्ष में संकल्प करना कठिन नहीं है। हम जीना ही चाहते हैं। मृत्यु के पक्ष में संकल्प करना बहुत कठिन बात है। लेकिन जिन्हें भी सच में ही जीने का पूरा अर्थ जानना हो, उन्हें एक बार मर कर जरूर देखना चाहिए। क्योंकि बिना मर कर देखे वे कभी न जान सकेंगे कि उनके पास कैसा जीवन है, जो नहीं मर सकता। उनके पास कुछ जीवन है जो अमृत की धारा है। इसे जानने के लिए उन्हें मृत्यु के अनुभव से गुजरना जरूरी है। क्योंकि एक बार वे स्वेच्छा से मर कर देख लें, फिर दोबारा उन्हें मरने का भय न रह जाए। फिर मृत्यु है ही नहीं।

तो सिर्फ पूर्ण संकल्प से कि मेरी चेतना सिकुड़ रही है, मैं अपने को चारों तरफ से सिकोड़ लेता हूं। आंख बंद करके मैं अपने को सिकोड़ता हूं कि मेरी चेतना सिकुड़ रही है, उसने पैरों से यात्रा भीतर की तरफ शुरू कर दी, हाथों से भीतर की तरफ शुरू कर दी, मस्तिष्क से भीतर की तरफ शुरू कर दी। उस केंद्र पर ऊर्जा इकट्ठी होने लगी, जहां से फैली थी। वापस सब किरणें लौटने लगीं।

इसका सघन मन से किया गया प्रयोग एक क्षण में अचानक सारे शरीर को मृत कर देता है और एक बिंदु कोई भीतर जीवित बिंदु रह जाता है। सारा शरीर अलग मुर्दे की तरह पड़ा रह जाता है, सिर्फ शरीर के भीतर एक बिंदु जीवित हो जाता है। यह जीवित बिंदु अब भलीभांति देखा जा सकता है कि शरीर से भिन्न है। ऐसे ही जैसे बहुत अंधेरे में बहुत सी किरणें फैली हों और पता न चलता हो कि क्या किरण है और क्या अंधेरा है। लेकिन सारी किरणें सिकुड़ कर एक जगह आ जाएं, तो अंधेरा और किरणों का कंट्रास्ट साफ हो जाए कि अलग हो गया।

जब हमारे भीतर प्राण की ऊर्जा इकट्ठी एक बिंदु पर आकर घनीभूत हो जाती है, कंडेंस्ड इकट्ठी हो जाती है, तो सारा शरीर अलग और वह बिंदु अलग मालूम होने लगता है। अब जरा से संकल्प की जरूरत है कि आप शरीर के बाहर हो सकते हैं। सिर्फ सोचें कि मैं बाहर हूं, और आप बाहर हैं। और अब बाहर से खड़े होकर इस शरीर को पड़ा हुआ देख सकते हैं कि यह मुर्दे की तरह पड़ा हुआ है। छोटा सा एक धागे की तरह कोई चीज इस शरीर से अब भी जोड़े रहेगी। वही द्वार है आने-जाने का। एक सिलवर कॉर्ड, एक स्वर्ण धागा इस शरीर की नाभि से आपको जोड़े रहेगा।

जैसे ही यह बिंदु बाहर आएगा, वैसे ही एक और नया हैरानी का अनुभव होगा कि इस बिंदु ने फिर नये शरीर का रूप ले लिया। यह फिर फैल कर एक नया शरीर बन गया। यह शरीर सूक्ष्म शरीर है। यह शरीर बिलकुल इसकी ही प्रतिलिपि है जैसा यह शरीर है। लेकिन बहुत जिसको कहें धूमिल, फिल्मी, ट्रांसपैरेंट, पारदर्शी। अगर हाथ को हिलाएं, तो उसके आर-पार निकल जाएगा, लेकिन उसका कुछ बिगड़ेगा नहीं।

तो पहला तत्व है इस संकल्प की साधना का कि सारे प्राणों को एक बिंदु पर इकट्ठा कर लेना।

और जब एक बिंदु पर वे इकट्ठे हो जाएं, तो यह ऐसे छलांग लगा कर बाहर निकल जाता है—सिर्फ इच्छा कि बाहर, यानी बाहर। और सिर्फ इच्छा कि वापस भीतर, तो यानी भीतर। इसमें कुछ करने का नहीं है। बस करने का प्रयोग तो सिर्फ ऊर्जा को इकट्ठा करना है। एक दफे इकट्ठी ऊर्जा है, तो आप बाहर-भीतर हो सकते हैं। उसमें कोई कठिनाई नहीं है।

और यह अनुभव एक बार साधक को हो जाए, तो उसकी जीवन-यात्रा तत्काल ही बदल जाती है, रूपांतरित हो जाती है। कल तक फिर जिसे वह जीवन कहता था, अब जीवन न कह सकेगा। और कल तक जिसे मृत्यु कहता था, उसे मृत्यु भी न कह सकेगा। और कल तक जिन चीजों के लिए दौड़ रहा था, अब दौड़ जरा मुश्किल हो जाएगी। और कल तक जिन चीजों के लिए लड़ रहा था, अब लड़ना मुश्किल हो जाएगा। और कल तक जिन चीजों की उपेक्षा की थी, अब उपेक्षा न कर सकेगा। जिंदगी बदलेगी, क्योंकि एक ऐसा अनुभव जिंदगी में आया कि इसके बाद जिंदगी वही नहीं हो सकती जो इसके पहले थी।

इसलिए प्रत्येक ध्यान के साधक को एक न एक दिन 'आउट ऑफ बॉडी एक्सपीरिएंस', यह शरीर के बाहर जाने का अनुभव अनिवार्य चरण है, जो उसके भविष्य के लिए बड़े अदभुत परिणाम ले आने लगता है।

कठिन नहीं है, संकल्प भर चाहिए। संकल्प कठिन है। यह प्रयोग कठिन नहीं है; संकल्प कठिन है। और इसलिए कोई सीधा चाहे कि इस प्रयोग को कर ले, तो जरा मुश्किल पड़ेगी। उसे छोटे-छोटे संकल्प के प्रयोग करने चाहिए। उसे छोटे-छोटे प्रयोग करने चाहिए। जब वह छोटे-छोटे प्रयोगों में सफल होता जाता है, तो उसकी संकल्प की सामर्थ्य बढ़ती चली जाती है।

बहुत छोटे से निर्णय करें और उनको जीने की कोशिश करें। और उस जीने की कोशिश से धीरे-धीरे जब आपको ऐसा भरोसा आने लगे कि अब मैं कोई बड़े संकल्प कर सकता हूं, तो थोड़े बड़े संकल्प करें। और अंतिम संकल्प साधक को करने जैसा है, स्वेच्छा से मरने का। किसी दिन जब आपको लगे कि अब यह मैं कर सकता हूं, करें। जिस दिन आप उस संकल्प को करके शरीर को मुर्दे की तरह देख लेंगे, उस दिन से दुनिया का कोई धर्मशास्त्र आपके लिए कोई नई बात कहने वाला नहीं रह जाएगा। उस दिन से दुनिया का कोई गुरु आपको कोई नई बात न बता सकेगा।

107

मृतवत हो जाना

मृतवत लेट रहो। क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ठहरे रहो। या पुतलियों को घुमाए बिना एकटक घूरते रहो। या कुछ चूसो और चूसना बन जाओ।

'मृतवत लेट रहो।'

प्रयोग करो कि तुम एकाएक मर गए हो। शरीर को छोड़ दो, क्योंकि तुम मर गए हो। बस कल्पना करो कि मैं मृत हूं, मैं शरीर को नहीं हिला सकता हूं, आंख भी नहीं हिला सकता हूं, मैं चीख भी नहीं सकता हूं, मैं रो भी नहीं सकता हूं, मैं कुछ भी नहीं कर सकता हूं, मैं मरा हुआ हूं। और तब देखो कि कैसा लगता है। लेकिन अपने को धोखा मत दो। तुम शरीर को थोड़ा हिला सकते हो। नहीं, हिलाओ नहीं। यदि मच्छर भी आ जाए तो भी शरीर को मृत ही समझो। यह सबसे अधिक उपयोग की गई विधि है।

'मृतवत लेट रहो। क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ठहरे रहो।'

निश्चय ही जब तुम मर रहे हो तो वह कोई सुख का क्षण नहीं होगा। वह आनंदपूर्ण नहीं हो सकता, जब तुम देखते हो कि तुम मर रहे हो। भय पकड़ेगा, मन में क्रोध उठेगा, या विषाद, उदासी, शोक, संताप, कुछ भी पकड़ सकता है। व्यक्ति-व्यक्ति में फर्क होगा।

सूत्र कहता है—'क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ठहरे रहो, स्थिर रहो।'

अगर तुमको क्रोध घेरे तो उसमें ही स्थित रहो; अगर उदासी घेरे तो उसमें भी। भय, चिंता, कुछ भी हो, उसमें ही ठहरे रहो, डटे रहो। तुम मर गए हो, फिर तुम क्या कर सकते हो? इसलिए वैसे के वैसे स्थिर रहो। जो भी मन में हो, उसे वैसा ही रहने दो, क्योंकि शरीर तो मर चुका है।

यह ठहरना बहुत सुंदर है। अगर तुम कुछ मिनटों के लिए भी ठहर गए तो पाओगे कि सब कुछ बदल गया। लेकिन हम हिलने लगते हैं। यदि मन में कोई आवेग उठता है, तो शरीर हिलने लगता है। उदासी आती है, तो भी शरीर हिलता है। इसे आवेग इसीलिए कहते हैं कि वह शरीर में वेग पैदा करता है। मृतवत महसूस करो और आवेगों को शरीर हिलाने की इजाजत मत दो। वे भी वहां रहें और तुम भी ठहरे रहो—स्थिर, मृतवत। कुछ भी हो, पर हलचल नहीं हो, गति नहीं हो। बस, ठहरे रहो।

'या पुतलियों को घुमाए बिना एकटक घूरते रहो।'

यह—या पुतलियों को घुमाए बिना एकटक घूरते रहो—मेहर बाबा की विधि थी। वर्षों वे अपने कमरे की छत को घूरते रहे, निरंतर ताकते रहे। वर्षों वे जमीन पर मृतवत पड़े रहे और पुतलियों को, आंखों को हिलाए बिना छत को एकटक देखते रहे। ऐसा वे लगातार घंटों, बिना कुछ किए घूरते रहते थे, टकटकी लगाकर देखते रहते थे।

आंखों से घूरना अच्छा है, क्योंकि उससे तुम फिर तीसरी आंख में स्थिर हो जाते हो। और एक बार तुम तीसरी आंख में थिर हो गए, तो चाहने पर भी तुम पुतलियों को नहीं घुमा सकते। वे भी थिर हो जाती हैं—अचल।

मेहर बाबा इसी घूरने के जरिए उपलब्ध हो गए। और तुम कहते हो कि इन छोटे-छोटे अभ्यासों से क्या होगा! लेकिन मेहर बाबा लगातार तीन वर्षों तक बिना कुछ किए छत को घूरते रहे थे। तुम सिर्फ तीन मिनट के लिए ऐसी टकटकी लगाओ, और तुमको लगेगा कि तीन वर्ष गुजर गए! तीन मिनट भी बहुत लंबा समय मालूम पड़ेगा। लगेगा कि समय ठहर गया है और घड़ी बंद हो गई है। लेकिन मेहर बाबा घूरते ही रहे, घूरते ही रहे। धीरे-धीरे विचार मिट गए, गति बंद हो गई और मेहर बाबा मात्र चेतना रह गए। वे मात्र घूरना बन गए, टकटकी बन गए। और तब वे आजीवन मौन रह गए। टकटकी के द्वारा वे अपने भीतर इतने शांत हो गए कि उनके लिए फिर शब्द-रचना असंभव हो गई।

'या पुतलियों को घुमाए बिना एकटक घूरते रहो। या कुछ चूसो और चूसना बन जाओ।'

यहां जरा सा रूपांतरण है। कुछ भी काम दे देगा। तुम मर गए, यही काफी है।

'क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ठहरे रहो।'

केवल यह अंश भी एक विधि बन सकता है। तुम क्रोध में हो; लेटे रहो और क्रोध में स्थित रहो, पड़े रहो। इससे हटो नहीं, कुछ करो नहीं। स्थिर पड़े रहो।

कृष्णमूर्ति इसी की चर्चा किए चले जाते हैं। उनकी पूरी विधि इस एक चीज पर निर्भर है: 'क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ठहरे रहो।' यदि तुम क्रुद्ध हो तो क्रुद्ध होओ और क्रुद्ध रहो, उससे हिलो नहीं, हटो नहीं। और अगर तुम वैसे ठहर सको तो क्रोध चला जाता है। और तुम दूसरे आदमी होकर उससे निकलोगे। और एक बार तुम क्रोध को उससे आंदोलित हुए बिना देख लो तो तुम उसके मालिक हो गए।

'या पुतलियों को घुमाए बिना एकटक घूरते रहो। या कुछ चूसो और चूसना बन जाओ।'

यह अंतिम विधि शारीरिक है और प्रयोग में सुगम है। क्योंकि चूसना पहला काम है जो कि कोई बच्चा करता है। चूसना जीवन का पहला कृत्य है। बच्चा जब पैदा होता है, तब वह पहले रोता है। तुमने यह जानने की कोशिश नहीं की होगी कि बच्चा क्यों रोता है। सच में वह रोता नहीं है, वह रोता हुआ मालूम पड़ता है। वह सिर्फ हवा को पी रहा है, चूस रहा है। अगर वह नहीं रोए तो मिनटों के भीतर वह मर जाएगा। क्योंकि रोना हवा लेने का पहला प्रयत्न है। जब वह पेट में था, बच्चा श्वास नहीं लेता था। बिना श्वास लिए वह जीता था। वह वही प्रक्रिया कर रहा था, जो भूमिगत समाधि लेने पर योगीजन करते हैं। वह बिना श्वास लिए प्राण को ग्रहण कर रहा था—मां से शुद्ध प्राण ही ग्रहण कर रहा था।

यह सूत्र कहता है: 'या कुछ चूसो और चूसना बन जाओ।'

किसी भी चीज को चूसो। हवा को ही चूसो, लेकिन तब हवा को भूल जाओ और चूसना ही बन जाओ। इसका अर्थ क्या हुआ? तुम कुछ चूस रहे हो, इसमें तुम चूसने वाले हो, चोषण नहीं। तुम चोषण के पीछे खड़े हो। यह सूत्र कहता है कि पीछे मत खड़े रहो, कृत्य में भी सम्मिलित हो जाओ और चोषण बन जाओ।

किसी भी चीज से तुम प्रयोग कर सकते हो। अगर तुम दौड़ रहे हो तो दौड़ना ही बन जाओ और दौड़ने वाले न रहो। दौड़ना बन जाओ, दौड़ बन जाओ और दौड़ने वाले को भूल जाओ। अनुभव करो कि भीतर कोई दौड़ने वाला नहीं है, मात्र दौड़ने की प्रक्रिया है। वह प्रक्रिया तुम हो—सरिता जैसी प्रक्रिया। भीतर कोई नहीं है, भीतर सब शांत है। और केवल यह प्रक्रिया है।

चूसना, चोषण, अच्छा है। लेकिन तुमको यह कठिन मालूम पड़ेगा, क्योंकि हम इसे बिलकुल भूल गए हैं। यह कहना भी ठीक नहीं है कि बिलकुल भूल गए हैं, क्योंकि हम उसका विकल्प तो निकालते ही रहते हैं। मां के स्तन की जगह सिगरेट ले लेती है और तुम उसे चूसते रहते हो। यह स्तन ही है, मां का स्तन, मां का चुचुक। और जो गर्म धुआं निकलता है वह मां का गर्म दूध है।

इसलिए छुटपन में जिनको मां के स्तन के पास उतना नहीं रहने दिया गया, जितना वे चाहते थे, वे पीछे चल कर धूम्रपान करने लगते हैं। यह विकल्प है। और विकल्प से भी काम चल जाएगा। इसलिए अगर तुम सिगरेट पीते हो तो धूम्रपान ही बन जाओ। सिगरेट को भूल जाओ, पीने वाले को भूल जाओ और धूम्रपान ही बने रहो।

एक विषय है जिसे तुम चूसते हो, एक विषयी है जो चूसता है, और उनके बीच चूसने की, चोषण की प्रक्रिया है।

तुम चोषण बन जाओ, प्रक्रिया बन जाओ। इसे प्रयोग करो। पहले कई चीजों से प्रयोग करना होगा और तब तुम जानोगे कि तुम्हारे लिए क्या चीज सही है।

तुम पानी पी रहे हो। ठंडा पानी भीतर जा रहा है। तुम पीना बन जाओ। पानी न पीओ। पानी को भूल जाओ, अपने को भूल जाओ, अपनी प्यास को भी, और मात्र पीना बन जाओ। प्रक्रिया में ठंडक है, स्पर्श है, प्रवेश है, और पीना है—वही सब बने रहो।

क्यों नहीं? क्या होगा? यदि तुम चोषण बन जाओ तो क्या होगा?

यदि तुम चोषण बन जाओ तो तुम निर्दोष हो जाओगे—ठीक वैसे, जैसे प्रथम दिन जन्मा हुआ शिशु होता है। क्योंकि वह प्रथम प्रक्रिया है। एक तरह से तुम पीछे की ओर यात्रा करोगे। लेकिन उसकी ललक, लालसा भी तो है। आदमी का पूरा अस्तित्व उस स्तन-पान के लिए तड़पता है। उसके लिए वह कई प्रयोग करता है, लेकिन कुछ भी काम नहीं आता। क्योंकि वह बिंदु ही खो गया है। जब तक तुम चूसना नहीं बन जाते, तब तक कुछ भी काम नहीं आएगा। इसलिए इसे प्रयोग में लाओ।

एक आदमी को मैंने यह विधि दी थी। उसने कई विधियां प्रयोग की थीं। तब वह मेरे पास आया। उससे मैंने कहा, 'यदि मैं समूचे संसार में से केवल एक चीज ही तुम्हें चुनने को दूं, तो तुम क्या चुनोगे?' और मैंने तुरंत उसे यह भी कहा कि आंखें बंद करो और इस पर तुम कुछ भी सोचे बिना मुझे बताओ।

वह डरने लगा, झिझकने लगा। तो मैंने कहा, 'न डरो, और न झिझको; मुझे स्पष्ट बताओ।'

उसने कहा, 'यह तो बेहूदा मालूम पड़ता है, लेकिन मेरे सामने एक स्तन उभर रहा है।'

और यह कह कर वह अपराध-भाव अनुभव करने लगा। तो मैंने कहा, 'मत अपराध अनुभव करो। स्तन में गलत क्या है? सर्वाधिक सुंदर चीजों में स्तन एक है, फिर अपराध भाव क्यों?'

लेकिन उस आदमी ने कहा, 'यह चीज तो मेरे लिए ग्रस्तता बन गई है। इसलिए अपनी विधि बताने के पहले आप कृपा कर यह बताएं कि मैं क्यों स्त्रियों के स्तनों में इतना उत्सुक हूं? जब भी मैं किसी स्त्री को देखता हूं, पहले उसका स्तन ही मुझे दिखाई देता है। शेष शरीर उतने महत्व का नहीं रहता।'

और यह बात केवल उसके साथ ही लागू नहीं है। प्रत्येक के साथ, प्रायः प्रत्येक के साथ यह लागू है। और यह बिलकुल स्वाभाविक है, क्योंकि मां का स्तन ही जगत के साथ आदमी का पहला परिचय बनता है। यह बुनियादी है। जगत के साथ पहला संपर्क मां का स्तन बनता है। यही कारण है कि स्तन में इतना आकर्षण है, स्तन इतना सुंदर लगता है, उसमें एक चुंबकीय शक्ति है।

वह चुंबकीय शक्ति तुम्हारे अचेतन से आती है। वह पहली चीज है जिसके साथ तुम संपर्क में आए। और यह संपर्क मधुर था, बहुत मधुर। यह सुंदर लगा। इसी ने भोजन दिया, शक्ति दी, प्रेम दिया, सब कुछ दिया। यह संपर्क कोमल, ग्रहणशील और निमंत्रण जैसा था। और यह मनुष्य के मन में सदा वैसा ही बना रहा है।

इसलिए मैंने उस व्यक्ति से कहा कि अब मैं तुमको विधि दूंगा। और यही विधि थी जो मैंने उसे दी: 'किसी चीज को चूसो और चूसना बन जाओ।' मैंने बताया कि 'आंखें बंद कर लो और अपनी मां का स्तन याद करो या और कोई स्तन जो तुम्हें पसंद हो, कल्पना करो और ऐसे चूसना शुरू करो कि यह असली स्तन है। शुरू करो।'

उसने चूसना शुरू किया। तीन दिन के अंदर वह इतनी तेजी से, पागलपन के साथ चूसने लगा और वह इसके साथ इतना मंत्र-बद्ध सा हो गया कि उसने एक दिन आकर मुझसे कहा, 'यह तो समस्या बन गई

है। सारा दिन मैं चूसना ही चाहता हूं। और यह इतना सुंदर है और इसमें ऐसी गहरी शांति पैदा होती है।' और तीन महीने के अंदर उसका चोषण एक मौन-मुद्रा बन गया। तुम ओंठों से समझ नहीं सकते कि वह कुछ कर रहा है। लेकिन अंदर में चूसना जारी था। सारा समय वह चूसता रहता। यह जप बन गया।

तीन महीने बाद उसने मुझसे कहा, 'कुछ अनूठा मेरे साथ घटित हो रहा है। निरंतर कुछ मीठा द्रव सिर से मेरी जीभ पर बरसता है। और यह इतना मीठा और शक्तिदायक है कि मुझे किसी और भोजन की जरूरत नहीं रही। भूख समाप्त हो गई है और भोजन मात्र औपचारिक हो गया है। परिवार में समस्या न बने, इसलिए मैं कुछ ले लेता हूं। लेकिन कुछ मुझे मिल रहा है जो बहुत मीठा, बहुत जीवनदायी है।'

मैंने उसे यह विधि जारी रखने को कहा।

तीन महीने और। और वह एक दिन नाचता हुआ, पागल सा मेरे पास आया, और बोला, 'चूसना तो चला गया, लेकिन अब मैं दूसरा ही आदमी हूं। अब मैं वही नहीं हूं जो आपके पास आया था। मेरे लिए कोई द्वार खुल गया है। कुछ टूट गया है और कोई आकांक्षा शेष नहीं रही। अब मैं कुछ भी नहीं चाहता—न परमात्मा, न मोक्ष। अब जो है, जैसा है, ठीक है। मैं उसे स्वीकारता हूं और आनंदित हूं।'

इसे प्रयोग में लाओ। किसी चीज को चूसो और चूसना बन जाओ। यह बहुतों के लिए उपयोगी होगा, क्योंकि यह इतना आधारभूत है।

108

जाति-स्मरण के प्रयोग

जाति-स्मरण का अर्थ है, पिछले जन्मों के स्मरण की विधि। पहले जो हमारा होना हुआ है, उसके स्मरण की विधि। ध्यान का ही एक रूप है जाति-स्मरण। ध्यान का ही एक प्रयोग है। स्पेसिफिक, एक खास प्रयोग है ध्यान का। जैसे नदी है, और कोई पूछे कि नहर क्या है? तो हम कहेंगे कि नदी का ही एक विशेष प्रयोग है—सुनियोजित; नदी का ही, पर नियंत्रित, व्यवस्थित। नदी है अव्यवस्थित, अनियंत्रित। नदी भी पहुंचेगी कहीं, लेकिन पहुंचने की कोई मंजिल का पक्का नहीं है। लेकिन नहर सुनिश्चित है कि कहां पहुंचानी है।

तो ध्यान तो बड़ी नदी है, पहुंचेगी सागर तक। पहुंच ही जाएगी। परमात्मा तक पहुंचा ही देगा ध्यान। लेकिन ध्यान के और अवांतर प्रयोग भी हैं। ध्यान की छोटी-छोटी शाखाओं को नियोजित करके नहर की तरह भी बहाया जा सकता है। जाति-स्मरण उनमें एक है। ध्यान की शक्ति को हम अपने पिछले जन्मों की तरफ भी प्रवाहित कर सकते हैं।

स्मृतियां मिटती नहीं, ध्यान रहे। कोई स्मृति कभी नहीं मिटती है, सिर्फ स्मृति दबती है या उभरती है। दबी हुई स्मृति, मिटी हुई मालूम पड़ती है। अगर मैं आपसे पूछूं कि उन्नीस सौ पचास में एक जनवरी को आपने क्या किया? तो ऐसा तो नहीं है कि आपने कुछ भी न किया होगा, लेकिन बता आप कुछ भी न पाएंगे कि एक जनवरी उन्नीस सौ पचास को क्या किया। एकदम खाली हो गया है एक जनवरी उन्नीस सौ पचास का दिन। खाली न रहा होगा जिस दिन बीता होगा, उस दिन भरा हुआ था। लेकिन आज खाली हो गया है।

आज का दिन भी कल इसी तरह खाली हो जाएगा। दस साल बाद आज के दिन का भी कोई पता नहीं चलेगा। पर उसे जानने का भी उपाय है। ध्यान को उसकी तरफ भी ले जाया जा सकता है। और जैसे ही ध्यान का प्रकाश उस पर पड़ेगा, आप हैरान हो जाएंगे, वह उतना ही जीवंत वापस दिखाई पड़ने लगेगा, जितना जीवंत उस दिन भी न रहा होगा। जैसे कि कोई टार्च को लेकर एक अंधेरे कमरे में आए और घुमाए। तो वह बायीं तरफ देखे, तो दायीं तरफ अंधेरा हो जाए, लेकिन दायीं तरफ मिट नहीं जाती है। वह टार्च को घुमाए और दायीं तरफ ले आए, तो दायीं तरफ फिर जीवित हो जाती है, लेकिन बायीं तरफ छिप जाती है।

ध्यान का एक फोकस है। और अगर विशेष दिशा में प्रवाहित करना हो तो टार्च की तरह प्रयोग करना पड़ता है ध्यान का। और अगर परमात्मा की तरफ ले जाना हो, तो दीये की तरह प्रयोग करना पड़ता है ध्यान का। इसको ठीक से समझ लें।

दीये का कोई फोकस नहीं होता; दीया अनफोकस्ड है। दीया सिर्फ जलता है, चारों तरफ रोशनी उसकी फैल जाती है। इसलिए जो भी है वह दीये की रोशनी में प्रकट हो जाता है। लेकिन टार्च, दीये का फोकस के रूप में प्रयोग है। उसे हम एक तरफ—सारी रोशनी को बांध कर एक तरफ बहाते हैं। इसलिए यह हो सकता है कि दीये के कमरे में जलने पर चीजें साफ दिखाई न पड़ें; दिखाई पड़ें, लेकिन साफ दिखाई न पड़ें। साफ दिखाई पड़ने के लिए दीये की रोशनी को हम एक ही जगह बांध कर डालते हैं, वह टार्च बन जाती है। तब फिर एक चीज पूरी तरह साफ दिखाई पड़ती है। लेकिन एक चीज पूरी साफ दिखाई पड़ती है, तो शेष सब चीजें दिखाई पड़नी बंद हो जाती हैं। असल में एक चीज को अगर साफ देखना हो, तो ध्यान को एक ही दिशा में बहाना पड़ेगा, शेष सब तरफ अंधेरा कर लेना पड़ेगा।

तो जिसे सीधे जीवन के सत्य को ही जानना है, वह तो दीये की तरह ध्यान को विकसित करेगा। अन्य कोई प्रयोजन नहीं है उसे। लेकिन अगर कोई विशेष प्रयोग करने हों, जैसे पिछले जन्मों के स्मरण का, तो फिर ध्यान को एक दिशा में प्रवाहित करना होगा। और उस दिशा में प्रवाहित करने के दो-तीन सूत्र आपसे कहता हूं।

पूरे सूत्र नहीं कहता हूं, क्योंकि शायद ही किसी को प्रवाहित करने का खयाल हो। जिनको हो, वे मुझसे अलग से मिल ले सकते हैं। लेकिन दो-तीन सूत्र कहता हूं। समझ में भर बात आ जाए। उतने से आप प्रयोग न कर सकेंगे, लेकिन बात भर समझ सकेंगे। और सबके लिए प्रयोग करना शायद उचित भी नहीं है, इसलिए पूरी बात नहीं कहूंगा। क्योंकि कई बार प्रयोग आपको खतरे में उतार दे सकता है। एक घटना मैं आपको कहूं, उससे खयाल आ जाए।

एक प्रोफेसर महिला मुझसे कोई दो-तीन वर्ष तक ध्यान के संबंध में निकट में रही। उसका अति आग्रह था कि जाति-स्मरण करना है, पिछला जन्म जानना है। तो उसे मैंने जाति-स्मरण के प्रयोग करवाए।

मैंने उससे बहुत कहा भी कि यह प्रयोग अभी न करो तो अच्छा है। क्योंकि ध्यान पूरा विकसित हो जाए, तब तो जाति-स्मरण के प्रयोग से कोई खतरा नहीं होता है। लेकिन पूरा विकसित न हो, तो खतरे हो सकते हैं। क्योंकि एक ही जीवन की स्मृतियों को झेलना भी बहुत बोझिल है। दो-चार जीवन की स्मृतियां एकदम से द्वार तोड़ कर भीतर आ जाएं, तो आदमी पागल भी हो सकता है।

और इसीलिए प्रकृति ने व्यवस्था की है कि आप भूलते चले जाएं। जानने से ज्यादा भूलने की व्यवस्था की है। जितना आप स्मरण करते हैं, उससे ज्यादा विस्मरण करवा दिया जाता है, ताकि आपके चित्त के ऊपर ज्यादा बोझ कभी भी न हो जाए। चित्त की सामर्थ्य बढ़ जाए, तो ज्यादा बोझ झेला जा सकता है। लेकिन सामर्थ्य न बढ़े और बोझ आ जाए, तो कठिनाई शुरू हो जाती है।

पर उनका आग्रह था, वह नहीं मानीं और उन्होंने प्रयोग किए। जिस दिन उनको पहले दिन पिछले जन्म की स्मृति की धारा टूटी, उस दिन रात के कोई दो बजे वह भागी हुई मेरे पास आईं। एकदम हालत उनकी खराब है। बहुत ही मुश्किल और कठिनाई में पड़ गई हैं वह। उन्होंने कहा कि अब किसी तरह इसको बिलकुल बंद हो जाना चाहिए, मैं उस तरफ अब कुछ देखना ही नहीं चाहती।

लेकिन इतना आसान नहीं है कुछ। नहर को बुला लेना और फिर एकदम से बंद कर देना इतना आसान नहीं है। द्वार टूट जाए तो उसे एकदम से बंद करना बहुत मुश्किल है। क्योंकि द्वार खुलता नहीं, टूटता है। वक्त लगा कोई पंद्रह दिन, तभी वह स्मृति की धारा बंद हो सकी।

कठिनाई क्या आ गई? उन देवी को अत्यंत पवित्र, चरित्रवान होने का खयाल था। और पिछले जन्म की स्मृति आई कि वह वेश्या थी। और जब वेश्या होने के सारे चित्र उभरने शुरू हुए, तो उनके प्राण कंप गए। और इस जीवन की सारी नैतिकता और सब डांवाडोल हो गया। और वह स्मृति ऐसी नहीं आती कि कोई और वेश्या थी। ऐसी नहीं है वह स्मृति। यही जो अब चरित्रवान है!

और अक्सर ऐसा होता है कि पिछले जन्म में जो वेश्या हो, इस जन्म में बहुत सती हो जाए। वह पिछले जन्म की प्रतिक्रिया है, पिछले जन्म का दुख-भाव है। वह पिछले जन्म की पीड़ादायक स्मृति है, जो उसे सती बना देती है। इसलिए अक्सर ऐसा हो जाता है कि पिछले जन्म के गुंडे इस जन्म में महात्मा हो जाते हैं; इस जन्म के महात्मा अगले जन्म में गुंडे हो जाते हैं। इसलिए महात्माओं और गुंडों में बड़ा गहरा संबंध है। अक्सर यह प्रतिक्रिया हो जाती है। उसका कारण यह है कि जो हम जान लेते हैं, उससे हम पीड़ित हो जाते हैं, उससे विपरीत चले जाते हैं। चित्त का जो पेंडुलम है, वह बिलकुल विपरीत घूमता रहता है।

तो उन देवी को जब स्मरण आया, तो उन्हें बहुत पीड़ा हुई। पीड़ा यह हुई कि उनका सारा अहंकार गल गया और टूट गया। जो उन्होंने जाना, वह कंपा देने वाला सिद्ध हुआ। अब उसे भुलाना चाहती हैं। मैंने उनको कहा था कि इसे याद करना, करने की तैयारी रखनी चाहिए। अगर तैयारी न हो तो याद नहीं करना चाहिए।

तो इसलिए मैं आपको दो-तीन सूत्र कहता हूं, जिनसे आप जाति-स्मरण का अर्थ पूछा है वह समझ सकें। लेकिन उससे प्रयोग आपसे नहीं हो सकेगा। जिन्हें करना हो, उन्हें अलग से ही सोचना पड़ेगा। पहली तो बात यह है कि अगर जाति-स्मरण में उतरना हो, अतीत जन्म को जानना हो, तो पहली जो जरूरत है चित्त की, वह भविष्य की तरफ से चित्त को मोड़ना पड़ता है।

हमारा चित्त भविष्यगामी है। हमारा चित्त जो है वह फ्यूचर सेंटर्ड है आमतौर से, अतीतगामी नहीं है। अभी जो आने को है, उसकी तरफ हम उत्सुक हैं। इसीलिए तो हम ज्योतिषियों के पास पूछते फिरते हैं

कि कल क्या होने वाला है? भविष्य में क्या होने वाला है? भविष्य के प्रति हम उत्सुक हैं कि क्या होने वाला है।

अब जिस व्यक्ति को अतीत स्मरण करना हो, उसे भविष्य की उत्सुकता बिलकुल छोड़ देनी पड़ती है। क्योंकि चित्त का जो फोकस है, उसकी जो धारा है, अगर भविष्य की तरफ बह रही है उसकी टार्च की धारा, तो अतीत की तरफ नहीं बह सकती है।

तो पहला तो काम यह करना पड़ता है कि भविष्य-उन्मुखता बिलकुल तोड़ देनी पड़ती है। कुछ महीनों के लिए, एक निश्चित समय के लिए, छह महीने के लिए भविष्य को नहीं सोचूंगा, भविष्य का खयाल आ जाएगा, तो उसको नमस्कार कर लूंगा। भविष्य का भाव आएगा, तो मैं उस तरफ नहीं बहूंगा। भविष्य है ही नहीं, ऐसा छह महीने मान कर चलूंगा। अतीत ही है और पीछे की तरफ बहूंगा—पहली बात। और जैसे ही भविष्य टूटता है, चित्त की धारा पीछे की तरफ होनी शुरू हो जाती है।

फिर पीछे की तरफ, पहले तो इसी जन्म में पीछे की तरफ लौटना पड़ेगा। एकदम पिछले जन्म में नहीं लौटा जा सकता। इसी जन्म में पीछे की तरफ लौटना पड़ेगा। तो उसके प्रयोग हैं कि इस जन्म में हम पीछे की तरफ कैसे लौटें। जैसे कि मैंने कहा, एक जनवरी उन्नीस सौ पचास को आपने क्या किया, इसका आपको कोई पता नहीं है। तो इसका प्रयोग है कि इसे जाना जा सकता है।

जैसे मैं ध्यान के लिए कहता हूं, ऐसा ध्यान करें और दस मिनट के बाद जब ध्यान में चित्त चला जाए, शरीर शिथिल हो जाए, श्वास शिथिल हो जाए, मन शांत हो जाए, तब एक ही बात चित्त में रह जाए कि एक जनवरी उन्नीस सौ पचास को क्या हुआ? बस यह एक ही बात चित्त में रह जाए, सारा चित्त इस पर घूमने लगे—एक जनवरी उन्नीस सौ पचास को क्या हुआ? एक जनवरी उन्नीस सौ पचास को क्या हुआ? बस एक ही चित्त के चारों तरफ गूंजता हुआ यह एक ही स्वर रह जाए। तो आप दो-चार दिन में पाएंगे कि अचानक एक दिन जैसे पर्दा उठ गया और एक जनवरी आ गई और सुबह से सांझ तक एक-एक चीज दोहर गई। और आपने इस तरह एक जनवरी देखी, जैसे आपने उस दिन भी न देखी होगी, क्योंकि इतना होश आपने उस दिन भी न रखा होगा।

तो पहले इसी जन्म में पीछे लौट कर प्रयोग करने पड़ेंगे। फिर पांच वर्ष तक प्रयोगों को ले जाना बहुत सरल है। पांच वर्ष की उम्र तक पीछे लौटना बहुत सरल है, बहुत कठिन नहीं है। लेकिन पांच वर्ष के बाद बड़ी बाधा पड़ती है।

इसलिए आमतौर से हमारी स्मृति पांच वर्ष की उम्र के पहले की नहीं होती। पीछे से पीछे की स्मृति करीब पांच वर्ष के करीब की होती है। हां, कुछ लोगों को तीन वर्ष तक हो सकती है, लेकिन तीन वर्ष से पहले तो बहुत ही मुश्किल बात हो जाती है। तो वहां एकदम द्वार अटक जाता है, जैसे सब बंद हो गया है वहां तक। लेकिन जो व्यक्ति इसमें समर्थ हो जाएगा, पांच वर्ष की उम्र तक की किसी भी दिन की स्मृति को पूरा जगाने लगेगा...और वह पूरी जगने लगती है। और फिर उसको इस तरह जांच कर लेनी चाहिए।

जैसे आज का दिन गुजर रहा है, तो आज के दिन की कुछ बातें नोट करके ताले में बंद कर दें। दो साल बाद आज के दिन को याद करें। वह सब खो जाएगा आज का दिन। और तब स्मरण करें, और स्मरण करके फिर ताला तोड़ें, और फिर मेल करें कि वह बात मेल खा गई कि नहीं। और आप हैरान होंगे—आप हैरान होंगे कि जितनी आपने लिखी थीं, उससे बहुत ज्यादा बातें और भी याद आई हैं जो कि आप उस दिन भी नोट नहीं कर पाए थे। वे तो सब बातें याद आ ही जाएंगी।

इसको बुद्ध ने नाम दिया है, आलय-विज्ञान। मनुष्य के मन का एक कोना है, जिसको उन्होंने आलय-विज्ञान कहा है। आलय-विज्ञान का मतलब होता है, स्टोर हाउस ऑफ कांशसनेस। जैसे घर में एक कबाड़खाना होता है, जहां हम सब बेकार हो गई चीजों को डालते चले जाते हैं। ऐसा चित्त की स्मृतियों को संग्रह करने वाला एक स्टोर हाउस है, जहां सब चीजें संगृहीत होती चली जाती हैं, जन्मों-जन्मों की। वे कभी वहां से हटती नहीं हैं, क्योंकि कब जरूरत पड़ जाए उनकी, इसलिए वे वहां संगृहीत होती हैं। शरीर बदल जाता है, लेकिन वह स्टोर हाउस हमारे साथ चलता है। वह कब जरूरत पड़ जाएगी, उसके लिए कुछ कहा नहीं जा सकता है। और जिंदगी में जो-जो हमने किया है, जो-जो हमने जीया है, जो-जो भोगा है, जो-जो जाना है, जो-जो जीया है, वह सब वहां संगृहीत है।

तो फिर जिस व्यक्ति को यह पांच वर्ष तक स्मरण आने लगे, वह पांच वर्ष के पीछे उतर सकता है। कठिनाई नहीं है बहुत। प्रयोग यही रहेगा पांच वर्ष के पीछे उतरने का। पांच वर्ष के पीछे फिर एक दरवाजा है, जो वहां तक ले जाएगा जहां तक जन्म हुआ, पृथ्वी पर आना हुआ। फिर एक कठिनाई मालूम होती है, क्योंकि मां के पेट की स्मृतियां भी हैं, वे भी मिटती नहीं हैं। उसमें भी प्रवेश किया जा सकता है। और तब उस क्षण तक पहुंचा जा सकता है, जिस क्षण कंसेप्शन होता है और जिस क्षण मां और पिता के अणु मिलते हैं और आत्मा प्रवेश करती है। और वहां तक पहुंच जाने के बाद ही पिछले जन्म में उतरा जा सकता है; सीधा नहीं उतरा जा सकता। इतनी यात्रा पीछे करनी पड़े, तब पिछले जन्म में भी सरका जा सकता है।

पिछले जन्म में सरकने पर पहला स्मरण जो आएगा, वह अंतिम घटना का आएगा। ध्यान रहे, जैसे कि हम किसी फिल्म को उलटा चलाएं, तो समझ में नहीं आएगी एकदम से। अगर किसी फिल्म की रील को उलटा चलाएं तो समझ में नहीं आएगी। या कोई आदमी किसी उपन्यास को उलटा पढ़े, तो समझ में बिलकुल नहीं आएगा, बहुत मुश्किल में पड़ जाएगा। इसलिए पहली दफा पीछे की तरफ लौटने में कुछ भी समझ में नहीं आएगा, क्योंकि यह बिलकुल उलटा है। घटना के घटने का जो क्रम था, इससे यह बिलकुल उलटा क्रम है। अगर आप पीछे लौटेंगे, तो जन्म पहले आएगा इस जन्म का, और मृत्यु बाद में आएगी पिछले जन्म की। मृत्यु पहले आएगी, बुढ़ापा पहले आएगा, फिर जवानी आएगी, फिर बचपन आएगा, फिर जन्म आएगा। तो उलटा क्रम होगा और उलटे क्रम में पहचानना बहुत मुश्किल होगा।

इसलिए पहली दफा स्मरण आ जाने पर बड़ी बेचैनी और तकलीफ शुरू होती है, क्योंकि पहचानना मुश्किल होता है कि यह क्या हो रहा है। पिछले जन्म की स्मृति का जो सबसे बड़ा कठिन श्रम है, वह है उलटे में देखना पड़ेगा उसको जो सीधे में घटा था। इसलिए पिछले जन्म की स्मृति को आ जाने पर भी व्यवस्थित करने में बहुत समय लग जाता है—साफ-साफ व्यवस्थित करने में कि कैसी घटना घटी होगी, उसका क्या तारतम्य रहा होगा।

और अगर हम उलटा देख सकें, तो हम बहुत हैरान होंगे। क्योंकि तलाक अगर पहले घट जाए, फिर प्रेम हो, फिर विवाह हो, तो हमको चीजें पहली दफा दिखाई पड़ेंगी कि यह तो बहुत हैरानी की बात है। तब हमें दिखाई पड़ेगा कि तलाक घटना तो बहुत अनिवार्य था। जिस तरह का प्रेम हुआ था, उसमें तलाक होने ही वाला था। और जिस तरह का विवाह हुआ था, उसकी तलाक ही परिणति थी। लेकिन जब हमने विवाह किया था, तब हमने सोचा भी न था कि इसमें तलाक घट सकता है। लेकिन तलाक उसी विवाह का फल था।

और जब हम इस बात को पूरी तरह देख लेंगे, तो आज प्रेम करना बहुत और हो जाएगी बात,

क्योंकि उसमें तलाक हमें पहले से दिखाई पड़ सकता है। उसमें मित्रता करने के पहले शत्रुता का आगमन दिखाई पड़ सकता है।

जो मैं कह रहा हूं कि पिछले जन्म की स्मृति इस जन्म को अस्तव्यस्त कर देगी एकदम से, क्योंकि आप फिर उसी तरह से नहीं जी सकेंगे जैसा आप पिछले जन्म में जीए थे। उस बार ऐसा लगा था—और अभी भी ऐसा लग रहा है—अभी भी ऐसा लग रहा है कि धन इकट्ठा करते जा रहे हैं, धन इकट्ठा करते जा रहे हैं, धन इकट्ठा करते जा रहे हैं, तो बड़ी सफलता मिल जाएगी, बड़ा आनंद मिल जाएगा। उसमें उलटा दिखाई पड़ेगा। उसमें दिखाई पड़ेगा : दुख मिला और फिर धन इकट्ठा कर रहे हैं, और धन इकट्ठा कर रहे हैं। दुख मिलना पहले दिखाई पड़ जाएगा और धन इकट्ठा करना पीछे दिखाई पड़ेगा।

और तब यह साफ दिखाई पड़ जाएगा कि वह धन इकट्ठा करना सुख में ले जाने का आधार नहीं था, वह ले गया दुख में। मित्र बनाना शत्रु बनाने में ले गया। जिसे हम प्रेम करना कहते थे, वह घृणा में ले गया। जिसे हम मेल कहते थे, वह विरह में ले गया। तब चीजें अपने पूरे अर्थ में प्रकट होंगी और वह अर्थ हमारे इस जीवन के जीने को एकदम बदल देगा। एकदम बदल देगा, क्योंकि तब बड़ी अन्यथा बात हो जाएगी।

यह स्मरण संभव है, आवश्यक नहीं। संभव है, अनिवार्य नहीं। और कभी-कभी तो ध्यान करते-करते आकस्मिक रूप से भी टूट पड़ता है, कोई प्रयोग बिना किए भी। और अगर ध्यान करते-करते आकस्मिक रूप से प्रकट भी हो जाए, तो भी उसमें बहुत रस मत लेना, देख लेना और साक्षी-भाव ही रखना। क्योंकि साधारणतः चित्त की इतनी सामर्थ्य नहीं होती कि इतने उपद्रव को, इतने अनंत उपद्रव को एक साथ झेल सके। उस झेलने में विक्षिप्त हो जाने की पूरी संभावना है।

लेकिन इस धारा को तोड़ने की दिशा में जाना बहुत आवश्यक नहीं है। किन्हीं को उसमें रस, उत्सुकता हो, वे प्रयोग कर सकते हैं। लेकिन उन प्रयोगों के पहले ध्यान में काफी गहरे प्रयोग जरूरी हैं, ताकि मन इतना शांत और शक्तिशाली हो जाए कि कोई भी चीज टूट पड़े, तो आप उसको साक्षी-भाव से देख सकें।

और अगर कोई व्यक्ति साक्षी-भाव में विकसित हो जाता है, तब पुराने जन्म देखे गए सपनों से ज्यादा नहीं मालूम पड़ते। तब उनसे कोई पीड़ा नहीं होती। तब ऐसा लगता है, जैसे ये सपने हमने देखे थे। सपनों से ज्यादा उनका अर्थ नहीं रह जाता फिर। और जब हमें पुराने दो-चार जन्म याद आ जाते हैं और सपनों की तरह मालूम पड़ते हैं, तो यह जन्म भी तत्काल सपनों की तरह मालूम पड़ने लगता है।

वह जिन लोगों ने इस जगत को माया कहा है, उसके माया कहने का और कोई बुनियादी कारण नहीं है, फिलासफिक कुछ भी बात नहीं है। उसका बुनियादी कारण जाति-स्मरण ही है। जिन्होंने भी पीछे स्मरण किए, यह सब मामला माया हो गया। एकदम इल्यूजन, सपना हो गया। क्योंकि कहां हैं वे मित्र, जो पिछले जन्म में थे? कहां है वह मकान? कहां है वह पत्नी? कहां हैं वे बेटे? कहां है वह दुनिया जो पिछले जन्म में थी? कहां गया वह सब जिसको हमने इतना सत्य मान रखा था कि वह है? कहां गईं वे चिंताएं जिनके लिए हम रात भर नहीं सोए थे? कहां गए वे दुख, वे पीड़ाएं जिनको हमने पहाड़ समझ रखा था और ढोया था? कहां गए वे सुख जिनके लिए हमने आकांक्षा की थी? कहां गया वह सब जिसके लिए हम दुखी, पीड़ित, परेशान हुए थे?

अगर पिछला जन्म याद आए और सत्तर वर्ष आप जीए हों, तो उन सत्तर वर्षों में देखा गया एक

सपना मालूम पड़ेगा या सत्य? एक सपना मालूम पड़ेगा, जो आया और गया। अगर एक बार याद आ जाए पिछले जन्मों का स्मरण, तो आप बड़ी मुश्किल में पड़ जाएंगे कि जो अभी देख रहे हैं, वह सच है? क्योंकि ऐसा तो बहुत बार देखा है, और सब बेसच हो गया। सब मिट गया है, सब खो गया है।

तो एक सवाल उठ जाएगा कि जो हम देख रहे हैं, वह भी उतना ही सच है जितना वह था। वह भी एक सपने की तरह दोहर जाएगा और मिट जाएगा। और जैसे सब सपने अंत पर पहुंच गए, ऐसे ही यह सपना भी अंत पर पहुंच जाएगा। यह अगर बोध हो जाए, तो माया का अनुभव होगा कि चीजें बड़ी असत्य हैं। लेकिन इसके साथ ही दूसरा बोध यह होगा कि चीजें बड़ी असत्य हैं, घटनाएं बड़ी असत्य हैं, आती हैं और खो जाती हैं, लेकिन एक चीज बिलकुल नहीं खोती—मैं। मैं बिलकुल नहीं खोता हूं। तो एक ही साथ दो अनुभव होते हैं—एक अनुभव कि जगत माया है और द्रष्टा सत्य है; दृश्य असत्य है और द्रष्टा सत्य है; ये एक ही साथ दो अनुभव होते हैं। दृश्य तो रोज बदल जाते हैं, हर बार बदल गए हैं, लेकिन द्रष्टा, वह देखने वाला, निरंतर वही, वही, वही। वह बना ही रहा है...वह बना ही रहा है...। और ध्यान रहे, जब तक दृश्य सत्य मालूम होते हैं, तब तक द्रष्टा पर ध्यान नहीं जाता। जब दृश्य एकदम असत्य हो जाते हैं, तब द्रष्टा पर ध्यान जाता है।

तो इसलिए मैं कहता हूं कि जाति-स्मरण का प्रयोग उपयोगी तो है, लेकिन उपयोगी उनके ही लिए है जो थोड़ा ध्यान में गहरे उतरें। ध्यान में गहरे उतरें, तो फिर जीवन को सपने की तरह देखने की क्षमता आ जाए।

109
अंतर्प्रकाश साधना

किसी ने भी कभी प्रकाश को नहीं देखा—किसी ने भी नहीं! और कोई भी कभी प्रकाश को नहीं देख सकेगा। लेकिन हम ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हैं, 'मैं प्रकाश देखता हूं', और उससे हमारा मतलब होता है कि 'मैं वस्तुओं को देखता हूं जो कि प्रकाश के बिना नहीं देखी जा सकतीं।' जब आप कहते हैं कि अंधेरा है, वहां प्रकाश नहीं है, तो आपका क्या अर्थ होता है? आपका इतना ही मतलब होता है, 'अब मैं वस्तुओं को नहीं देख सकता।' जब आप चीजों को नहीं देख सकते, तो आप अनुमान लगाते हैं कि प्रकाश नहीं है। जब आप चीजों को देख सकते हैं, तो आप अनुमान लगाते हैं कि प्रकाश है। इसलिए बाह्य जगत में, बाहर भी प्रकाश एक अनुमान ही है। इसलिए जब किसी को प्रवेश करना हो, जब कोई भीतर प्रवेश करने के लिए तैयार हो, तब हमारा प्रकाश से क्या मतलब होता है?

अगर आप अपने को अनुभव कर सकते हैं, अगर आप अपने को देख सकते हैं, तो इसका अर्थ हुआ कि वहां प्रकाश है। यह हैरानी की बात है, लेकिन हम इस पर कभी नहीं सोचते। पूरा कमरा

अंधकारपूर्ण है; आप यह नहीं कह सकते कि वहां कुछ भी है, पर एक बात आप कह सकते हैं: 'मैं हूं।' क्यों? आप अपने को भी नहीं देख सकते। कमरा बिलकुल अंधेरा है, कुछ भी नहीं देखा जा सकता, लेकिन एक चीज के बारे में आपको पूरा विश्वास है और वह है आपका स्वयं का होना। किसी प्रमाण की कोई आवश्यकता नहीं है, किसी प्रकाश की कोई आवश्यकता नहीं है। आप जानते हैं कि आप हैं, आप अनुभव करते हैं कि आप हैं। एक सूक्ष्म, अंतर्प्रकाश वहां अवश्य होगा। हम उसके प्रति सजग न भी हों, हम उसके प्रति बेहोश या थोड़े सजग भी हो सकते हैं, लेकिन यह वहां है।

इसलिए अपनी दृष्टि को भीतर की ओर मोड़ लें। अपनी सभी इंद्रियों को बंद कर लें ताकि बाहरी प्रकाश का कोई अनुभव न हो। अंधेरे में चले जाएं, अपनी आंखें बंद कर लें, और अब प्रवेश करने की, भीतर देखने की कोशिश करें। पहले आप मात्र अंधकार महसूस कर सकते हैं; वह इसलिए है, क्योंकि आप उसके अभ्यस्त नहीं हैं। प्रवेश करते जाएं। भीतर जो अंधेरा है, उसमें मात्र देखने की कोशिश करें। उसके भीतर प्रवेश कर जाएं, और धीरे-धीरे आप बहुत सी चीजें महसूस करने लगेंगे। एक अंतर्प्रकाश कार्य करने लगता है। वह शुरू में धुंधला हो सकता है। आप अपने विचारों को देखने लगेंगे, क्योंकि विचार भीतरी वस्तुएं हैं। वे वस्तुएं हैं! आप अपने मन के फर्नीचर से टकराने लगेंगे।

वहां बहुत सा फर्नीचर भरा पड़ा है—बहुत सी स्मृतियां, बहुत सी इच्छाएं, बहुत सी अतृप्त वासनाएं, बहुत सी निराशाएं, बहुत से विचार, बहुत से बीज-विचार, बहुत सी चीजें वहां भरी पड़ी हैं। जब आप उन्हें अनुभव करने लगें, तो पहले अंधकार के भीतर प्रवेश करने की कोशिश करें। तब वहां एक धीमा प्रकाश होने लगेगा, और आप बहुत सी चीजों के प्रति सजग होने लगेंगे। यह ऐसे ही है जब आप एक अंधेरे कमरे में अचानक प्रवेश करते हैं—आप कुछ भी नहीं देख सकते। परंतु वहां ठहरे रहें। उस अंधकार के साथ तालमेल बिठा लें, अपनी आंखों को उस अंधकार के साथ समायोजित हो जाने दें। आंखों को एडजस्ट होना पड़ता है, उन्हें समय लगता है। जब आप बाहर से आते हैं, धूपभरे बगीचे से अपने कमरे में, तो आपकी आंखों को फिर से एडजस्ट होना पड़ता है। आपकी आंखें थोड़ा समय लेंगी, लेकिन वह हो जाता है।

अगर कोई लगातार अपनी आंखों का उपयोग सिर्फ बहुत पास की चीजों को देखने में ही कर रहा हो, उदाहरण के लिए, अगर कोई लगातार पढ़ता ही रहता हो, तो वह शार्ट साइटिड हो जाएगा। वह अल्प दृष्टि वाला हो जाएगा, क्योंकि इतना निकट दृष्टि का उपयोग आंखों के मेकेनिज्म को स्थिर कर देगा। तो जब वह एक दूर का तारा देखना चाहता है, तो वह उसे नहीं देख सकता, क्योंकि आंख की यंत्र-रचना स्थिर हो गई है। अब वह लचीली नहीं है। यही बात भीतर होती है, क्योंकि हम लगातार जन्मों-जन्मों से बाहर ही देखते रहे हैं, इससे हमारी यांत्रिक व्यवस्था फिक्स हो गई है और हम भीतर नहीं देख सकते।

लेकिन कोशिश करें, एक प्रयास करें—अंधकार में देखने का। जल्दबाजी न करें, क्योंकि यह यंत्र-रचना कई जन्मों से जड़ हो गई है। आंखें बिलकुल भूल ही गई हैं कि भीतर कैसे देखा जाता है। आपने उस प्रयोजन के लिए उनका कभी उपयोग नहीं किया है। इसलिए अंधकार में देखें, अंधकार को देखें, और धैर्य न खोएं। अंधेरे में प्रवेश कर जाएं, प्रवेश करते ही जाएं, और तीन महीने में आप बहुत सी चीजों को भीतर देखने में समर्थ हो जाएंगे, जिन्हें आपने कभी भी नहीं सोचा था कि वे वहां हैं। और अब पहली बार, आप जानेंगे कि विचार भी मात्र वस्तुएं हैं। और जब आप सजग होंगे, तो फिर आप किसी भी विचार को कहीं भी रख सकेंगे। अगर आप उसे बाहर फेंकना चाहें, तो आप उसे बाहर फेंक सकते हैं।

लेकिन अभी आप उसे नहीं फेंक सकते। अभी आप किसी विचार को बाहर नहीं फेंक सकते, क्योंकि आप उसे पकड़ नहीं सकते। आप इतना भी नहीं जानते कि वह कोई वस्तु है, जिसे कि पकड़ा जा सकता है और बाहर फेंका जा सकता है। आप जानते ही नहीं कि विचार कहां स्थित हैं; आप यह भी नहीं जानते कि वे कहां से आते हैं। हर कोई कहता है, 'मैं भयभीत नहीं होना चाहता हूं; मैं क्रोधित नहीं होना चाहता हूं।' परंतु वे कुछ भी नहीं कर सकते, क्योंकि वे इतना भी नहीं जानते कि यह क्रोध कहां से आता है, कहां इसकी जड़ है, इस क्रोध का कुंड, रिजर्वायर कहां है, यह क्रोध कहां संचित होता है। आप इसकी जड़ों को नहीं जानते।

प्रत्येक विचार एक वस्तु है। उसका अपना एक संचित भंडार है। इसलिए जब एक विचार आता है, तो वह एक बड़े वृक्ष के एक पत्ते की भांति है। आप उसे काट कर फेंक नहीं सकते—दूसरा पत्ता निकल आएगा। जड़ें अभी मौजूद हैं, वहां वृक्ष भी है। जब आप सजग होने लगें, चाहे बहुत हलके से ही कि वहां विचार हैं, वहां इच्छाएं हैं—क्रोध, वासना, आवेश—सब कुछ वहां है, तो लड़ना शुरू न करें। मात्र देखें, क्योंकि देखते रहने भर से आप और भी सजग हो जाएंगे, और लड़ने से आप कभी सजग नहीं हो सकेंगे। इसलिए लड़ें नहीं—देखें! 'देखना' ही वह शब्द है, मंत्र है। लगातार देखें, और जितना अधिक आप देखेंगे, उतना ही अधिक आपको वहां प्रकाश का अनुभव होगा। प्रकाश वहां है; सिर्फ आपकी आंखें समायोजित करनी हैं। इसलिए देखें!

देखते रहने से आंखें समायोजित हो जाएंगी। और जब वहां ज्यादा प्रकाश होगा और हर चीज स्पष्ट हो जाएगी, जब कोई अंधेरी जगह न बचेगी, तब आप अपने मन के मालिक हो जाते हैं। तब आप किसी भी चीज को बाहर फेंक सकते हैं; आप हर चीज को पुनः व्यवस्थित कर सकते हैं। और एक बार आप अपने मन के मालिक हो जाएं, तब आपको बोध हो जाएगा कि यह प्रकाश कहां से आ रहा है, क्या उसका स्रोत है। सूर्य वहां नहीं है, वह तो बाहर है। आप एक मोमबत्ती भी भीतर नहीं लाए, लेकिन सब कुछ आलोकित हो गया है। यह प्रकाश कहां से आ रहा है?

पहले आप उन वस्तुओं के प्रति सजग होंगे जो आलोकित हैं, उसके बाद आप अपने मन की चीजों के मालिक होंगे और फिर आप सजग होने लगेंगे कि यह प्रकाश कहां से आ रहा है, उसका क्या स्रोत है। आप एक फूल के खिलने के प्रति सजग होने लगेंगे। तब आपको बोध होने लगेगा कि यह प्रकाश कहां से आ रहा है। तब आप सूर्य को जान सकते हैं।

केवल परोक्ष रूप से ही आपको प्रकाशित चीज से प्रकाश के स्रोत की ओर जाना होगा। फिर भी प्रकाश नहीं दिखाई पड़ेगा; फिर आप सूर्य को देखेंगे। तो पहले आप मन के अंतर्विषय को महसूस करने लगेंगे। फिर, ज्यादा से ज्यादा, मन स्पष्ट होने लगेगा। तब आपको बोध होगा कि यह प्रकाश कहां से आ रहा है। मन के ठीक मध्य में ही वह स्रोत है। फिर उस स्रोत में प्रवेश कर जाएं! अब आप मन को भूल सकते हैं—आप मालिक हैं। आप मन को कह सकते हैं, 'ठहरो!' और मन ठहर जाएगा।

इस स्वामित्व के लिए सजगता की आवश्यकता है। उलटा कभी न करें; पहले मालिक बनने की और फिर सजग होने की कोशिश कभी न करें। वह कभी नहीं होता; वह हो ही नहीं सकता। वह संभव नहीं है। केवल सजग हों, और स्वामित्व की घटना घट जाती है। आप मालिक हो जाते हैं। तब स्रोत की ओर जाएं, तब स्रोत में प्रवेश करें, जहां से प्रकाश आ रहा है। जाएं! प्रकाश में प्रवेश करें! उस आलोक में प्रवेश करना ही 'स्नान' है। आप मन के मालिक हो गए हैं, अब आप जीवन के भी मालिक हो जाएंगे;

अब आप चेतना के भी मालिक हो जाएंगे। और एक बार इस प्रकाश में स्नान कर लेने पर, इस प्रकाश के स्रोत में, आप स्वयं को अपनी शाश्वतता में देख सकेंगे। इस क्षण में, सारा अतीत और सारा भविष्य वहां होगा। यह क्षण शाश्वत है। आप इतने शुद्ध हैं कि समस्त समय आप में इकट्ठा हो जाता है। शुद्धित अतीत एक शुद्धित भविष्य का सृजन कर देता है—और यह क्षण शाश्वत हो जाता है।

देखें, सजग रहें, गहराई से मन के अंतर्विषयों को देखें। तब आप स्रोत के प्रति सजग होंगे; तब स्रोत में प्रवेश करें। यह डरावना है, क्योंकि जो कुछ भी आपने अपना समझ रखा है, मर जाएगा। यह स्नान एक मृत्यु है—उस सभी की मृत्यु जो आपने अपने बारे में समझ रखा है। तादात्म्य, अहंकार, व्यक्तित्व, सब कुछ मर जाएगा; क्योंकि व्यक्तित्व, तादात्म्य, अहंकार, वे धूल हैं—आपके अस्तित्व के आसपास संग्रहित हो गई धूल। केवल बिना नाम और रूप का अस्तित्व ही बचा रहेगा। और यह सूत्र कहता है, 'यह तैयारी के लिए किया गया स्नान है।' केवल अब ही आप प्रवेश कर सकते हैं, और केवल यहीं तक आपको प्रयास करने की आवश्यकता है। जिस क्षण भी आप शुद्ध होते हैं, जिस क्षण भी आप इस स्नान से गुजरते हैं, जिस क्षण भी कर्म विसर्जित हो जाते हैं, अब आपको कोई प्रयास करने की आवश्यकता नहीं रहती।

इस बिंदु से, परमात्मा एक गुरुत्वाकर्षण बन जाता है। अब आप उसकी अनुकंपा के क्षेत्र में प्रवेश कर जाते हैं।

110

शिवनेत्र

यह एक घंटे का ध्यान है और इसमें दस-दस मिनट के छह चरण हैं। साधकों के सामने जरा हट कर, थोड़ी ऊंचाई पर, एक नीले रंग का प्रकाश—यानी बिजली का बल्ब जलता है, जो प्रकाश को घटाने-बढ़ाने वाले एक यंत्र के द्वारा, दस मिनट में तीन बार, बारी-बारी धीमा और तेज किया जाता है। उसके सहारे ही यह ध्यान संचालित होता है।

पहला चरण :

बिलकुल स्थिर बैठें। हलके-हलके, बिना आंखों में कोई तनाव लाए सामने जल रहे प्रकाश को देखें।

दूसरा चरण :

आंखें बंद कर लें और कमर से ऊपर के भाग को हौले-हौले दाएं से बाएं और बाएं से दाएं हिलाएं। और साथ ही साथ यह भी अनुभव करते रहें कि आपकी आंखों ने पहले चरण के समय जो प्रकाश पीया है, वह अब 'शिवनेत्र'—यानी 'तीसरी आंख' में प्रवेश कर रहा है।

यह सचमुच घटित होता है।

दोनों चरणों को बारी-बारी तीन बार दोहराएं।

प्रकाश को घटाने-बढ़ाने वाले यंत्र (डिमिंग स्विच) के साथ तीन सौ वॉट का नीले रंग का प्रकाश इसके लिए आदर्श है, लेकिन साधारण नीले प्रकाश या मोमबत्ती से भी काम चलाया जा सकता है।

111

त्राटक—एकटक देखने की विधि

यदि आप लंबे समय तक, कुछ महीनों के लिए, प्रतिदिन एक घंटा ज्योति की लौ को अपलक देखते रहें तो आपकी तीसरी आंख पूरी तरह सक्रिय हो जाती है। आप अधिक प्रकाशपूर्ण, अधिक सजग अनुभव करते हैं।

त्राटक शब्द जिस मूल से आता है उसका अर्थ है : आंसू। तो आपको ज्योति की लौ को तब तक अपलक देखते रहना है जब तक आंखों से आंसू न बहने लगें। एकटक देखते रहें, बिना पलक झपकाए, और आपकी तीसरी आंख सक्रिय होने लगेगी।

एकटक देखने की विधि असल में किसी विषय से संबंधित नहीं है, इसका संबंध देखने मात्र से है। क्योंकि जब आप बिना पलक झपकाए एकटक देखते हैं, तो आप एकाग्र हो जाते हैं। और मन का स्वभाव है भटकना। यदि आप बिलकुल एकटक देख रहे हैं, जरा भी हिले-डुले बिना, तो मन अवश्य ही मुश्किल में पड़ जाएगा। मन का स्वभाव है एक विषय से दूसरे विषय पर भटकने का, निरंतर भटकते रहने का। यदि आप अंधेरे को, प्रकाश को या किसी भी चीज को एकटक देख रहे हैं, यदि आप बिलकुल एकाग्र हैं, तो मन का भटकाव रुक जाता है। क्योंकि यदि मन भटकेगा तो आपकी दृष्टि एकाग्र नहीं रह पाएगी और आप विषय को चूकते रहेंगे। जब मन कहीं और चला जाएगा तो आप भूल जाएंगे, आप

स्मरण नहीं रख पाएंगे कि आप क्या देख रहे थे। भौतिक रूप से विषय वहीं होगा, लेकिन आपके लिए वह विलीन हो चुका होगा, क्योंकि आप वहां नहीं हैं—आप विचारों में भटक गए हैं।

एकटक देखने का, त्राटक का अर्थ है—अपनी चेतना को भटकने न देना। और जब आप मन को भटकने नहीं देते तो शुरू में वह संघर्ष करता है, कड़ा संघर्ष करता है, लेकिन यदि आप एकटक देखने का अभ्यास करते ही रहे तो धीरे-धीरे मन संघर्ष करना छोड़ देता है। कुछ क्षणों के लिए वह ठहर जाता है। और जब मन ठहर जाता है तो वहां अ-मन है, क्योंकि मन का अस्तित्व केवल गति में ही बना रह सकता है, विचार-प्रक्रिया केवल गति में ही बनी रह सकती है। जब कोई गति नहीं होती, तो विचार-प्रक्रिया खो जाती है, आप सोच-विचार नहीं कर सकते। क्योंकि विचार का मतलब है गति—एक विचार से दूसरे विचार की ओर गति। यह एक प्रक्रिया है।

यदि आप निरंतर एक ही चीज को एकटक देखते रहें, पूर्ण सजगता और होश से...क्योंकि आप मृतवत आंखों से भी एकटक देख सकते हैं, तब आप विचार करते रह सकते हैं—केवल आंखें, मृत आंखें, देखती हुई नहीं। मुर्दे जैसी आंखों से भी आप देख सकते हैं, लेकिन तब आपका मन चलता रहेगा। इस तरह से देखने से कुछ भी नहीं होगा। त्राटक का अर्थ है—केवल आपकी आंखें ही नहीं बल्कि आपका पूरा अस्तित्व आंखों के द्वारा एकाग्र हो।

तो कुछ भी विषय हो—यह आपकी पसंद पर निर्भर करता है। यदि आपको प्रकाश अच्छा लगता है, ठीक है; यदि आपको अंधेरा अच्छा लगता है, ठीक है। विषय कुछ भी हो, गहरे में यह बात गौण है, असली बात है मन को एक जगह रोकने का, उसे एकाग्र करने का, जिससे कि भीतरी गतियां, भीतरी कुलबुलाहट रुक सके, भीतरी कंपन रुक सके। आप बस देख रहे हैं—निष्कंप। इतनी गहराई से देखना आपको पूरी तरह से बदल जाएगा। वह एक ध्यान बन जाएगा।

112

त्राटक ध्यान—1

यह ध्यान चालीस मिनट का है और इसमें बीस-बीस मिनट के दो चरण हैं।

पहला चरण :

पांच या छह फुट की ऊंचाई पर ओशो का एक बड़ा सा फोटो दीवार पर इस प्रकार टांगें कि फोटो पर पर्याप्त प्रकाश पड़े। शरीर पर कम से कम और ढीले वस्त्र पहनें। फोटो से चार-पांच फुट की दूरी पर खड़े हो जाएं। दोनों हाथ ऊपर उठाएं, एकटक ओशो के फोटो को देखें—और 'हू-हू-हू' की तीव्र आवाज

लगातार करते हुए उछलना शुरू करें। ओशो की उपस्थिति अनुभव करें और 'हू-हू' की आवाज तेज करें। न आंखें बंद करें, न पलकें झपकाएं। आंसू आते हों तो आने दें। आंखें फोटो पर एकाग्र रखें और शरीर में जो भी कंपन और क्रियाएं होती हों, उन्हें सहयोग करके तीव्र करें।

महामंत्र 'हू' की चोट से भीतर की काम-ऊर्जा ऊपर की ओर उठेगी तथा ओशो के फोटो से दिव्य-ऊर्जा का शक्तिपात आप पर होता रहेगा।

दूसरा चरण :

अब सारी क्रियाएं—'हू-हू' की आवाज, उछलना और ओशो के चित्र को एकटक देखना—सब बंद कर दें। शरीर को बिलकुल स्थिर कर लें, आंखें मूंद लें और भीतर की ऊर्जा को अनुभव करें। गहरे ध्यान में डूब जाएं। बीस मिनट के बाद गहरे ध्यान से वापस लौट आएं।

इस प्रकार यह त्राटक ध्यान पूरा होगा।

113

त्राटक ध्यान—2

ओशो ने अचेतन का सामना करने के लिए एक बहुत ही सरल प्रयोग करने का सुझाव दिया है। यह प्रयोग एक घंटे का है। पहला चरण चालीस मिनट का और दूसरा चरण बीस मिनट का है।

पहला चरण :

अपने कमरे के दरवाजे बंद कर लें, और एक बड़ा दर्पण अपने सामने रख लें। कमरे में अंधेरा होना चाहिए। और फिर दर्पण के बगल में एक छोटी सी लौ—दीपक, मोमबत्ती या लैंप की—इस प्रकार रखें कि वह सीधे दर्पण में प्रतिबिंबित न हो। सिर्फ आपका चेहरा ही दर्पण में प्रतिबिंबित हो, न कि दीपक की लौ। फिर लगातार दर्पण में अपनी स्वयं की आंखों में देखें। पलक न झपकाएं। यह चालीस मिनट का प्रयोग है, और दो या तीन दिन में ही आप अपनी आंखों को बिना पलक झपकाए देखने में समर्थ हो जाएंगे।

यदि आंसू आएं तो उन्हें आने दें, लेकिन दृढ़ रहें कि पलक न झपके और लगातार अपनी आंखों

में देखते रहें। दृष्टि का कोण न बदलें। आंखों में देखते रहें, अपनी ही आंखों में। और दो या तीन दिन में ही आप एक बहुत ही विचित्र घटना से अवगत होंगे। आपका चेहरा नये रूप लेने लगेगा। आप घबरा भी सकते हैं। दर्पण में आपका चेहरा बदलने लगेगा। कभी-कभी बिलकुल ही भिन्न चेहरा वहां होगा, जिसे आपने कभी नहीं जाना है कि वह आपका है।

पर असल में ये सभी चेहरे आपके हैं। अब अचेतन मन का विस्फोट होना प्रारंभ हो रहा है। ये चेहरे, ये मुखौटे आपके हैं। कभी-कभी कोई ऐसा चेहरा भी आ सकता है जो कि पिछले जन्म से संबंधित हो। एक सप्ताह लगातार चालीस मिनट तक देखते रहने के बाद आपका चेहरा एक प्रवाह, एक फिल्म की भांति हो जाएगा। बहुत से चेहरे जल्दी-जल्दी आते-जाते रहेंगे। तीन सप्ताह के बाद, आपको स्मरण भी नहीं रह पाएगा कि आपका चेहरा कौन सा है। आप अपना ही चेहरा स्मरण नहीं रख पाएंगे, क्योंकि आपने इतने चेहरों को आते-जाते देखा है।

यदि आपने इसे जारी रखा, तो तीन सप्ताह के बाद, किसी भी दिन, सबसे विचित्र घटना घटेगी: अचानक दर्पण में कोई भी चेहरा नहीं है। दर्पण खाली है, आप शून्य में झांक रहे हैं। वहां कोई भी चेहरा नहीं है। यही क्षण है: अपनी आंखें बंद कर लें, और अचेतन का सामना करें। जब दर्पण में कोई चेहरा न हो, बस आंखें बंद कर लें—यही सबसे महत्वपूर्ण क्षण है—आंखें बंद कर लें, भीतर देखें, और आप अचेतन का साक्षात करेंगे। आप नग्न होंगे—बिलकुल नग्न, जैसे आप हैं। सारे धोखे तिरोहित हो जाएंगे।

यही सच्चाई है, पर समाज ने बहुत सी पर्तें निर्मित कर दी हैं ताकि आप उससे अवगत न हो पाएं। एक बार आप अपने को अपनी नग्नता में, अपनी संपूर्ण नग्नता में जान लेते हैं, तो आप दूसरे ही व्यक्ति होने शुरू हो जाते हैं। तब आप अपने को धोखा नहीं दे सकते। तब आप जानते हैं कि आप क्या हैं। और जब तक आप यह नहीं जानते कि आप क्या हैं, आप कभी रूपांतरित नहीं हो सकते, क्योंकि कोई भी रूपांतरण केवल इसी नग्न वास्तविकता में ही संभव है; यह नग्न वास्तविकता किसी भी रूपांतरण के लिए बीज-रूप है। कोई प्रवंचना रूपांतरित नहीं हो सकती। आपका मूल चेहरा अब आपके सामने है और आप इसे रूपांतरित कर सकते हैं।

और असल में, ऐसे क्षण में रूपांतरण की इच्छा मात्र से रूपांतरण घटित हो जाएगा।

दूसरा चरण :

अब आंखें बंद कर लें और विश्राम में चले जाएं।

114

त्राटक ध्यान—3

यह प्रयोग बहुत शक्तिशाली है और बेजोड़ असरदार भी। खासकर, जब इसे ऐसे विषय पर किया जाए जो मन को बेहद पसंद हो।

त्राटक की यह विधि वैसे तो मन की किसी भी प्रिय वस्तु पर की जा सकती है, लेकिन ज्यादा अच्छा है ओशो के चित्र पर त्राटक करना। इसके लिए आप ओशो का ऐसा चित्र उपयोग में लाएं, जिसमें उनकी आंखें, आप कहीं से भी देखें, आपकी ओर देखती हों।

त्राटक करते समय चित्र को अपने सिर से थोड़ा ऊपर रखें। सूरज डूबने के पूर्व या सोने के पहले इसे किया जा सकता है। यह एक घंटे का ध्यान है और इसमें दो चरण हैं। पहला चरण चालीस मिनट का है और दूसरा चरण बीस मिनट का है।

पहला चरण :

सबसे पहली बात, इस प्रयोग में चालीस मिनट तक लगातार अपलक देखते रहना है। सारी चेतना आंखों में इकट्ठी हो जाए—आप बिलकुल आंख ही हो जाएं। हर चीज को, पूरे शरीर को बिलकुल ही भूल जाएं और सिर्फ आंख हो जाएं। बिना पलक झपकाए सिर्फ देखते रहें। आंखों में इस तरह केंद्रित होकर चेतना आपको तनाव की चरम सीमा तक ले जाएगी। आंख शरीर में सबसे ज्यादा कोमल और सुकुमार हिस्सा है। यही कारण है शरीर के किसी दूसरे अंग की बजाय आंखें बहुत जल्दी तनावपूर्ण हो जाती हैं। और आंखों के तनावपूर्ण होने से पूरा मन तनावपूर्ण हो जाता है। आंखें मन का द्वार हैं।

जब आप मात्र आंख ही रह जाते हैं तो मन का तनाव बढ़ते-बढ़ते अपनी आखिरी सीमा तक पहुंच जाता है। और तनाव के उस चरम शिखर से गिरने पर विश्राम की परम घाटी को आप उपलब्ध होते हैं। विचारों का चलना स्वतः रुक जाता है। और धीरे-धीरे, जैसे-जैसे आप इसमें आगे बढ़ते हैं, चेतना आंखों में और भी ज्यादा केंद्रित होती जाती है।

तो आप, बस होश से भरे रहेंगे; भीतर कोई चिंतन नहीं चल सकेगा। क्योंकि आंखें विचार नहीं कर सकती हैं। आंखों के द्वारा कोई भी चिंतन संभव नहीं है। जब संपूर्ण चेतना आंखों में केंद्रित हो जाती है, तो मन को सोचने के लिए कोई ऊर्जा नहीं मिल पाती। और फलस्वरूप मन में विचारों का ऊहापोह तत्क्षण रुक जाता है।

तो जब आंखें झपकने-झपकने को हों, तो वही क्षण सचेत होने आंखों को बिलकुल न झपकने देने का क्षण है; क्योंकि सोचने के लिए ऊर्जा प्राप्त करने की यह मन ही कोशिश कर रहा है।

यही कारण है कि प्रयोग के समय निरंतर स्थिर दृष्टि से अपलक देखते रहने की जरूरत है। आंखों

के थोड़ा सा हिलने से भी मन के सक्रिय होने के लिए ऊर्जा मिल जाती है। इसलिए, आंखों को हिलाएं नहीं, सिर्फ स्थिर दृष्टि से अपलक देखते रहें। जब आप आंखों को बिना हिलाए अपलक देखते हैं तो मन भी स्थिर हो जाता है।

मन आंखों के साथ ही गति करता है। आंखें मन का बाह्य अंग हैं, उसी का दूसरा छोर हैं। आंखें द्वार हैं, ऐसा द्वार जो अंदर की ओर मन में खुलता है और बाहर की ओर संसार में। आंखें अगर पूर्णतया स्थिर हो जाएं तो मन वस्तुतः रुक जाता है—चाहने पर भी चल नहीं सकता। अगर मन रुक जाए तो आपकी आंखों का हलन-चलन भी रुक जाता है।

तो इस प्रयोग में आंखों से शुरू करना है, क्योंकि मन से शुरू करना अति कठिन है। आंख बाह्य चीज है और आप इसके साथ कुछ कर सकते हैं। तो सामने रखे चित्र की दोनों आंखों में अपलक देखते रहें। चित्र की दोनों आंखों से आपकी दोनों आंखें बिलकुल बंध जाएं। कोई गति न हो—और शरीर भी बिलकुल स्थिर हो। आंसू बहने लगें तो बहने दें।

सिर्फ दोनों आंखों में अपलक देखते रहने से ही भीतर कुछ घटित होना शुरू हो जाता है।

दूसरा चरण :

आंखें बंद कर लें और पूर्ण विश्राम में चले जाएं—लेट जाएं।

इस प्रयोग का राज यह है कि स्थिर दृष्टि मन को भी स्थिर करती है। और मन की बजाय आंखों को स्थिर करना ज्यादा सुगम है।

संकेत : ओशो ने अन्यत्र एक जगह इस संदर्भ में कहा है—

'यह प्रयोग करते-करते, ध्यान में थोड़ी गहराई बढ़ने के बाद, चित्र पर एकाग्र दृष्टि जमाने पर एक समय ऐसा आएगा कि चित्र अदृश्य हो जाएगा; वहां बिलकुल शून्य प्रतीत होगा। तब, जैसे ही चित्र शून्य हो जाए, आंखें बंद कर लें। ऐसे क्षण में मुझसे संपर्क स्थापित हो सकता है। उसमें समय और दूरी कोई व्यवधान नहीं डाल सकते।'

आगे उन्होंने कहा है—

'मैं जब तक इस शरीर में हूं, यह संपर्क बना लेना बिलकुल ही आसान है। मेरे शरीर के छूटने के बाद, फिर बहुत कठिनाई होगी। और अगर अभी संपर्क सध जाए, तो मेरे शरीर के छूटने के बाद भी संपर्क मुझसे बना रहेगा।'

115

रात्रि-ध्यान

रात्रि आज सोने के पूर्व दस मिनट बिस्तर पर लेट जाएं, कमरे में अंधेरा कर लें। आंख बंद कर लें, और जोर से श्वास मुंह से बाहर निकालें। निकालने से शुरू करें, एक्सेहलेशन से। लेने से नहीं, निकालने से। जोर से मुंह से श्वास बाहर निकालें। और निकालते समय ओऽऽऽ...की ध्वनि करें। जैसे-जैसे ध्वनि साफ होने लगेगी, ओम् अपने आप ही निर्मित हो जाएगा। आप सिर्फ ओऽऽऽ...का उच्चारण करें। ओम् का आखिरी हिस्सा अपने आप, जैसे ध्वनि व्यवस्थित होगी, आने लगेगा। आपको ओम् नहीं कहना है, आपको सिर्फ ओ कहना है, म् को आने देना है। पूरी श्वास को बाहर फेंक दें। फिर ओंठ बंद कर लें और शरीर को श्वास लेने दें, आप मत लें। निकालना आपको है, लेना शरीर को है।

आमतौर से लेते हम हैं, निकालता शरीर है। और उसका कारण है। जाती हुई श्वास जीवन से जुड़ी है—भीतर जाती हुई श्वास। बाहर जाती हुई श्वास मृत्यु से जुड़ी है। बच्चा जब जन्मता है तो पहला काम करेगा, श्वास भीतर लेगा। बाहर निकालने को तो उसके पास कोई श्वास होती भी नहीं। भीतर लेगा। श्वास का भीतर जाना, जीवन का पहला स्पंदन है। मरता हुआ आदमी जो आखिरी काम करेगा, श्वास को बाहर निकालेगा। क्योंकि भीतर श्वास रह जाए तो मृत्यु हो ही नहीं सकती।

मृत्यु है श्वास का बाहर जाना। जीवन है श्वास का भीतर आना।

क्योंकि सोना भी मृत्यु का हिस्सा है। नींद छोटी मौत है। और अगर आप छोड़ती हुई श्वास के साथ सो जाएं, तो आपकी पूरी नींद गहरी मृत्यु बन जाएगी।

दस मिनट ओ की आवाज के साथ श्वास को छोड़ें मुंह से। फिर नाक से श्वास लें। फिर मुंह से छोड़ें। फिर नाक से लें। और ऐसे ओऽऽऽ...की आवाज करते-करते-करते-करते सो जाएं।

परिशिष्ट

	ध्यान विधि	संदर्भ पुस्तक
1	सूर्योदय की प्रतीक्षा	'आरेंज बुक'
2	उगते सूरज की प्रशंसा में	'आरेंज बुक'
3	सक्रिय ध्यान *	'ध्यानयोग : प्रथम और अंतिम मुक्ति'
4	मंडल *	'ध्यानयोग : प्रथम और अंतिम मुक्ति'
5	तकिया पीटना	'आरेंज बुक'
6	कुत्ते की तरह हांफना	'आरेंज बुक'
7	नटराज *	'ध्यानयोग : प्रथम और अंतिम मुक्ति'
8	इस क्षण में जीना	'आरेंज बुक'
9	स्टॉप!	'आरेंज बुक'
10	कार्य—ध्यान की तरह	'आरेंज बुक'
11	सृजन में डूब जाएं	'आरेंज बुक'
12	गैर-यांत्रिक होना ही रहस्य है	'आरेंज बुक'
13	साधारण चाय का आनंद	'आरेंज बुक'
14	शांत प्रतीक्षा	'आरेंज बुक'
15	कभी, अचानक ऐसे हो जाएं जैसे नहीं हैं	'आरेंज बुक'
16	'मैं यह नहीं हूं'	'आरेंज बुक'
17	अपने विचार लिखना	'आरेंज बुक'
18	विनोदी चेहरे	'आरेंज बुक'
19	पृथ्वी से संपर्क	'आरेंज बुक'
20	श्वास को शिथिल करो	'आरेंज बुक'
21	'इस व्यक्ति को शांति मिले'	'आरेंज बुक'
22	तनाव विधि	'आरेंज बुक'
23	विपरीत पर विचार	'आरेंज बुक'
24	'अद्वैत'	'आरेंज बुक'
25	'हां' का अनुसरण	'आरेंज बुक'
26	वृक्ष से मैत्री	'आरेंज बुक'
27	'क्या तुम यहां हो?'	'आरेंज बुक'
28	निष्क्रिय ध्यान	'साधना पथ' पहला और दूसरा प्रवचन
29	आंधी के बाद की निस्तब्धता	'साधना-सूत्र' आठवां प्रवचन
30	निश्चल ध्यानयोग	'गीता-दर्शन, भाग 5' चौथा प्रवचन
31	स्वप्न में सचेतन प्रवेश	'तंत्र-सूत्र, भाग 1' छठवां प्रवचन

32	यौन-मुद्रा : काम-ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन की विधि	'ज्यों की त्यों धरि दीन्हीं चदरिया' ग्यारहवां प्रवचन
33	मूलबंध : ब्रह्मचर्य-उपलब्धि की सरलतम विधि	'कहै कबीर दीवाना' पांचवां और छठवां प्रवचन
34	कल्पना-भोग	'जिन-सूत्र, भाग-1' आठवां प्रवचन
35	मैत्री : प्रभु-मंदिर का द्वार	'साधना पथ' सत्ताइसवां प्रवचन
36	शांति-सूत्र : नियति की स्वीकृति	'गीता-दर्शन, भाग 5' आठवां प्रवचन
37	मौन और एकांत में इक्कीस दिवसीय प्रयोग	'मेडिटेशन : दि ऑर्ट ऑफ एक्सटेसी' अट्ठारहवां अध्याय
38	प्राण-साधना	'ताओ उपनिषद, भाग-2' चौबीसवां प्रवचन
39	मंत्र-साधना	'शिव-सूत्र' दसवां प्रवचन
40	अंतर्वाणी साधना	'गीता-दर्शन, भाग 2' बारहवां प्रवचन
41	संयम साधना—1	'गीता-दर्शन, भाग 2' नौवां प्रवचन
42	संयम साधना—2	'गीता-दर्शन, भाग 2' नौवां प्रवचन
43	संतुलन ध्यान—1	'ताओ उपनिषद, भाग-दो' इकतीसवां प्रवचन
44	संतुलन ध्यान—2	'हसिबा खेलिबा धरिबा ध्यानम्' दूसरा प्रवचन
45	श्रेष्ठतम क्षण का ध्यान	'साधना-सूत्र' बारहवां प्रवचन
46	'मैं—तू' ध्यान	'सर्वसार उपनिषद' ग्यारहवां प्रवचन
47	इंद्रियों को थका डालें	'कठोपनिषद' नौवां प्रवचन
48	श्वास : सबसे गहरा मंत्र	'आरेंज बुक'
49	भीतरी आकाश का अंतरिक्ष-यात्री	'आरेंज बुक'
50	आकाश सा विराट एवं अणु सा छोटा	'आरेंज बुक'
51	एक का अनुभव	'आरेंज बुक'
52	आंतरिक मुस्कान	'आरेंज बुक'
53	ओशो	'आरेंज बुक'
54	देखना ही ध्यान है	'आरेंज बुक'
55	शब्दों के बिना देखना	'आरेंज बुक'
56	मौन का रंग	'आरेंज बुक'
57	सिरदर्द को देखना	'आरेंज बुक'
58	ऊर्जा का स्तंभ	'आरेंज बुक'
59	गर्भ की शांति	'आरेंज बुक'
60	कुंडलिनी *	'ध्यानयोग : प्रथम और अंतिम मुक्ति'
61	झूमना	'आरेंज बुक'
62	सामूहिक नृत्य	'आरेंज बुक'
63	वृक्ष के समान नृत्य	'आरेंज बुक'
64	हाथों से नृत्य	'आरेंज बुक'
65	सूक्ष्म पर्तों को जगाना	'आरेंज बुक'
66	गीत गाओ	'आरेंज बुक'

67 गुंजन 'आरेंज बुक'
68 नादब्रह्म * 'ध्यानयोग : प्रथम और अंतिम मुक्ति'
69 स्त्री-पुरुष जोड़ों के लिए नादब्रह्म 'ध्यानयोग : प्रथम और अंतिम मुक्ति'
70 कीर्तन 'आरेंज बुक'
71 सामूहिक प्रार्थना 'दर्शन-डायरी'
72 मुर्दे की भांति हो जाएं 'साधना-सूत्र' पांचवां प्रवचन
73 अग्निशिखा 'दर्शन-डायरी'
74 प्रकाश पर ध्यान 'आरेंज बुक'
75 बुद्धत्व का अवलोकन 'आरेंज बुक'
76 तारे का भीतर प्रवेश 'आरेंज बुक'
77 चंद्र ध्यान 'आरेंज बुक'
78 ब्रह्मांड के भाव में सोने जाएं 'आरेंज बुक'
79 सब काल्पनिक है 'आरेंज बुक'
80 ध्यान के भीतर ध्यान 'आरेंज बुक'
81 पशु हो जाएं 'आरेंज बुक'
82 नकारात्मक हो जाएं 'आरेंज बुक'
83 'हां, हां, हां' 'आरेंज बुक'
84 एक छोटा, तीव्र कंपन 'आरेंज बुक'
85 अपने कवच उतार दो 'आरेंज बुक'
86 जीवन और मृत्यु ध्यान 'आरेंज बुक'
87 बच्चे की दूध की बोतल 'आरेंज बुक'
88 भय में प्रवेश 'आरेंज बुक'
89 अपनी शून्यता में प्रवेश 'आरेंज बुक'
90 गर्भ में वापस लौटना 'आरेंज बुक'
91 आवाजें निकालना 'आरेंज बुक'
92 प्रार्थना 'आरेंज बुक'
93 लातिहान 'आरेंज बुक'
94 गौरीशंकर * 'ध्यानयोग : प्रथम और अंतिम मुक्ति'
95 देववाणी * 'ध्यानयोग : प्रथम और अंतिम मुक्ति'
96 प्रेम 'आरेंज बुक'
97 झूठे प्रेम खो जाएंगे 'आरेंज बुक'
98 प्रेम को फैलाएं 'आरेंज बुक'
99 प्रेमी-युगल एक-दूसरे में घुलें-मिलें 'आरेंज बुक'
100 प्रेम के प्रति समर्पण 'आरेंज बुक'
101 प्रेम-कृत्य को अपने आप होने दो 'आरेंज बुक'

102 कृत्यों में साक्षी-भाव	'आरेंज बुक'
103 बहना, मिटना, तथाता	'करुणा और क्रांति' छठवां प्रवचन
104 अंधकार, अकेले होने, और मिटने का बोध	'समाधि के द्वार पर' दूसरा प्रवचन
105 स्वेच्छा से मृत्यु में प्रवेश	'मैं मृत्यु सिखाता हूं' तीसरा एवं नौवां प्रवचन
106 सजग मृत्यु और शरीर से अलग होने की विधि	'मैं मृत्यु सिखाता हूं' पंद्रहवां प्रवचन
107 मृतवत हो जाना	'तंत्र-सूत्र, भाग 1' पांचवां प्रवचन
108 जाति-स्मरण के प्रयोग	'मैं मृत्यु सिखाता हूं' चौथा प्रवचन
109 अंतर्प्रकाश साधना	'दि अल्टीमेट अल्केमी, भाग 1' ग्यारहवां प्रवचन
110 शिवनेत्र	'दर्शन-डायरी'
111 त्राटक—एकटक देखने की विधि	'आरेंज बुक'
112 त्राटक ध्यान—1	माउंट आबू ध्यान-शिविरों में किए गए त्राटक ध्यान पर आधारित
113 त्राटक ध्यान—2	'दि अल्टीमेट अल्केमी, भाग 1' छठवां प्रवचन
114 त्राटक ध्यान—3	माउंट आबू ध्यान-शिविरों में किए गए त्राटक ध्यान पर आधारित
115 रात्रि-ध्यान	'कठोपनिषद' पहला प्रवचन

* इन ध्यान विधियों के लिए संगीत कैसेट साधना फाउंडेशन, 17 कोरेगांव पार्क, पुणे, महाराष्ट्र में उपलब्ध हैं।
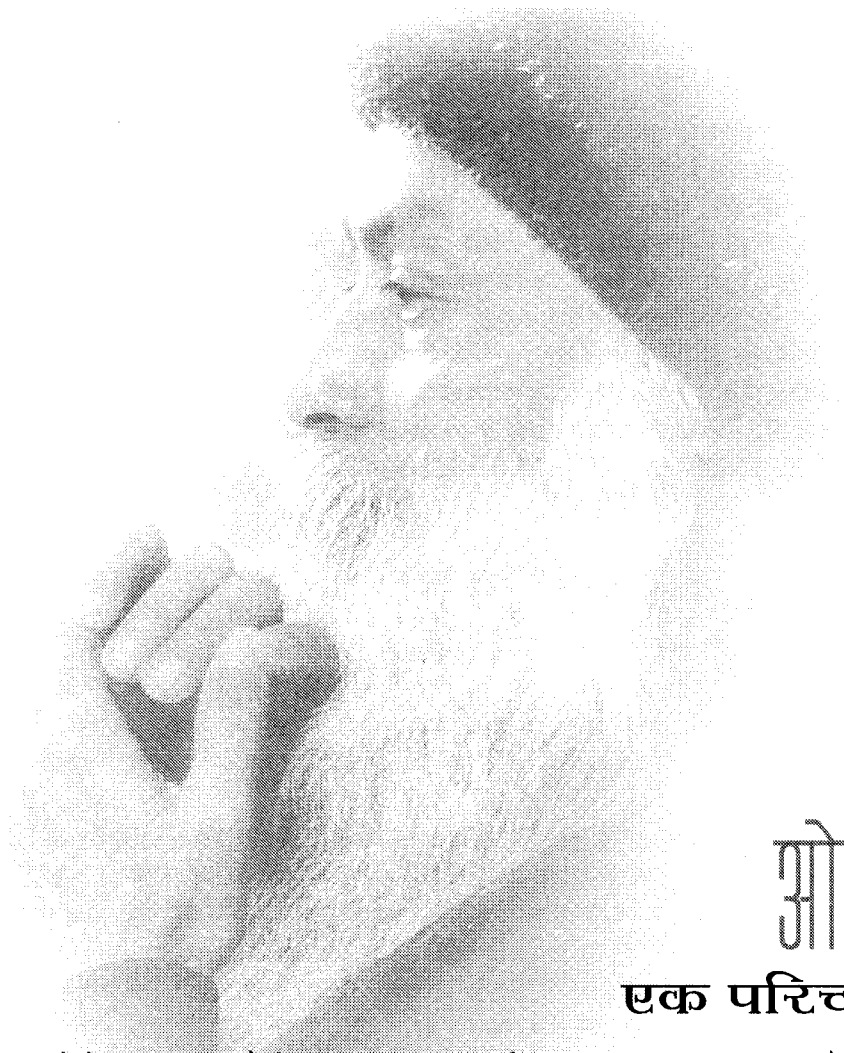
ओशो
एक परिचय

ओशो एक नया प्रारंभ हैं, वे अतीत की किसी भी धार्मिक परंपरा या शृंखला की कड़ी नहीं हैं। ओशो ने एक नये मनुष्य का, एक नये जगत का, एक नये युग का सूत्रपात किया है, जिसकी आधारशिला अतीत के किसी धर्म में नहीं है, किसी दार्शनिक विचार-पद्धति में नहीं है।

ओशो एक नवोन्मेष हैं नये मनुष्य के, नयी मनुष्यता के। यह नया मनुष्य 'ज़ोरबा दि बुद्धा' एक ऐसा मनुष्य है जो ज़ोरबा की भांति भौतिक जीवन का पूरा आनंद मनाना जानता है और जो गौतम बुद्ध की भांति मौन होकर ध्यान में उतरने में भी सक्षम है—ऐसा मनुष्य जो भौतिक और आध्यात्मिक, दोनों तरह से समृद्ध है। 'ज़ोरबा दि बुद्धा' एक समग्र व अविभाजित मनुष्य है। ओशो का यह नया मनुष्य भविष्य की एकमात्र आशा है; इसके बिना पृथ्वी का कोई भविष्य नहीं है।

अपने प्रवचनों के द्वारा ओशो ने मानव-चेतना के विकास के हर पहलू को उजागर किया। बुद्ध, महावीर, कृष्ण, शिव, शांडिल्य, नारद, जीसस के साथ ही साथ भारतीय अध्यात्म-आकाश के अनेक

नक्षत्रों—आदिशंकराचार्य, गोरख, कबीर, नानक, मलूकदास, रैदास, दरियादास, मीरा आदि पर उनके हजारों प्रवचन उपलब्ध हैं। जीवन का ऐसा कोई भी आयाम नहीं है जो उनके प्रवचनों से अस्पर्शित रहा हो। योग, तंत्र, ताओ, झेन, हसीद, सूफी जैसी विभिन्न साधना-परंपराओं के गूढ़ रहस्यों पर उन्होंने सविस्तार प्रकाश डाला है। साथ ही राजनीति, कला, विज्ञान, मनोविज्ञान, दर्शन, शिक्षा, परिवार, समाज, गरीबी, जनसंख्या-विस्फोट, पर्यावरण तथा संभावित परमाणु युद्ध के व उससे भी बढ़कर एड्स महामारी के विश्व-संकट जैसे अनेक विषयों पर भी उनकी क्रांतिकारी जीवन-दृष्टि उपलब्ध है।

शिष्यों और साधकों के बीच दिए गए उनके ये प्रवचन छह सौ पचास से भी अधिक पुस्तकों के रूप में प्रकाशित हो चुके हैं और तीस से अधिक भाषाओं में अनुवादित हो चुके हैं। वे कहते हैं, "मेरा संदेश कोई सिद्धांत, कोई चिंतन नहीं है। मेरा संदेश तो रूपांतरण की एक कीमिया, एक विज्ञान है।"

एक निमंत्रण

ओशो के प्रवचनों को पढ़ना, उन्हें सुनना अपने आप में एक आनंद है। इनके द्वारा आप अपने जीवन में एक अपूर्व क्रांति की पदचाप सुन सकते हैं। लेकिन यह केवल प्रारंभ है, शुभ आरंभ है। इन प्रवचनों को पढ़ते हुए आपने महसूस किया होगा कि ओशो का मूल संदेश है: ध्यान। ध्यान की भूमि पर ही प्रेम के, आनंद के, उत्सव के फूल खिलते हैं।

ध्यान आमूल क्रांति है।

निश्चित ही आप भी चाहेंगे कि आपके जीवन में ऐसी आमूल क्रांति हो; आप भी एक ऐसी आबोहवा को उपलब्ध करें जहां आप अपने आप से परिचित हो सकें, आत्म-अनुभूति की दिशा में कुछ कदम उठा सकें; कोई ऐसा स्थान जहां और भी कुछ लोग इस दिशा में गतिमान हों।

ओशो ने एक ऐसी ही ध्यानमय, उत्सवमय आबोहवा वाला ऊर्जा-क्षेत्र निर्मित किया है पूना में: ओशो कम्यून इंटरनेशनल। यहां हजारों लोगों ने ओशो ध्यान विधियों का प्रयोग कर ध्यान की गहराइयों को छुआ है। यह स्थान एक ऐसा सघन ऊर्जा-क्षेत्र बन गया है कि व्यक्ति ध्यान के द्वारा यहां त्वरित रूपांतरित हो सकता है।

विश्व के लगभग सौ देशों से लोग यहां आकर इस अंतर्राष्ट्रीय वातावरण में ध्यान का रसास्वादन करते हैं। दुनिया में जितने भी प्रकार के लोग हैं, ओशो ने उन सब के लिए विशेष प्रकार की वैज्ञानिक ध्यान-विधियों को ईजाद किया है। ये विधियां आधुनिक जीवन के तनावों को दूर कर एक निश्चित, आनंदपूर्ण जीवन जीने की कला सिखाती हैं। आज विश्व की समस्त साधना-पद्धतियों की विधियां यहां एक ही छत के नीचे मौजूद हैं। ओशो कम्यून इंटरनेशनल विश्व भर में एकमात्र ऐसा केंद्र है जहां पर सभी राष्ट्रों और धर्मों के लोग अपने अनुकूल ध्यान प्रयोगों के द्वारा एक साथ रूपांतरित हो सकते हैं।

इसमें आपका भी स्वागत है।

अतिरिक्त जानकारी के लिए संपर्क-सूत्र:
ओशो कम्यून इंटरनेशनल
17, कोरेगांव पार्क, पुणे-411001, महाराष्ट्र
फोन: 020-4019999 फैक्स: 020-4019990
e-mail - resortinfo@osho.net
Web Site - www.osho.com